वातायन
वीरेन्द्र गुप्तः

भेंट-कर्ता

श्री अजीत कुमार गुप्ता एवं गृहस्वामिनी श्रीमती मन्जू गुप्ता

श्री सन्त यादव

वातायन

बोध क्रम ५०   ।। ओ३म् खं ब्रह्म ।।   प्रकाश क्रम २२

वातायन

लेखक

वीरेन्द्र गुप्तः

वेद संस्थान

मण्डी चौक, मुरादाबाद

सृष्ट्याब्द १,९७,३८,१३,१०९

मानव सृष्टि एवं वेद काल १,९६,०८,५३,१०९

दयानन्दाब्द १८५

विक्रम सम्वत् २०६५

स्वाधीन राष्ट्र सम्वत् ६१

सन् २००८ ई०

वेद संस्थान

की साहित्य सेवा

वेद संस्थान की स्थापना चैत्र शुक्ल प्रतिपदा सम्वत् २०४८ रविवार १७ मार्च १९९१ को हुई।

वेद संस्थान का लक्ष्य है—सद्साहित्य, साधन के अनुसार निःशुल्क, अल्पमूल्य अथवा लागत मूल्य पर आपके पास तक पहुँचता रहे। हमने अब तक १—विनयामृत सिन्धु, २— अभिनन्दनीय व्यक्तित्व, ३— विवेकशील बच्चे, ४— जन्म दिवस, ५— योग परिणति, ६— करवा चौथ, ७— दैनिक पंच महायज्ञ, ८— गोधन, ९— पर्वमाला, १०— दाम्पत्य दिवस, ११— छलकपट और वास्तविकता, १२— ईश महिमा, १३— मन की अपार शक्ति १४— रत्न माला १५— नयन भास्कर १६— युधिष्ठिर यज्ञ गीता, १७— यज्ञों का महत्व १८— वेद उद्गीत, १९— दर्पण २०— राष्ट्रीय गौरव २१— संस्कार नामक पुस्तकें प्रकाशित की हैं। इसी श्रंखला में श्री वीरेन्द्र गुप्तः द्वारा रचित कृति २२ वीं पुस्तक वातायन प्रस्तुत है। यह प्रस्तुति वेद संस्थान की और सहयोग, दानी महानुभावों का है। इस सहयोग और उदार भाव के लिये वेद संस्थान उनका आभारी है।

हमें आशा है कि आप वेद संस्थान को पूर्ण सहयोग देकर नूतन साहित्य प्रकाशित करने का अवसर अवश्य प्रदान करते रहेंगे।

विजय कुमार
प्रकाशन सचिव

अम्बरीष कुमार
सचिव

वेद संस्थान
मण्डी चौक, मुरादाबाद

लेखक परिचय

नाम — वीरेन्द्र गुप्त:
जन्म — श्रावण शुक्ल ६, संवत् १९८४,
बुद्धवार ३ अगस्त, १९२७ ई०, मुरादाबाद
गृहस्वामिनी — श्रीमती राजेश्वरी देवी
सम्प्रति — व्यवसाय

सम्मान :

१— १४ सितम्बर १९८२ राष्ट्रभाषा हिन्दी प्रसार समिति।

२— ३ अक्टूबर १९८२ आर्यसमाज मण्डी बाँस, मुरादाबाद।

३— १४ सितम्बर १९८८ श्री यशपाल सिंह स्मृति साहित्य शोधपीठ, मुरादाबाद।

४— ३० सितम्बर १९८८ अहिवरण सम्मान पुरालेखन केन्द्र, मुरादाबाद।

५— २ जनवरी १९९२ साहू शिवशक्ति शरण कोठीवाल स्मारक समिति, मुरादाबाद द्वारा साहित्य सम्मान।

६— ७ जनवरी १९९६ अभिनन्दन समिति द्वारा नागरिक अभिनन्दन एवं अभिनन्दन ग्रन्थ तथा सामूहिक अभिनन्दन पत्र।

७— ६ मार्च १९९९ अखिल भारतीय माथुर वैश्य महासभा द्वारा राष्ट्रीय अधिवेशन ग्वालियर में (साहित्य) समाज शिरोमणी सम्मान।

८— ९ मई १९९९ विराट आर्य सम्मेलन पश्चिमी उत्तर प्रदेश मेरठ (आर्य शिरोमणी) सम्मान।

९— २६ जनवरी २००० माथुर वैश्य मण्डल, मुरादाबाद द्वारा (साहित्यकं शताब्दी पुरुष) सम्मान।

१०— २५ फरवरी २००० (अमृत महोत्सव) के अवसर पर संस्कार भारती, मुरादाबाद द्वारा अभिनन्दन।

११— १५ सितम्बर २००० (राष्ट्रीय हिन्दी सेवा सहस्राब्दी सम्मान) सहस्राब्दी विश्व हिन्दी सम्मेलन नई देहली के द्वारा। सँयुक्त राष्ट्र संघ (यूनेस्को) आदि से सम्बद्ध।

१२— १७ सितम्बर २००० ''ज्ञान मन्दिर पुस्तकालय, रामपुर'' हिन्दी दिवस पर सम्मान।

१३— १४ सितम्बर २००३ हिन्दी साहित्य सदन द्वारा 'हिन्दी साहित्य सम्मान'।

१४— २६ जनवरी २००७ माथुर वैश्य मण्डल मुरादाबाद द्वारा 'युग पुरुष' सम्मान।

उल्लेख :

१— हिन्दी साहित्य का इतिहास ले० डा० आलोक रस्तौगी एवं श्री शरण, देहली १९८८।
२— "आर्य समाज के प्रखरव्यक्तित्व" दिव्य पब्लिकेशन केसरगंज अजमेर १९८९।
३— "आर्य लेखक कोष" दयानन्द अध्ययन संस्थान जयपुर १९९१।
४— एशिया—पैसिफिक "हू इज़ हू" (खण्ड ३) देहली २०००।
५— गंगा ज्ञान सागर भाग ४ पृष्ठ २३ सन् २००२।

प्रकाशित कृतियाँ :

१— इच्छानुसार सन्तान, २— लौकिट (उपन्यास), ३— पुत्र प्राप्ति का साधन, ४— पाणिग्रहण संस्कार विधि, ५— How to be get a son,(अनुवादित) ६— सीमित परिवार, ७— बोध रात्रि, ८— धार्मिक चर्चा, ९— कर्म चर्चा, १०— सस्ती पूजा, ११— वेद में क्या है? १२— गर्भावस्था की उपासना, १३— वेद की चार शक्तियाँ, १४— कामनाओं की पूर्ति कैसे, १५— नींव के पत्थर, १६— यज्ञों का महत्व, १७— ज्ञान दीप, १८— The light of learning (अनुवादित) १९— दैनिक पञ्च महायज्ञ, २०— दिव्य दर्शन, २१— दस नियम, २२— पतन क्यों होता है, २३— विवेक कब जागता है, २४— ज्ञान कर्म उपासना, २५— वेद दर्शन, २६— वेदांग परिचय, २७— संस्कार, २८— निरकार साकार के स्वरूप का दिग्दर्शन, २९— मनुर्भव, ३०— अदीनाग्याम, ३१— गायत्री साधन, ३२— नव सम्वत्, ३३— आनुपक (कहानियाँ), ३४— विवेकशील बच्चे, ३५— जन्म दिवस, ३६— करवा चौथ, ३७— योग परिणति, ३८— पर्वमाला, ३९— दाम्पत्यदिवस, ४०— छलकपट और वास्तविकता, ४१— श्रद्धा सुमन, ४२— माथुर वैश्यों का उद्गम, ४३— ईश महिमा, ४४— मन की अपार शक्ति, ४५— नयन भास्कर, ४६— युधिष्ठिर यक्ष गीता, ४७— वेद उद्गीत, ४८— दर्पण, ४९—राष्ट्रीय गौरव, ५०—वातायन।

अनुक्रम

१. सुधि के वातायन ९
२. अजय दिशा १२
३. वन्दना १७
४. जन्म १८
५. मेरी अज्ञानता १९
६. बचपने की सूझ २०
७. आर्यवीर दल २१
८. कलकत्ता का अनुभव २२
९. स्वतन्त्रता दिवस २३
१०. मोहन चने वाला २४
११. यज्ञ प्रचार समिति २५
१२. विवाह २६
१३. घर पर बिजली गिरी २८
१४. नया उद्योग और पुत्र की हत्या २९
१५. पुरुषार्थी महिला ३१
१६. वर की खोज ३२
१७. अभाव की पूर्ति ३३
१८. तुलना ३४
१९. किराये का मकान ३५
२०. विपत्ति और समाधान ३९
२१. शिक्षा और प्रेरणा ४२
२२. लेखन ४५
२३. भूमिका ४६
२४. सूखारोग का योग ४८
२५. आचार्य जी ५०
२६. ज्येष्ठ भ्राता ५२
२७. अमोघ औषधि ५३
२८. नक्षत्रों का प्रभाव ५५
२९. सृष्टि सम्वत् ५६
३०. लालच ५९
३१. परिश्रम को नहीं भूले ६२
३२. संकट के साथी ६३
३३. सावधानी ६६
३४. पं० नरोत्तम व्यास की सम्पत्ति ६७
३५. गऊ रक्षा ६७
३६. सी. एल. राकेश ६८
३७. दीपावली सूनी ७०
३८. वीरगति ७२
३९. ऐसे रण बाँकुरे को नमन ७३
४०. जीव की अल्पज्ञता ७५
४१. दुर्गादत्त त्रिपाठी ७७
४२. सरल स्वभाव ७८
४३. दुकान पर बोर्ड लगायें ८०
४४. अद्वैत ८१
४५. प्रतिमा उपासना कब से ८३
४६. भूल स्वीकार ८४
४७. विश्वास से विश्वास पैदा होता है ८५
४८. मंघाराम ८६
४९. वह मेरे शिष्य हैं ८६
५०. श्रेय किसका ८७
५१. नमस्ते या नमस्कार ८९
५२. शब्द से मन के भाव का पता लगता है ९०
५३. तुमने क्या खिला दिया ९१
५४. शोभा यात्रा ९२
५५. शरद पूर्णिमा ९२
५६. हकीम बद्री प्रसाद ९३
५७. हकीम देवी प्रसाद ९७
५८. हिन्दी के प्रति तर्कता ९७
५९. शिक्षा का मूल्य अधिक १००

वीरेन्द्र गुप्त:

६०. विचार और दृष्टिकोण १०१
६१. मोतीराम ने बीड़ी छोड़ दी १०३
६२. विचार नमस्ते में बाधक नहीं १०३
६३. भूल सुधार १०४
६४. लेखन से लेखक जाना जाता है १०५
६५. रम्मन बाबू १०७
६६. न्यायिक मजिस्ट्रेट की विनम्रता १०८
६७. नकल कर लेखक बने १०९
६८. सहयोगी ११०
६९. क्या फोटो भगवान हैं? ११५
७०. श्री कृष्ण चर्चा अधूरी ११८
७१. भगवान को किसने अधिष्ठाता बनाया १२१
७२. खाली समय में प्रभु चिन्ता १२३
७३. आनुशक १२४
७४. प्रभु से प्रार्थना १२५
७५. संस्कृति क्या है? १२६
७६. प्लान्चिट १२८
७७. रक्षा तो प्रभु करते हैं १३१
७८. तीन कामनायें १३२
७९. आकस्मिक घटना १३५
८०. व्यंग्यात्मक प्रश्न १३६
८१. स्वामी विज्ञानानन्द १३८
८२. अहम मेरा चूर चूर हो गया १३९
८३. शंका समाधान १४०
८४. साहित्य का प्रभाव होता है १४२
८५. नारायण १४३
८६. परिवर्तन १४५
८७. स्याही की एक बूँद १४७
८८. भयंकर दण्ड १४९
८९. प्रदेश के बाहर सम्मान १५०
९०. उद्गम का स्वरूप १५२
९१. जिज्ञासा १५३
९२. प्रेम प्रकाश बंसल १५४
९३. महानता १५८
९४. दो समाधान १६०
९५. महन्त कृष्णानन्द १६५
९६. युक्ति युक्त समाधान १६६
९७. मोक्ष प्राप्ति में कोई प्रतीक्षा नहीं १६८
९८. जड़ पूजा १७०
९९. भारत चन्द १७६
१००. पाप क्या है? १८०
१०१. सात्विक आय १८४
१०२. शान्ति की कामना १८५
१०३. मार्जन १८८
१०४. अन्धकार और अज्ञान १८९
१०५. दर्शन केसरी १९१
१०६. केरल केसरी १९२
१०७. आर्य मनीषी १९३
१०८. माप दण्ड १९४
१०९. अन्य प्रतिभायें १९७
११०. अपनी पहचान २६५
१११. मन की गुहार २७०
११२. लोकार्पण २७३
११३. जन्म दिन २७६
११४. विनम्र निवेदन २७७

सुधि के वातायन

प्राणवायु जीवन के लिये अनिवार्य है। मनुष्य का जीवन कर्म के, परिणाम एवं चिन्तन के सहारे चलता है। चिन्तन में बीते कल की घटनाऐं एवं उनसे प्राप्त अनुभव ही आगे बढ़ने की दिशा एवं कार्य को निर्धारित करते हैं। इन अनुभवों के पीछे सक्रिय रहती हैं विगत काल की स्मृतियाँ।

वीरेन्द्र गुप्त: जी का जीवन संघर्ष पूर्ण रहा है। अल्पशिक्षा, समाज में मध्यवित्त वर्ग में अपनी स्थिति और ऊपर से निकट स्वजनों का विरोधी स्वर एवं विरुद्ध कार्य सबके भीतर से जूझते हुए निराशा और निष्ठुरता के चक्रव्यूह से बाहर निकलने में जो कुछ उन्होंने अनुभव किया है उसी अनुभव ने गुप्त: जी को ईश्वरीय सत्ता का आभास भी करा दिया है। अपने विचार एवं कार्य दोनों ही स्तरों पर निष्ठावान बने रहना ही चरित्र की दृढ़ता का परिचायक होता है। इस निष्ठा के कारण ही हम दूसरों के द्वारा की जाने वाली प्रशंसा, निन्दा, ईर्ष्या या आलोचना किंवा उपहास का पात्र भी होते हैं। अन्य बिन्दुओं को छोड़ दें तो भी आलोचना के द्वारा ही हम स्वयं को समाज के अनुकूल बनाए रखने में समर्थ होते हैं। आलोचक हमारी त्रुटियों की ओर संकेत करता है। उनमें सुधार करते हुए हम समाज के साथ बढ़ते रहते हैं परन्तु आलोचना, समालोचना यदि कुत्सित निन्दा का स्थान ले ले तब उसे सहन करना कठिन भी होता है और कष्ट कारी भी। वीरेन्द्र जी ने उसे भी सहन किया है यही कारण है कि अपने अनुभवों को कलमबन्द करते हुए उन्होंने कहीं भी अपने मन में आते क्रोध की तीक्ष्णता को व्यक्त नहीं होने दिया है। प्रसंगवश कहीं आत्मविभोर होकर यदि कोई बात कह भी दी है तो उसमें अभिमान के स्थान पर विनम्रता का भाव ही परिलक्षित हुआ है मन में रहने वाली यही निस्संगता सदैव उनके व्यवहार में रही है इसका प्रमाण

यह है कि मेरे और वीरेन्द्र जी के २९ वर्षों के सम्पर्क की लम्बी अवधि में एक बार भी प्रसंगवश भी उन्होंने अपने एकमात्र किशोरवय पुत्र की हत्या की चर्चा तक नहीं की। उस घटना को मैं भी इस कृति वातायन की पाण्डुलिपि को पढ़कर ही जान सका हूँ। यह है अपने दु:खों को भूलकर दूसरे के सुख की चर्चा करना। इसी प्रकार का दूसरा अनुभव मुझे मुरादाबाद निवासी दार्शनिक एवं कवि स्वर्गीय अम्बालाल नागर जी की जीवन शैली में, उनके साथ बिताए गए क्षणों में हुआ था। वह भी पर—दु:ख कातर होते थे पर अपने दु:ख की चर्चा रंच मात्र भी नहीं करते थे।

संसार में तीन ही प्रकार की इच्छा होती हैं वित्तेष्णा, पुत्रेष्णा, लोकेषणा। दैवयोग से ऐसा दुर्योग बना कि पुत्र पाया तो परन्तु खो गया, रहा वित्त सो पुरुषार्थ से उपार्जित है, तीसरी लोकेषणा या कीर्ति वह कर्म से तो प्राप्त होती ही है इसमें भगवंत कृपा भी रहती है यहाँ प्रसंग वश अपनी इस बात को स्पष्ट करने के उद्देश्य से एक चर्चा करना चाहता हूँ।

अभी ११ मई २००३ को मुरादाबाद में हुए वैश्य महासम्मेलन पश्चिमी उ०प्र० के आयोजन के अवसर पर एक स्मारिका भी प्रकाशित हुई थी जिसका सम्पादन मैंने किया था। वह काम ऐसा था जैसे कुरते की नाप का आदमी बनाना और यह भी पता न हो कि कपड़ा कब मिलेगा, कितना मिलेगा, फिर भी समय पर आदमी तैयार करके देना हो। काम हुआ। टंकण कर्त्ता और कम्प्यूटर व मुद्रण कार्य अन्य कारणों से उत्पन्न विरोधी परिस्थितियों के चलते जैसी पत्रिका आई उसमें मैं स्वयं सन्तुष्ट नहीं हो पाया तो अन्य को तो कष्ट होना ही था यदि प्रश्न उठे कि त्रुटियों और भूलों का दोषी कौन है? स्पष्ट और प्रत्यक्षरूप से उत्तर होगा—सम्पादक! यह है प्रारब्ध। यश तो परमेश्वर के हाथ में है कर्म हमारे आधीन है। वीरेन्द्र जी कर्म करते हैं। उन्होंने अपना जीवन वेद—शिक्षा के प्रसार में लगा दिया है। यही लक्ष्य है। कार्य करने में जो व्यक्ति साथ में आते हैं उन्हीं के साथ से हम सुख और दु:ख का अनुभव करते हैं, दु:ख को पीकर केवल

सुख के प्रसंग दूसरों के साथ बांटने में आनन्द मिलता है। यह आनन्द ही सम्भवत: मोक्ष है जहाँ अपने सुख—दु:ख का भान न रहे, दूसरों को राह सुझाने का पावन सुकर्म सम्पन्न हो जाए तथा मन कहीं लिप्त न हो। अर्थात् आगामी जन्म के लिये संचित कर्मों का बोझ भी हमारे साथ न बंधे। एक बात इस समय यह उल्लेखनीय है कि मुरादाबाद में वर्ष २००३ के अप्रैल माह में अनेक स्थानीय साहित्यकारों के रचनासंग्रहों का लोकार्पण हुआ है यह रचना—धर्मिता की दृष्टि से शुभ लक्षण है मुरादाबाद में लगभग १५० वर्ष बाद मात्रा की दृष्टि से साहित्य का प्रसार फिर बढ़ा है, उस वृहद साहित्य—प्रसारण में यह पुस्तक आगामी शताब्दियों में भी मुरादाबाद के माध्यम से समकालीन भारतीय समाज की परिस्थिति में मानवीय चरित्र के वैविध्य को प्रस्तुत करेगी। मानव जीवन के सुख—दु:ख में कैसे निस्संग एवं अप्रभावित रह कर, अपना दु:ख पीकर समाज के लिये स्वयं को उपयोगी सिद्ध कर सकता है, इस अविश्वसनीय तथ्य का प्रमाण भी यह पुस्तक होगी इसका मुझे विश्वास है। यह कहते हुए मुझे कोई संकोच नहीं हो रहा है कि साधारण काव्य एवं श्रृंगार गीत रचना में मग्न रहता हुआ मैं अपने रास्ते जा रहा था। वीरेन्द्र जी ने स्वामी दयानन्द कृत गोकरूणानिधि, आर्योद्देश्य रत्न माला एवं आर्याभिविनय के काव्यानुवाद के स्वस्ति—पथ पर चलाकर मुझे वेदानुवाद के कल्याण मार्ग का आनन्द युक्त यात्री बना दिया, संभवत: वैसा करना मेरे लिये सहजता से कभी भी संभव न था परन्तु कण्टक—पथ भी सुगम होता है बशर्ते यात्री को यात्रा में बोझ बांधकर चलने की आदत न हो। आपकी भी जीवन यात्रा पराए दु:ख में काम आने का सुख आपको प्रदान करे, पराए सुख में आनन्द की अनुभूति आपको भी आनन्दित करे, और आप भी अपना दु:ख भूल कर, कटुता भूल कर, लोक—सुख की चिन्ता करें, निश्चय ही आपको भी यश मिलेगा।

इस पुस्तक की रचना यश या मोक्ष सुख की देने वाली हो, ऐसी मेरी कामना है। यह सुख पाठकों के मन को भी प्राप्त होगा ठीक वैसे जैसे वीरेन्द्र जी की अब तक प्रकाशित पुस्तकों से

सद्विचार और सद्कर्म की प्रेरणा और प्रसार अब तक होता रहा है। मैं भी आप सबके साथ इस सुख का साक्षी भी हूँ, भागीदार भी।

मुझे याद आती है मुरादाबाद के कवि श्री ललित मोहन भारद्वाज के मुक्तक की पंक्ति

''यश तब मिलता है जब यश के हित न जिये कोई।''

वही यहाँ चरितार्थ हो रही है, परमप्रभु की कृपा सब पर रहे।

इसी प्रार्थना के साथ आपका

डा० अजय 'अनुपम'

गंगा दशहरा
ज्येष्ठ शुक्ल
सं०२०६०
१० जून २००३

विश्रान्ति
४७ श्री राम विहार
कचहरी, मुरादाबाद

□□

अजय दिशा

भादो शुक्ल १० सं २०४९ = ६ दिसम्बर १९९२ रविवार की सायंकाल के समय कविवर, सुयोग्य अध्यापक डा० अजय अनुपम जी मेरी दुकान के आगे से होकर जा रहे थे, मेरा ध्यान उनकी ओर गया, मैंने नमस्ते की और बैठने का आग्रह किया। उस समय मैं दर्पण लिख रहा था। ३१ वीं पुस्तक गायत्री साधन छपकर तैयार हो चुकी थी, उसकी एक प्रति कविवर की ओर बढ़ाते हुए अवलोकनार्थ प्रस्तुत की। श्री अनुपम जी ने स्वीकार कर पुस्तक को मस्तक से लगाया और कहा—आगे क्या लिख रहे हैं। मैंने उत्तर में निवेदन किया ''दर्पण''। कुछ पृष्ठ देखे और बड़े ही विनम्र शब्दों में कहा गुप्त: जी आपकी ३१ कृतियों के बीच यह हलका फुलका ''दर्पण'' कम से कम मुझे तो अच्छा नहीं लग रहा, मैं इसका विरोध नहीं कर रहा, परन्तु मेरे मन को जो लगा वही कह रहा हूँ, इसमें आप खिन्न न हों, इसके स्थान पर आप अपने जीवन के संस्मरण लिखें, इसमें नगर की अनेक विभूतियों की चर्चा भी आ सकती है और इससे नगर का गौरव भी बढ़ेगा।

अजय अनुपम जी ने लेखनी को नयी दिशा दी और जीवन की घटनाओं को लिखने के लिये प्रेरित्त किया। अपनी स्मृति को जागृत कर शनैः शनैः लिखने लगा। घटनायें जीवन को बदल देती हैं। नहीं मालूम किस घटना से किसका जीवन बदल जाय।

कई व्यक्तियों ने कहा कि आपकी आयु शारीरिक दृष्टि से लगभग १०—१५ वर्ष कम लाती है, इसका क्या रहस्य है। मैंने कहा—इसका कारण केवल आहार, विहार और व्यवहार पर पूर्ण संयम रखना ही है। गृहस्थ आश्रम का समय ५० वर्ष तक की आयु का है, मैंने भी ५२ वर्ष में अर्थात् १९८० में गृहस्थ से सन्यास ले लिया था, दूसरे हलका सुपाच्य भोजन, कुछ आसन और प्राणायाम का अभ्यास भी चलता ही है। सन्ध्या में एक मन्त्र आता है "जीवेम शरद शतं" अन्त में आता है "अदीनास्याम शरदा शतं" जिसका अर्थ है मैं सौ वर्ष तक जीवित रहूँ साथ में किसी के आधीन होकर नहीं, पुरुषार्थ पूर्वक जीवित रहूँ। अर्थात् अपना सारा कार्य अपने आप ही करता रहूँ, किसी के सहारे की आवश्यकता न पड़े। देखा जाता है कि ५०—६० वर्ष की आयु के पश्चात् ही सहारे की आवश्यकता पड़ने लगती है। इस बात पर बहुत मनन किया और इसकी निवृत्ति के लिये मैंने "अदीनास्याम" पुस्तक तैयार की और उसमें कई प्रकार के साधन अंकित किये हैं। मैंने भी उनका उपयोग कर के परीक्षण किया, सही पाया, सार्थक सिद्ध हुए और मैंने अपने को हर प्रकार से ठीक रखने की दिशा में आगे पग बढ़ाया।

व्यवहार में मैंने औरों का कष्ट दूर करने में सदैव स्वयं कष्ट उठाना स्वीकार किया। किसी को अनुचित रूप से प्रताड़ित करना, सताना या गलत परामर्श देना कभी स्वीकार नहीं किया, कभी किसी से अनुचित लाभ उठाने का प्रयत्न भी नहीं किया परन्तु हानि उठाना स्वीकार किया। मैंने किसी भी संस्था के पैसे का कभी दुरुपयोग अथवा हरण नहीं किया, अपितु रिक्शा, नाश्ता या भोजन आदि का अपना खर्च स्वयं ही किया। बिना पुरुषार्थ के धन को प्राप्त करना मेरी प्रकृति के विपरीत है। मैंने किसी की आत्मा को कभी दुखाना नहीं चाहा। असत्य भाषण और छलकपट के व्यवहार को सदैव

नकारा ही है। ''ईश्वर प्रणिधान'' का सदैव ध्यान रहा, परिणाम स्वरूप हर समय परमात्मा को अपने साथ ही पाया। कठिन परिस्थितियों में भी उस प्रभु ने मेरा पथ–प्रदर्शन किया और मैं प्रभु का कृपा पात्र भी बना रहा, प्रभु ने ही दुष्टों से रक्षा भी की। व्यवहार के साथ आचरण भी आ जाता है। आचरण की पवित्रता बनाये रखने के लिये सदैव सजग बना रहा, उसे कभी खण्डित नहीं होने दिया। भले ही मेरे सत्य कथन को दुराग्रह पूर्ण आलोचना समझा जाता रहा।

इन घटनाओं को लिखने में मैंने कहीं किसी भी प्रकार की अतिशयोक्ति का प्रयोग नहीं किया है। परन्तु बहुत सी अत्यन्त कटु तथ्यपूर्ण सत्य घटनाओं को यही सोचकर नहीं लिखा, कि सम्बन्धित व्यक्ति के मन में अत्यन्त ग्लानि के भाव न उत्पन्न हो जायें। वह पश्चाताप की अग्नि में न जलने लगे।

जिन पात्रों ने मेरे साथ घात की है, अनिष्ट चाहा है और किया भी है, उन सभी पात्रों के प्रति मन में अत्यन्त वेदना है, परन्तु मैं उनके बारे में कुछ नहीं लिख रहा हूँ, कारण, कर्मों का फल अवश्य मिलता है, उसका न्याय प्रभु जी स्वयं करेंगे।

मेरा इन घटनाओं को लिखने का उद्‌देश्य आत्म–प्रशंसा नहीं, वरन सत्योक्ति ही है, और न मेरा उद्‌देश्य किसी की आत्मा को ठेस पहुँचाना है। मैंने किसी की आलोचना या समालोचना नहीं की मैंने तो वस्तु स्थिति से ही अवगत कराया है। सत्य बात लिखते और न चाहते हुए भी उक्त दोनों बातों की कुछ झलक आ ही जाती है। यदि ऐसा कहीं कुछ हुआ हो तो मैं उसके लिये क्षमा प्रार्थी हूँ।

मेरी गर्वोक्ति नहीं सत्योक्ति है कि जिस किसी ने भी मेरी किसी भी पुस्तक का अवलोकन किया है वह चाहता है कि मैं सभी पुस्तकों का अवलोकन करूँ। यह मेरे ऊपर उस प्रभु की कृपा का ही फल है। मैं तो यही मानता हूँ कि प्रभु जी की जो आज्ञा रूपी अन्त: प्रेरणा होती है मैं वही लिख पाता हूँ, उससे आगे कुछ नहीं लिख पाता।

उऋण

यज्ञोपवीत में तीन धागे होते हैं। जो तीन प्रकार के ऋणों की सदैव स्मृति कराते रहते हैं। १— देवऋण—सदैव देवों को उनकी हवि देकर पुष्ट करना अर्थात् नित्य दैनिक यज्ञ का करते रहना होता है। मैं इसे गत ५५ वर्ष से निरन्तर करता चला आ रहा हूँ। २— ऋषिऋण— वेदादि आर्ष ग्रन्थों का स्वाध्याय एवं व्यवहार में लाने के प्रयत्न में सदैव लगा ही रहना। मैंने उसके अन्तर्गत साहित्य सृजन कर, मानव उपयोगी सभी विपयों पर लिखकर जन हितार्थ प्रकाशित कर सबके लिये स्वाध्याय हेतु प्रस्तुत कर, व्यवहार में लाने के लिए प्रेरित करने का पूर्ण प्रयत्न किया। ३— पितृऋण—से उऋण होने के लिये मैंने ग्रहस्थ जीवन में प्रवेश किया एक पुत्र का जन्म भी हुआ, उसका जन्म ९ अगस्त १९५५ को अश्विनी नक्षत्र में हुआ था, इसी कारण उसका नाम अश्विनी कुमार रखा गया था। नगर मुरादाबाद में माथुर वैश्य नवयुवक मण्डल के नाम से एक स्वजातीय संगठन की स्थापना २७/५/१९५२ को की गई थी। ४ मार्च १९६० में ५ कमरों का एक स्वजातीय भवन बनकर खड़ा हो गया था। उसका वार्षिकोत्सव मनाया गया उसमें स्त्री, पुरुष और बच्चों ने भाग लिया, प्रसाद का भी वितरण हुआ। अगले दिन भाई श्रीभगवान जी, जो उस समय सभा के प्रधान थे मेरी दुकान पर आये और कहा—प्रसाद तो कम नहीं पड़ा? उस समय अश्विनी भी दुकान पर था, उसने तत्काल उत्तर दिया, कम पड़ गया। इस पर श्रीभगवान जी ने कहा—आपने कैसे जाना? अश्विनी ने उसी क्षण उत्तर दिया कि हमें प्रसाद नहीं मिला। इस उत्तर को सुन कर श्रीभगवान जी बहुत आश्चर्य चकित रह गये। मेरा यह एक मात्र पुत्र २०/९/१९७६ को मुझसे छिन गया। स्वाध्याय करते हुए यह मन्त्र सामने आया—

तन्तुं तन्वन्नजसो भानु मन्विहि ज्योतिष्यत: पथो रक्ष धिया कृतान्।
अनुल्वणं वयत जो ग्रवा मयो मनुर्भव जनया दैव्यं जनम्।।

ऋग्वेद १०/५३/६

हे मनुष्य! तू प्रजा शिष्य आदि तन्तु को उत्पन्न करता हुआ ज्ञान या लोकों के प्रकाशक गुरु व प्रभु का अनुगमन कर अथवा बुद्धि से बनाये गये मार्गों को प्रकाश से युक्त बनाये रख। उपदेष्टा जनों के कभी कष्ट न देने वाले सत्कर्म को कर। तू सदा मनन शील हो और दिव्य गुण वाला पुत्र वा शिष्य तैयार कर।

पुत्र तो छिन गया, परन्तु वेद वाणी की इस आज्ञा पालन के फलस्वरूप हर क्षेत्र में लगभग ३०—३५ सुयोग्य शिष्यों को तैयार कर दिया है जो योग, आसन, प्राणायाम, चिकित्सा, सिद्धान्तों का ज्ञान, वेद में आस्था, हिन्दी लिपि और हिन्दी अंकों से प्रेम कर के व्यवहार में ला रहे हैं।

मैंने भी अपने पिता श्री भूकन सरन जी कागजी के नाम को, व्यापार को, व्यवहार को भरपूर आगे बढ़ाया, कभी भी उनके नाम को बट्टा नहीं लगने दिया। वास्तविकता तो यही है कि मैंने जो कुछ भी प्रगति की है वह उन्हीं के लगाये हुए वट वृक्ष की छाया में ही बैठकर की है।

पाठकों के करकमलों में मैं यह ग्रन्थ "वातायन" के नाम से प्रस्तुत कर रहा हूँ। इस ग्रन्थ के सन्दर्भों को क्रमबद्ध करने में, कविसम्राट, डा. अजय अनुपम जी ने जो सहयोग दिया है वह सराहनीय है। मैं उनका हृदय से आभार व्यक्त करता हूँ।

वीरेन्द्र गुप्तः

□□

।।ओ३म्।।

अथ वातायनानुशासनम्

सत्यस्य नावः सुकृतम् अपोपरन्।।

ऋग्वेद ९/७३/१

सत्य की नौकाएँ शुभ कर्म करने वाले को पार लगाती हैं।

अहम् अनृतात् सत्यम् उपैमि।।

यजुर्वेद १/५

मैं असत्य से सत्य की ओर जाता हूँ।

आप इव काशिना संगृभीता असन्

अस्त्व आसत इन्द्र वक्ता।।

ऋग्वेद ७/१०४/८

हे ईश्वर! झूठ बोलने वाला ऐसे समाप्त हो जाए जैसे मुट्ठी में जल, समाप्त हो जाता है।

प्रार्थना

प्रभु जी ने मुझे इस संसार में दीपक बनाकर भेजा है। दुष्ट आत्मायें मुझे बुझाना चाहती हैं। मैं तीव्र ज्योतिपुंज नहीं बन सकता, दीपक तो बना रहूँ, किसी आघात से बुझ न जाऊँ।

जन्म

मेरा जन्म श्रावण शुक्ल ६ बुद्धवार ५९—४८ हस्ते २९—२० सिद्ध योग २७—४६ कर्क गतांश १७ तत्रेष्टम् ५४—१० मिथुन, सूर्योदय से २ घन्टे २० मिनट पूर्व सम्वत् १९८४ तदनुसार ३ अगस्त १९२७ सृष्टि सम्वत् १,९६,०८, ५३,२७ को आर्यवर्त देश ''भारतवर्ष'' के उत्तर प्रदेश क्षेत्र के मुरादाबाद नगर में मोहल्ला जीलाल स्थित व्यास कुटि में श्रद्धेय पिता श्री भूषण शरण जी एवं माता अशर्फी देवी के गृह में हुआ था।

मुझ से पूर्व कई भाई बहनों का जन्म हुआ था दुर्भाग्य वश किसी का छोटी आयु में, किसी का विवाह के पश्चात् स्वर्ग वास होता रहा। बड़े भाई श्री बृजनाथ जी का विवाह रामपुर से हुआ था। कुछ ही समय पश्चात् रक्त—पित्त का रोग लग गया। रक्त की उल्टी होती रही, बहुत चिकित्सा की परन्तु वह ठीक न हो सके और दीपावली के पश्चात् भाई दोज के दिन उनका स्वर्गवास हो गया। उसी दिन से हमारे यहाँ भाई दोज का पर्व खण्डित हो गया। मेरी भावज ने उसी समय से अन्न जल सब कुछ त्याग दिया था। सबने समझाया परन्तु किसी की नहीं मानी और ठीक एक मास के पश्चात् उसी दिन उन्होंने भी यह संसार त्याग दिया।

हमारे पिता श्री ने इस प्रकार के अनेक संकटों को झेला था। स्वभाव से भावुक होने के कारण उनके नेत्रों से यदा—कदा आँसू टपक पड़ते थे। व्यास कुटि के पश्चात् बराबर के मकान — श्री पृथ्वीराज चोबे जिनके पुत्र श्री मधुकर चोबे हैं उनके मकान—में रहने लगे। उसी मकान में आनन्द स्वरूप के पिता भी रहते थे। हमारे पिता श्री नित्य यज्ञ करते थे, इसी कारण आनन्द स्वरूप को सब बच्चे महाशय जी करके चिढ़ाते थे। यही आनन्द स्वरूप बड़े होकर महाशय वस्त्र भण्डार के स्वामी होकर नगर में प्रसिद्ध हुये और उस काल में इस नाम का भरपूर लाभ प्राप्त किया। इसके पश्चात् इसी मोहल्ले में सा० रामगुलाम जी के मकान में चले गये। कुछ वर्ष

रहकर पिता श्री ने सन् १९३६ में राजोगली का मकान लक्ष्मी नारायण खन्ना से खरीद लिया और हमने उसी में रहने के लिये प्रवेश किया। ३० जनवरी १९५९ को पिता श्री स्वर्गवासी हो गये। परिवार में उस समय मैं (वीरेन्द्र नाथ) छोटे भाई राजेन्द्र नाथ और उससे छोटी बहिन रजनी ही उपस्थित थे। मेरा विवाह १८ नवम्बर १९४९ को हो गया था। रजनी का विवाह वह स्वयम् ही कर गये थे ऑवला निवासी श्री गोकरननाथ जी के सुपुत्र श्री हरिशंकर जी के साथ। राजेन्द्र नाथ का विवाह पिता श्री की मृत्यु के पश्चात् माता श्री ने ही किया था।

१०/६/१९६८ को पुत्री अमृता की मृत्यु हो गई। मेरे ममेरे भाई श्री राममुकुट जी गुप्ता ने बीच में पड़कर इस समय उत्पन्न हुए पारिवारिक विवाद को निबटाते हुए निर्णय किया कि दुकान (जो किराये की थी) मैं 'वीरेन्द्र नाथ अश्विनी कुमार' के नाम से कार्य करना आरम्भ कर दिया और घर का सारे सामान तथा मकान आदि में मेरा कोई भाग नहीं रहा। मैं रहने के लिये ४/८/१९६८ को जीलाल मुहल्ला में व्यासकुटी ही किराए पर मिल गयी मैं उसी में सपरिवार रहने लगा। यह प्रारब्ध की बात है, इसी व्यास कुटी में ही मेरा जन्म हुआ था। ▢▢

मेरी अज्ञानता

सन् १९३७ की बात है कि मैं अपने बड़े भाई साहब श्री विश्वनाथ जी के साथ चेतनदेव की बगिया में प्रातः काल व्यायाम के लिये कभी कभी जाया करता था। एक दिन होली का अवसर आया, बाग में ठण्डाई घुटी, उसका रंग हरा सा होता है। सबको एक एक गिलास दिया गया, भाई साहब ने भी एक गिलास पिया, बाग में एक कमरा था मैं उसमें इसलिये छिपा रहा, कि कहीं मुझसे भी पीने को न कहें। मैं उसमें भाँग का अनुमान हरे रंग के कारण से लगा रहा था। सोचने लगा भाई साहब ने भी आज भाँग पी है। जब सब ठण्डाई समाप्त हो गई तब मैं कमरे से बाहर निकला और होली का रंग होने लगा।

हरे रंग में भाँग होने का भ्रम वर्षों तक बना रहा। होली के अवमर पर मिठाई वाले हरी बूँदी के लड्डू बनाते हैं, मैंने उसे कभी नहीं खाया। केवल भाँग का अंश होने के नाते से कभी छुआ तक नहीं। एक दिन घासी हलवाई से मैंने कहा—क्या तुमको भाँग के लड्डू बेचने का अधिकार मिला है?

उसने कहा—कैसा अधिकार हम भाँग के लड्डू कहाँ बेचते हैं?

मैंने कहा—यह जो हरे लड्डू रखे हैं क्या यह भाँग के नहीं हैं?

घासी — नहीं! यह तो हरी बूँट के लड्डू कहलाते हैं, इसमें भाँग नहीं होती, हम तो बेसन में पालग के पत्ते पीस कर डाल देते हैं उससे यह हरा रंग बना जाता है।

मैंने उस दिन सन् १९६५ में पहली बार उस लड्डू को खाया। वर्षों के पश्चात् हरे रंग की यह भ्रान्ति दूर हुई। ☐☐

बचपने की सूझ

श्रावणी रक्षा बन्धन के दिन पतंग उड़ाने के लिये सभी उत्सुक रहते हैं। मैं भी राजोगली के मकान की छत पर था। छत के ऊपर एक टीन शेड़ भी पड़ा था। मैं उस पर चढ़ गया। एक पतंग कटकर आई, उसे देख कर मैं टीनशेड़ से एक दम नीचे छत पर कूद पड़ा, कारण था कि पतंग छत की ओर ही आ रही थी, और वह पतंग नीचे की छत पर आ गिरी। मेरे मन में उसी समय यह विचार उठा कि यदि यह पतंग आबचक की ओर को जाती और तुम उध र कूद पड़ते तो क्या होता? इस विचार के आते ही मैंने उसी क्षण में पतंग को हाथ न लगाने का संकल्प कर लिया। मेरे सामने को पतंग, डोर कुछ भी निकल जाय मैंने उसे आज तक हाथ नहीं लगाया। ☐☐

आर्य वीर दल

१९४५ में समूचे देश के गगन पर हिन्दू मुसलिम दंगों की गहरी काली घटा छा गई थी। मन में विचार उठा सुरक्षा की दृष्टि से लाठी का प्रशिक्षण प्राप्त करना चाहिये। अपने मित्र राजाराम जी के साथ प्रात: भ्रमण के लिये नित्य जाते ही थे। लाठी प्रशिक्षण प्राप्त करने की दृष्टि से राष्ट्रीय स्वयम् सेवक संघ की गंगातीर शाखा में जाना आरम्भ किया। लाठी की मार, रणमार जनेऊआ, प्रसरमार, प्रतिप्रसर मार का अभ्यास किया, इससे आगे किसी ने कुछ नहीं बताया। दातून करने का अभ्यास था, शाखा की एक दिन छुट्टी करके एक सप्ताह की दातूनें ले आते थे। ऐसा सन्योग बना कि एक दिन वर्षा होने लगी, अगले दिन दातूने लेने जा रहे थे तो टाउनहाल के पास जगन्नाथ सिंघल मिले और कहा—वीरेन्द्र नाथ कहाँ जा रहे हो, मैंने कहा—दातूने लेने। इस पर सिंघल जी ने कहा आर्यवीर दल की शाखा आरम्भ कर दी है, चलो उसमें। आर्य समाज स्टेशन रोड पर ले गये। अगले दिन दातूने लेने गये, उसके पश्चात् चौथे दिन जब गंगातीर शाखा पर पहुँचे तो उस समय के मुख्य शिक्षक श्यामेश्वर सहाय ने कहा—आर्य वीर दल आदि में कहीं नहीं जाना है, आना है तो यहीं आना है, और आगे कहा दयानन्द ने आर्य समाज को बनाकर हिन्दु जाति के साथ जो अन्याय किया है हमें उसका प्रायश्चित करना है। मुझे यह बात बहुत ही अनुचित लगी, जबकि सभी यह मानते हैं कि यदि महर्षि दयानन्द न आते और आर्य समाज की स्थापना नहीं करते तो हिन्दू समाज का नामोंनिशान ही मिट जाता। उसी दिन से आर.एस.एस. की शाखा को त्याग कर आर्य वीर दल की शाखा में जाना आरम्भ कर दिया। आर्य वीर दल का अच्छा खासा संगठन खड़ा हो गया। मुझे स्टेशन रोड शाखा का मुख्य शिक्षक बना दिया गया। मेरे पास ३ सौ लड़के आते थे सबको लाठी, बल्लम और तलवार चलाने का पूरा प्रशिक्षण दिया।

आर्य समाज स्टेशन रोड के मैदान में सभा मंच के रूप में एक बड़ा चबूतरा बीच में बना हुआ था, उसके बीच में होने से कार्य क्रम में कुछ बाधा पड़ती थी, मैंने इस बात को जगन्नाथ सिंघल जी से कहा, अगले दिन चबूतरे की २,४ ईटें उखड़ी हुई देखीं उस समय फूल सिंह आर्य सेवक के स्थान पर कार्य कर रहा था मैंने फूल सिंह से कहा—यह ईटें किसने उखाड़ीं? उसने कहा सिंघल जी ने, तो मैंने कहा यह चबूतरा हटाने का ही आदेश है, मैंने उपशिक्षक रतन चन्द्र खन्ना और राजाराम जी से कहा कि आप दोनों कार्य क्रम लें, मैं इस चबूतरे को उखाड़ता हूँ। कुछ देर के पश्चात् ही समस्त सैनिकों ने कहा—कि शिक्षक जी चबूतरा उखाड़ें और हम खेंले। यहं नहीं होगा। रतन चन्द्र खन्ना जी ने आकर मुझ से कहा— मैंने उत्तर दिया जैसी सब की इच्छा, सारे सैनिक लग गये और देखते—देखते सारा चबूतरा उखड़ गया। मैंने मन में सोचा, यदि मैं सैनिकों से चबूतरा उखाड़ने को कहूँगा तो यह सोचेंगे, हमारे ऊपर हुकम चला रहे हैं, इस बात को विचार कर मैंने स्वयम् ही चबूतरा उखाड़ना आरम्भ कर दिया था इसका यह प्रभाव बना कि सारे सैनिक लग गये और आधे घन्टे में ही चबूतरा साफ हो गया। ◻◻

कलकत्ता का अनुभव

१९४२ में भारत छोड़ो आन्दोलन भी छिड़ गया था। दुर्भाग्य वश बड़े भाई का भी १९४२ के अन्त में स्वर्गवास हो गया। सारा खेल बिगड़ गया। पिता जी का मनोबल टूट गया, कागज पर कन्ट्रोल हो गया, किसी भी प्रकार का लाइसैन्स नहीं मिल सका। दुकान पर सारा माल समाप्त हो गया। छाली, कत्था, बटन, डी.एम. सी. कढ़ाई के धागे, साबुन आदि बेचकर उसी से घर का गुजारा चलने लगा। पहले बम्बई से जे.के. एडवानी के यहाँ से कागज आता था, मैंने एक पत्र उनको लिखा, उन्होंने ४० रिम की एक गाँठ तुरन्त सीधी बिल्टी से भेज दी। उससे बहुत सहारा मिला। पिता जी

ने भी शीघ्र पैसा इकट्ठा कर के बम्बई को ड्राफ्ट बनवा कर भेज दिया। शनै—शनै स्थिति में सुधार होने लगा और पुनः कागज का ही व्यापार शुरु हो गया।

१९४६ के जनवरी मास में कलकत्ता में अखिल विश्व आर्य सम्मेलन हुआ था। मैं उसमें श्री जगन्नाथ सिंघल, राम प्रसाद सिंह, पुरुषोत्तम जी के साथ गया था। बड़ा विशाल कार्यक्रम था। जब हम सब वहाँ पहुँचे थे तो देखा सायंकाल के समय तक प्रातः का भोजन चल रहा था। मैंने जगन्नाथ सिंघल जी से कहा यह व्यवस्था ठीक नहीं। इसे सुधारना है, अगले दिन हम चारो ने भोजन की व्यवस्था की और २ बजे तक सब पूर्ण कर दी। इस व्यवस्था से यह अनुमान हुआ कि जिस व्यवस्था में अधिक व्यक्ति लगते हैं वह कभी पूरी नहीं हो सकेगी, सब एक दूसरे पर टालते रहते हैं और जब हम चार ने व्यवस्था की तो चारो ने कार्य भार अपने आप लिया और कार्य ठीक प्रकार से सम्पन्न हो गया।

इसी वर्ष दशहरे के अवकाश के दिनों में आर्य वीर दल का शाहजहाँपुर में कैम्प लगा, मैं उसमें भी गया था, वहीं पर ही मेरा यज्ञोपवीत हुआ था। □□

स्वतन्त्रता दिवस

१९४७ में स्वाधीनता मिली, पहली १५ अगस्त को समूचे देश में एक नवीन उत्साह था। नगर मुरादाबाद में भी मुख्य बाजारों में अपार भीड़ थी। मैं सायंकाल के समय घर राजोगली गया था। मैंने देखा कुछ मुसलमान आती जाती स्त्रियों को छेड़ रहे थे। उसी समय बाबू रामेश्वर प्रसाद जी रंग वाले भी आ गये, मैंने और उन्होंने महिलाओं को चौराहागली के रास्ते से निकाला। बोलते—बोलते मेरी आवाज बैठ गई, एक लड़के से कह कर घर से विसिल (सीटी) मंगवाई, इसी बीच आर्य वीर दल का एक सैनिक दीखा, उसके द्वारा नगर नायक श्री जगन्नाथ सिंघल जी के पास व्यवस्था करने के लिये

समाचार भेजा। देखते ही देखते ३० मिनट के अन्दर ही एक सौ आर्य वीर सैनिक गणवेश के साथ आ गये और गंज गुरहट्टी से दरीबा पान तक रस्सी पड़ गई, एक ओर पुरुष एक ओर महिला बच्चे चलने लगे। ☐☐

मोहन चने वाला

मुरादाबाद मण्डी चौक में जीलाल स्ट्रीट के सामने साहू स्ट्रीट है उसके नुक्कड़ पर उत्तर दिशा वाले कोने पर एक ओर कन्हैय्या लाल दाल चने बेचते थे, दूसरे कोने पर मोहन लाल दाल चने बेचते थे। उस समय इन दोनों के दाल चने नगर प्रसिद्ध थे। दूर–दूर से बच्चे बड़े सभी दाल चने लेने आते थे। इतना सस्ता जमाना था कि एक पैसे में दाल चने, दोनों भर पेट मिल जाते थे। १५ अगस्त १९४७ की प्रात: से ही सभी नागरिकों के मन में एक नया उत्साह दीख पड़ता था। सभी अपने अपने दृष्टिकोण से प्रसन्नता व्यक्त कर रहे थे। उसी समय पर आजादी के दीवाने ने अपनी प्रसन्नता व्यक्त करने का एक
नया स्वरूप प्रस्तुत किया। श्री मोहनलाल जी माथुर वैश्य थे, उन्होंने अपना खौम्चा लाकर रखा ग्राहक दाल चने लेने आने लगे, सबको नित्य की भाँति दाल चने श्री मोहनलाल जी देने लगे, सब पैसे दे रहे थे, परन्तु मोहनलाल जी कह रहे थे आज आजादी का दिन है, हम आज पैसे नहीं लेंगे। इस घ़ोषणा को सुन कर सभी दंग रह गये। सब को इस वास्तविक आजादी के सुख का अनुभव कराने वाले श्री मोहनलाल जी माथुर वैश्य की लोग मुक्त कण्ठ से प्रशंसा करने लगे। ☐☐

यज्ञ प्रचार समिति

१९४८ में महात्मा गांधी की हत्या से आर्य वीर दल को बहुत बड़ा आघात पहुँचा। उसके पश्चात् यज्ञ प्रचार समिति का गठन किया गया, जिसमें मैं वीरेन्द्र नाथ, श्री बाबूराम जी दाल वाले, श्री रामचन्द्र जी, श्री. धनीराम जी और श्री शम्भूनाथ जी सम्मिलित थे। इस समिति के द्वारा लगभग १४ वर्ष तक कार्य किया गया, इसके अन्तर्गत भूड़ा और असालतपुरा के १३०० जाटव परिवारों को शुद्ध कर वैदिक धर्म में प्रवेश दिलाया।

मौ० साहू में एक हिन्दी प्रचार समिति बनी थी, उसी के प्रतिज्ञा पत्र पर मैंने हस्ताक्षर करके १९४८ में हिन्दी का प्रयोग और चमड़े को त्यागने का संकल्प लिया। १९४८ में एक और घटना घटी, मैं, जगन्नाथ जी सिंघल, राम चन्द्र जी और राम प्रसाद सिंह जी हम चारो दल की शाखा का कार्य कर के आये, गंज घास मण्डी के पास खड़े थे, सिंघल जी ने कहा मेरे पास सन्नू लाल की फाइल है, हसंराज केहर की फाइल है, और भी कई की फाइलें हैं, मैनें अपने मन में विचारा कि कही मेरी भी झूँठी फ़ाइल न बन जाये, अगले ही दिन मैंने आर्य समाज स्टेशन रोड से अपनी सदस्यता का आर्य समाज मण्डी बाँस के लिये स्थानान्तरण करा लिया। □□

विवाह

१९४९ में जून मास था, मैं दुकान पर अकेला ही सैण्डो बनियान पहने बैठा था एक सज्जन बैग में कुछ कागज रखे आये और मुझसे कहा लालाजी कहाँ हैं? मैंने कहा—कहीं गये हैं, उन सज्जन ने कहा—हम शाम को आयेंगे, इस पर मैंने कहा—आप अपना संकेत बतायें ताकि वह आपकी प्रतीक्षा करें, उत्तर मिला तुम्हारे विवाह की बात करनी है, मैं चुप हो गया। साय़ंकाल को वह

सज्जन आये और लालाजी से कहा—कि हम अपनी लड़की का सम्बन्ध आपके लड़के के साथ करना चाहते हैं। कितना सीधा पन था उनमें, न यह जानना चाहा कि लड़का क्या करता है, क्या योग्यता है कुछ नहीं जानना चाहा, इसी सीधे स्वभाव के साथ लालाजी ने भी कह दिया जैसी आपकी इच्छा। सम्बन्ध तय हो गया। सिरौली से लाला रामभरोसे लाल जी आये और कहा—उन्होंने क्या दिया है मैं सब कुछ दूँगा। यह समाचार पूर्व सज्जन बाबू लक्ष्मी नारायण जी एहलमद नीलाम को भी मिला, वह बहुत चिन्तित हो उठे वह कानूनगोयान के निवासी श्री लक्ष्मी नारायण जी मुख्त्यार से मिले और अपनी चिन्ता बताई, इस पर मुख्त्यार साहब ने कहा—आपने यह सम्बन्ध किसके यहाँ किया है? उन्होंने कहा—मण्डी चौक में लाला भूकन सरन जी कागज वालों के लड़के के साथ, यह सुनकर मुख्त्यार साहब ने कहा—आप निश्चिन्त रहें मैं उनको जानता हूँ वह आर्य समाजी हैं, जो कहा है उसमें कोई अन्तर नहीं होगा विवाह सम्बन्ध आपके यहाँ ही होगा। मैं लाला जी से मिल लूँगा। शाम को लौटते समय मुख्त्यार साहब दुकान पर आये और लाला जी से सारी बात कही, हमारे लाला जी ने कहा—आपने जो कहा, सही कहा। बाबू लक्ष्मी नारायण जी की एक कामना थी कि मेरी लड़की का विवाह किसी व्यापारी लड़के के साथ हो, वह जानते थे कि अधिकारी वर्ग की संगत अधिकारी वर्ग से ही होती है और उन्हीं का आपस में आना जाना होता है, क्लर्क की क्लर्क वर्ग के साथ और चपरासी की चपरासी वर्ग के साथ संगत होती है, एक चपरासी क्लर्क के साथ अथवा एक क्लर्क अधिकारी के साथ व्यवहारिक रूप से व्यवहार कुशल नहीं हो पाता। परन्तु व्यापारी ही एक ऐसा वर्ग है जो प्रत्येक वर्ग के व्यक्तियों के साथ उचित व्यवहार करना जानता है, क्योंकि उसके पास प्रत्येक वर्ग का व्यक्ति आता है और उसे प्रत्येक वर्ग के व्यक्ति से व्यवहार करने का पूरा अवसर भी मिलता है, इसलिये व्यापारी प्रत्येक वर्ग के व्यक्ति के साथ व्यवहार करने में कुशल होता है।

दूसरे दिन लाला जी देहली गये थे, मैं दुकान पर था श्री रामकुमार जी भंगवाले मेरे पास आये, मुझ से कहा—आप इस सम्बन्ध से सहमत हैं? मैंने कहा—मैं पिता जी के आश्रित हूँ जो वे करेंगे वह सही करेंगे इसमें मेरे सहमत होने न होने का कोई प्रश्न ही नहीं। श्री रामकुमार जी ने फिर कहा—फिर भी आपकी इसमें क्या इच्छा है? मैंने कहा—आप यह मान लीजिये कि सिरौली वाले राम भरोसे लाल जी तो सम्बन्ध निश्चित करके गये हैं और अब बाबू लक्ष्मी नारायण जी उतार चढ़ाव करने आये हैं, ऐसी स्थिति में रामभरोसे लाल जी की क्या दशा होगी उसी से अनुमान लगा लें वही दशा दूसरे की भी हो सकती है।

१८ नवम्बर १९४९ को विवाह सम्पन्न हुआ संस्कार श्रद्धेय पं० गोपी नाथ जी ने कराया, उस अवसर पर जिसने जो मांगा मैंने वह दिया और जिसने मुझे जो दिया वही रख लिया, बिदा के समय एक महिला ने मुझ से कहा—जिसने जो माँगा वही आपने दिया परन्तु आपने कुछ नहीं माँगा, ऐसा क्यों? मैंने उत्तर दिया इन सबको यही एक अवसर है मुझसे लेने का और मुझे तो बिना माँगे हर समय इन से मिलता ही रहेगा तो मैं क्यों माँगू? इस उत्तर को सुनकर महिला को बड़ा आश्चर्य हुआ और उसने हमारी सासू जी से कहा—कि आप बहुत ही भाग्यवान हैं जो ऐसा संतोषी दामाद मिला। मुझे उस महिला की छवि आज तक याद है, मैंने उनको फिर कभी नहीं देखा, अनेक बार प्रयत्न किया परन्तु कोई पता न चल सका कि वह कौन थीं।

एक दिन माता श्री ने पत्नी से कहा—इसके लिये दो रोटी सेक दे। मैं रोटी खाने बैठ गया, सोच रहा था कहीं केवल दो रोटी ही न सेकीं हों? मैं तो खाकर चला जाऊँगा परन्तु बाद में माता श्री की डाट पड़ेगी, तूने दो ही रोटी सेकीं? मैंने चार रोटी खालीं और कटोरदान में भी एक—दो रोटी और थी। मन में संतोष रहा कि समझदारी से काम लिया है। १९५७ में पुस्तक लिखने के लिये जब गायत्री साधन किया था, उस समय पर भी पूरा सहयोग मिला। घर में जैसी स्थिति थी मेरी धर्म पत्नी ने सदा उसमें ही सन्तोष किया। कभी किसी चीज की माँग नहीं की। लेखन कार्य में भी कभी कोई

बाधा उपस्थित नहीं की। इसी कारण मेरा लेखन कार्य निरन्तर निर्विघ्न रूप से चलता रहा। गृह स्वामिनी के सहयोग के कारण ही जीवन के सभी कार्य समय–समय पर पूर्ण होते रहे।

□□

घर पर बिजली गिरी

१९५१ से मैं दैनिक यज्ञ करता चला आ रहा हूँ। स्वध्याय के रूप में यजुर्वेद भाष्य जो सम्भल के साहू प्रतिपाल सरन जी ने दो भागों में छपवाया था उसका यज्ञ के पंश्चात् पाठ करता था। इसी प्रकार हर वर्ष एक ग्रन्थ का पूर्ण स्वाध्याय हो जाता था, उसमें सत्यार्थप्रकाश, ऋग्वेदादिभाष्य–भूमिका, स्वाध्याय–संदोग, वैदिक विनय, दीनानाथ दिनेश की काव्यार्थ गीता आदि ग्रन्थों का स्वाध्याय करता रहा, १९५७ के जून मास की बात है उस समय मैं दीनानाथ दिनेश की गीता का पाठ कर रहा था, यज्ञ के समय मेरा बच्चा अश्विनी कुमार जो इस समय २ वर्ष का था गोदी में बैठा रहता था, अनायास बहुत तेज घटा उठकर आई, बिजली कड़कने लगी, मैंने छोटे भाई राजेन्द्र नाथ को आवाज दी कि वह आकर अश्विनी को नीचे ले जाये, वह उतर कर जीने में ही पहुँचा था कि उसी क्षण बहुत जोर से बिजली कड़की और मेरे सामने लगभग २ फुट की दूरी पर बहुत ऊँची एक सफेद लपट दीखी, सामने बिजली का फिटिंग था उसमें आग लग गई मैंने कहा–मेन स्विच बन्द करो बिजली में आग लग गई है। राजेन्द्र नाथ ने देखा मेन स्विच और कटाउट दोनों के टुकड़े–टुकड़े हो गये। यदि घर पर बिजली न होती तो मकान की छत बैठ सकती थी। आकाशीय बिजली को घर की बिजली ने खींच कर नीचे फेंका, परिणाम स्वरूप मोहल्ले के सभी मीटरों के फ्यूज उड़ गये।

१९५८ के जौलाई मास में पत्नी अश्विनी को लेकर सम्भल दर्शन बाबू की बहिन के विवाह में गईं थीं, मैं घर पर ऊपर

टीन में सो रहा था, रात्रि में बहुत तेज वर्षा होने लगी, वर्षा के साथ आँधी भी चल रही थी, नीचे जाने का विचार बनाया और पुराना कम्बल उठाया, सोचा कहीं उसमें पैर न उलझ जाये, दूसरा कम्बल उठा कर ओढ़ा उसी समय अति तीव्र आँधी का एक झोका आया, उसी के साथ बराबर के मकान की टीन उड़कर मेरे सामने आकर गिरी, छत में एक इंच गहरा गड्ढ़ा पड़ गया, मैंने सोचा प्रभु जी तेरी क्या लीला है यदि मैं कम्बल नहीं बदलता तो यह टीन मुझे ही काट देती, परन्तु तुझे मेरी रक्षा करना अभिष्ट थी इसी कारण मेरे मन में पुराने कम्बल में पैर उलझ ने की शंका उठाकर कुछ क्षणों की देरी कर दी और मैं बच गया। □□

नया उद्योग और पुत्र की हत्या

कठोर परिश्रम किया, अपनी आर्थिक स्थिति को सुद्रढ़ बनाया। प्रभु जी ने भी मेरी सहायता की और मैंने समाज में अपने को स्थापित किया। १९६८ से १९७४ के बीच कठोर परिश्रम का फल मिलने लगा। १९७६ में अश्विनी के लिये एक नया उद्योग लगाने का विचार बना और देहली से पेपर बैग मशीन खरीदी और कुछ धन यू. को. बैक से ऋण लिया। व्यास कुटि के पास मधुकर चौवे जी का फाटक किराये पर लिया, उसकी मरम्मत कराई और होली पर रंग वाले दिन मशीन आकर फाटक में उतरी। उसी समय समाचार मिला कि बाबूराम रस्तौगी बेसन वालों का धेवता देहली में रंग खेलते हुए ऊपर छत से नीचे गिरकर समाप्त हो गया। मशीन खोलकर रखी गई, ३—४ दिन के पश्चात् मैकेनिक आया, मशीन फिट करी, जैसे ही मशीन चालू करने के लिये स्विच दबाया उसी समय समाचार मिला पड़ोस में रहने वाले राजकुमार कोढ़िया का स्वर्गवास हो गया। मशीन में एक कटिंग का पार्ट कम था उसे मंगवाया गया, लगभग २ मास के पश्चात् वह भाग आया, जब वह

फिट किया जा रहा था तो समाचार मिला मुण्डेशाह के बड़े पुत्र कामेश्वर इलाके जाने के लिये बस पर चढ़ते—चढ़ते वहीं गिर पड़े और मृत्यु हो गई। इस प्रकार जब—जब मशीन का कार्य होता था तब—तब कोई न कोई अपशकुन सामने आकर खड़ा हो जाता था। जैसे—तैसे करके मशीन चालू हुई तो उस समय मेरा सीधा हाथ मशीन के रूले में आ गया। रात्रि का समय था मशीन में से हाथ निकालने के लिये मशीन अश्विनी ने बन्द करी, रमेश चन्द्र जैन वहीं खड़े थे, उनको अचेतना आने लगी, मैंने तेज आवाज से कहा क्या है? जैन साहब चौंक कर सावधान हुए और मशीन के रूले को खोलने के लिये हाथ लगाया, मैंने कहा—यह नहीं नीचे का खोलो, नीचे का रूला हटा मैंने मशीन से हाथ निकाला, कपड़ा लगाकर रक्त को रोका और उसी समय डा० फईम सर्जन से टाँके लगवाने चला गया। डा० ने कहा—बेहोशी का इन्जैक्शन लगा दूँ? मैंने कहा—नहीं। उसने पानी से धोया और टाँके लगा दिये। डा० ने कहा—पण्डित जी बड़े हिम्मत वाले हो।

इसी प्रकार हर बार अपशकुन होते रहे। अन्तिम दुर्घटना २०/९/१९७६ सोमवार को अश्विनी का अपहरण हुआ और मामा द्वारा विषपान करा दिया। सायंकाल के समय बाबू रामेश्वर प्रसाद जी रंग वालों के घर पर जगत नारायण जी, जो सी० एल० गुप्ता के यहाँ मुनीम थे उनका फोन आया कि उनके पीछे बाग में पैट्रोल पम्प के पास वीरेन्द्र नाथ कागज वालों के लड़के का शव पड़ा है, वह मेरे पास दुकान पर कहने आये, मैं और बाबू रामेश्वर प्रसाद जी उस स्थान पर पहुँचे। वहाँ से पुलिस पहले ही शव को लेकर अस्पताल पहुँच गई थी, वहीं पर हरि बाबू भी आ गये थे, स्वाँस चल रही थी, हरि बाबू के कहने पर हृदय में इन्जक्शन भी लगवाया, परन्तु परिणाम कुछ नहीं निकला और वह अश्विनी कुमार हम सबको बिलखता छोड़ कर रात्रि के ९ बजे सदैव के लिये चला गया। अगले दिन पोस्टमार्टम होकर शव मिला। ☐☐

पुरुषार्थी महिला

मेरे विवाह के १।। वर्ष के पश्चात् ही ससुर श्री बाबू लक्ष्मी नारायण जी का स्वर्गवास हो गया था। घर में आय का साधन समाप्त हो गया। चार पुत्र और दो पुत्रियों की शिक्षा और विवाह आदि के लिये अभी शेष थीं। हमारी सासु जी श्रीमती पार्वती देवी के कन्धों पर ही सारा भार आ गया। गृह में ही कुटीर उद्योग में अत्यन्त पुरुषार्थ के साथ बच्चों की शिक्षा और विवाह की व्यवस्था की। श्रीमती पार्वती देवी अत्यन्त पुरुषार्थवान और सन्तोषी महिला थीं। बड़े पुत्र रमेश लोको शेड़ रेलवे में भरती हो गये। इन्होंने अपने भाँन्जे अश्विनी की विष दिला कर हत्या कर दी। इनके तीन पुत्र हैं १—अनिल २—अजय जो वकील है। ३— सुनील है। राजेश नेवी (जल) सैना में भरती होकर विजिगापटनम चले गये। विक्रान्त युद्ध पोत लेने लन्दन गये और उसी पर उनकी नियुक्ति भी रही। गोआ, दमण, दीव में पुर्तगाल से युद्ध होने पर उसमें भाग लिया। इनकी पत्नी श्रीमती सुधा गुप्ता एक उत्तम आर्टकला में प्रवीण हैं। इनका अब स्वर्गवास हो गया। इनके दो पुत्र हैं १—निशित जो न्यूजीलैण्ड में है। २— रोचक सर्विस में है। सुरेश अग्रसेन इण्टर कॉलिज में अध्यापन कार्य करते रहे। छात्रों को बड़े परिश्रम से पढ़ाते थे। इनकी पत्नी श्रीमती मनोरमा जी बहुत योग्य अध्यापिका महामहिम राष्ट्रपति महोदय द्वारा पुरस्कृत और सामाजिक कार्य कर्त्ता हैं। इन्होंने विपत्ति के समय अपने पति की खूब सेवा कर के उनको मृत्यु से बचा लिया। यही आदर्श नारी के लक्षण हैं। इनके दो पुत्र हैं — १— विवेक जो तीन वर्प तक कम्प्यूटर इन्जीनियर के रूप में अमरीका में रहा था। २— अमित जो हैदराबाद में एम.बी.ए. की शिक्षा पूरी करके वहीं सर्विस में लग गया। नरेश, गुलाबबाड़ी चुंगी कुमर बहादुर के पास चक्की का उद्योग लगाा हुआ था, उस पर अपने चाचा श्री राम चरन जी के साथ काम करने लगा। उसका अभी विवाह नहीं हुआ था। बिलारी बस स्टैण्ड पर उसे पान में विष दे दिया था, उसी में उसकी मृत्यु हो गई।

बड़ी पुत्री राजेश्वरी देवी का विवाह बाबू जी मेरे साथ कर गये थे। दूसरी पुत्री विश्वेश्वरी का विवाह सम्भल के सेठ श्री यशपाल जी के साथ हुआ उनके पुत्र राजीव सम्भल में ही कार्य कर रहे हैं, तीसरी पुत्री—सरोज का विवाह बदायुँ निवासी श्री आत्म प्रकाश जी के साथ हुआ। उनके दो पुत्र हैं १—आदित्य कपड़े की दुकान पर ही बैठता है। दूसरा—विक्रम गुड़गाँवा में हौण्डा स्कूटर फैक्ट्री में मैकेनिकल इन्जीनियर के स्थान पर कार्य कर रहा है। □□

वर की खोज

सुपुत्री इन्दिरा के लिये सुयोग्य वर की खोज के लिये १९८१ के प्रारम्भ से ही विचार बना, इस सम्बन्ध में देव योग से हसनपुर दूध वालों के यहाँ से समाचार मिला कि हम सम्बन्ध के लिये तैयार हैं। मैं तत्काल चौ. वीर सिंह जी को साथ लेकर उनके घर गया। लड़की को देखने का कार्यक्रम बना, सबने स्वीकृति प्रदान की और सम्बन्ध निश्चित हो गया। मैं अगले दिन तिलक आदि लेकर गया, उस समय गणेश मिस्ठान भण्डार के स्वामी श्री रामेश्वर दयाल जी भी उपस्थित थे मैंने सबके टीके आदि दिये। श्री रामेश्वर दयाल जी ने मुझ से प्रश्न किया—क्या आप हमें जानते हैं? मेंने कहा—मैं आपको तीन प्रकार से जानता हूँ पहले १९४७ में आर्य वीर दल की शाखा के सैनिकों के साथ हन्टिंग करते समय यदा कदा आपकी दुकान से जलेबी लेकर सब खाते थे। दूसरे हमारे फुफेरे भाई श्री रामभरोसे लाल जी के पुत्र का विवाह आपकी कन्या से हुआ है, और तीसरा यह आज सम्बन्ध बना है। इस पर उन्होंने भेंट लेने से मना किया, परन्तु मैंने उनकी श्रीमती जी को भेंट दी। सीताराम जी ने भोजन के भोज्य पदार्थों का सारा विवरण बनाकर मुझे दिया। मैंने एक

निवेदन किया कि मैं भोज के पश्चात् सिगरिट आदि से स्वागत नहीं कर सकूँगा, यदि आपको किसी को सिगरिट आदि देने हैं तो वह आप ही स्वयं देंगे।

२६ जून १९८३ को विवाह संस्कार होना निश्चित हुआ, बारात चढ़कर आई, बारात के आने में एक घन्टे की देरी होने की सम्भावना को देखते हुए श्री सीताराम जी ने मेरे पास समाचार भेजा कि बारात आने में एक घन्टे की देरी हो सकती है, मुझे मालूम है कि आप समय के पाबन्द हैं, इसीलिये आपको यह सूचना भेजी है। संस्कार अमरोहा के डा० सत्य प्रिय जी ने कराया। कुछ वर्षा की बाधा आने लगी और प्रभु कृपा से सबकार्य पूर्ण सम्पन्न हो गया। ☐☐

अभाव की पूर्ति

पुत्र वियोग से मन हर समय बड़ा ही विचलित रहता था। हर समय अपने आपको बेसहारा ही समझता रहता था। प्रभु जी ने मुझे पुत्र देकर उसे वापिस ले लिया और मैं पुत्र विहीन हो गया, परन्तु एक सन्तोष रहा कि मेरी पुस्तक "इच्छानुसार सन्तान" और "सूर्य गुणी" औषधि के द्वारा सम्पूर्ण भारत वर्ष में अब तक लगभग तीस हजार से भी ऊपर परिवार पुत्र की किलकारियों से गूँज रहे हैं।

पुत्री के विवाह के पश्चात् हमारे दामाद श्री वीरकान्त जी ने हम दोनों का अत्यन्त स्नेह पूर्ण ध्यान रखा, कि अब हम पुत्र के अभाव को भूल से ही गये हैं। इनके तीन बच्चे नेहा, वर्त्तिका और पुष्पांक जो हर समय घर पर आते जाते रहते हैं और किसी भी कठिनाई को सामने नहीं आने देते, हर समय, हर सहायता के लिये तत्पर रहते हैं। इन सबने मिलकर मेरे निराशापूर्ण जीवन को फिर से हरा भरा कर दिया। ☐☐

—

तुलना

तुलना से भी व्यक्तित्व निखरता जाता है। तुलना के बिना कभी व्यक्तित्व का मूल्यांकन नहीं हो पाता। इस प्रकार तुलना स्वयं में एक कसौटी है। वर्षों तक दाम्पत्य जीवन चलता चला जाता है, इसमें कोई न्यूनता या विशेषता नहीं दीखती। जब दूसरा पात्र घर में प्रवेश करता है तो उसके व्यवहार से स्वयमेव तुलना होने लगती है, तब अच्छे या बुरे व्यवहार स्वतः तुला पर पहुँच जाते हैं। श्री वीरकान्त जी स्वयं कह रहे थे कि इन्दिरा प्रातःकाल से उठकर रात्रि सोते समय तक इतनी व्यस्त रहती है कि मैं अचम्भित रह जाता हूँ कि इसमें कितनी सामर्थ्य है। तीनों बच्चों के लिए उनकी इच्छा के अनुसार नाश्ता तैयार करना, कोई ब्रेड पकोड़े चाहता है तो कोई फूल गोभी के तो कोई बैंगन के चाहता है, सबको उसी अनुसार तैयार करके देना स्कूल के लिये भी लन्च तैयार करके देना और मेरे लिये भी तैयार करके देना। भोजन के समय मैंने देखा बच्चों की इच्छानुसार दाल सब्जी तैयार करना। तीनों बच्चों को एक—एक फुलका गर्म—गर्म देना हाथ रोककर फुलका सेकना, किसी को भी ठण्डा नहीं देना। और मुझे भी मेरी रुचि के अनुसार भोजन देना। इन्दिरा के हाथ का बना भोजन और पकवान आदि अति स्वादिष्ट बनता है। सबसे अन्त में जो शेष रहा वही एक थाली में लेकर स्वयं खाकर सुख का अनुभव करना। मुझे इस बात की अनुभूति तब हुई जब मैंने देखा अन्य परिवारों में पति और बच्चों के लिये भोजन तैयार करके उसे हॉटकेस में रखा और घूमने निकल जाना। जो आये वह भोजन निकालकर स्वयं खालें। कितना बड़ा अन्तर है। श्री वीरकान्त जी ने कहा—यह आपके ही दिये संस्कार हैं। शिक्षा; भाषा के अनुरूप होती है। भाषा से साहित्य, साहित्य से संस्कृति का ज्ञान, और संस्कृति से संस्कार बनते हैं।

मेरी पत्नी की रीढ़ की हड्डी में चोट लगी, एक दम बिस्तर पर डेढ़मास का पूर्ण विश्राम। उसके पश्चात् बाई जंघा की हड्डी में बाल पड़ गया और कच्चा प्लास्टर चढ़ गया, एक मास के लिये। दाई जंघा कैी माँस पेशियाँ फट गईं। १५ दिन का विश्राम और अब १४ जनवरी २००४ को पुन: बाई जंघा की हड्डी में बाल पड़ गया और एक मास का पूर्ण विश्राम हो गया। हर विषम परिस्थिति में श्री वीरकान्त जी तथा मेरी बेटी इन्दिरा तीनों बच्चों सहित आकर पूर्ण सहयोग करते रहे। इस व्यवहारिक पूर्ण उपकार को कैसे भुलाया जा सकता है?

प्रभु जी इन पर कभी कोई विपत्ति न आये, यह सदैव सुखी और सम्पन्न रहें, तीनों बच्चों को अच्छे सुपात्र मिलें, इनके जीवन में कभी कोई पाप कर्म प्रवेश न करे, सदैव प्रगति के पथ पर आगे बढ़ते रहें।

क्या अपने बड़ों की सेवा करना उपकार कहलाता है? हाँ! संकट के समय जो काम आये वह उपकारी ही कहलाता है, चाहे वह बड़ा हो छोटा हो या अपने बच्चे ही क्यों न हों। देखा गया है कि उपकार की परिणति अपकार से ही होती है, कृतज्ञता से नहीं। हम कृतघ्नी क्यों बने। उपकार की परिणति रूप उपकार को स्वीकार करते हुए कृतज्ञता अवश्य ही व्यक्त होनी चाहिये। यही मानव धर्म है। □□

किराये का मकान

४/८/१९६८ को मैं अपने पैतृक मकान के अधिकार मे वन्चित होकर व्यास कुटि में चला आया था। कुछ वर्षो के पश्चात् ईर्ष्यालुओं ने नरोत्तम व्यास जी को भड़काना आरम्भ कर दिया, परिणाम स्वरूप उन्होंने मकान खाली कराने के लिये न्यायालय में वाद प्रस्तुत कर दिया। हर तारीख पर मैं व्यास जी को अपने साथ ही कचहरी रिक्शा में बैठा कर ले जाता था। कई व्यक्तियों ने

कहा—आप ऐसा क्यों करते हैं? मैंने कहा—वह वृद्ध हैं सम्मान के योग्य हैं, इसलिये मैं उनको साथ ही ले जाता हूँ और रिक्शा के पैसे भी मैं ही देता था, यह मेरी मानवता है मेरे पूर्व के सम्बन्ध हैं, बाद तो केवल अधिकार मात्र की ही बात है। इसी बीच २०/९/१९७६ को अश्विनी की हत्या हो गई। मुझे परामर्श दिया गया कि इस हत्या में व्यास जी को लपेट लिया जाय, मैंने मना कर दिया और कहा—यह सर्वथा अनुचित और अन्याय पूर्ण ही होगा। १९७७ शरद ऋतु में एक दिन व्यास जी मुरारी व्यास के घर भोजन करके लौट रहे थे, व्यास कुटि में जीने के ऊपर चढ़े, नीचे के जीने की कुण्डी लगा दी और ऊपर जाने के लिये अपने जीने की कुण्डी खोलने के लिये ऊपर पैरी पर चढ़े और वहीं अचेत होकर गिर पड़े। घर पर मेरी पत्नी और इन्दिरा ही थी। उन्होंने कमरे में से जीने का रास्ता खोल, मुरारी व्यास के घर गई और व्यास जी के बेहोश हो जाने की खबर दी। सब जने आ गये और उन्हें मेरे कमरे में लिटा दिया। वह हृदय गति रूक जाने के कारण मर चुके थे। पेंरमात्मा की मेरे ऊपर ऐसी कृपा हुई कि उन्होंने नीचे के जीने की कुण्डी लगा दी थी। यदि वह खुली होती तो व्यास जी लुढ़ककर नीचे जा पड़ते और मेरे ऊपर आरोप आ जाता कि व्यास जी को जीने से धक्का देकर मार दिया। तीजे के दिन पारकर स्कूल के टीचर कुण्डली मार मदन व्यास का पुत्र राका अपने साथ कई लड़कों को लेकर मेरे घर पर आक्रमण करने लगा, घर पर मेरा छोटा साला नरेश था, उसके कई चाकू लगे, मैं दुकान पर था, घर पर पुलिस आई और सबको पकड़ कर ले गई। मकान खाली करने का विचार बना लिया। मकान की खोज करने लगा। किसरौल में हरिदत्त शास्त्री के मकान के पास पं० बाबूराम जी रहते थे, वह मेरे पास आया करते थे। एक दिन मदन व्यास और सुरेश दत्त पथिक एक साथ जा रहे थे, उस समय पं० बाबूराम जी ने कहा—वीरेन्द्र जी आर्य हैं, सज्जन हैं। इस पर पथिक जी ने कहा—आर्य हैं तो क्या बामनो का माल खा जायेगें? इस प्रतिक्रिया को देखकर पं० बाबूराम जी चुप होकर चले आये और मुझे सारी चर्चा बताई।

१९७७ के जौलाई मास में नरोत्तम व्यास जी हरिद्वार चण्डी देवी, नीलकण्ठ की यात्रा कर के रात्रि में घर लौटे, टाँगें, पैर बहुत सूज रहे थे, जैसे तैसे ऊपर चढ़कर अपने कमरे में गये। मैंने पत्नी से पानी गर्म कराया उसमें नमक डालकर पैरों की सिकाई की और बाद में तेल मल कर कहा—आप अब नीचे न उतरें दो दिन आराम करें, पैर ठीक हो गये। उस समय व्यास जी ने कहा—मेरे पुत्र सन्तोष ने आज तक मेरे पैरों को हाथ तक नहीं लगाया, एक आप हैं जो सिकाई कर तेल मल कर मेरे पैरों को ठीक कर दिया। यह चर्चा उन्होंने अपनी डायरी में भी नोट की थी, उसे पढ़कर ही सन्तोष ने मुझे सुनाया था। (कुन्डली लिखने के कारण सखा उन्हें इसी नाम से पुकारते थे।)

कुण्डली मार मदन व्यास ज्ञानेन्द्र शर्मा, एडवोकेट से मिले और कहा—व्यास जी की मृत्यु हो गई है, हम इसमें उनके किरायेदार को फँसाना चाहते हैं, इसकी कोई युक्ति कीजिये। ज्ञानेन्द्र शर्मा जी ने कहा—किसको फँसाना चाहते हैं? मदन व्यास ने मेरा नाम (वीरेन्द्र नाथ) बताया, उस पर ज्ञानेन्द्र शर्मा जी ने उसी क्षण मनाकर दिया और कहा मैं ऐसे सीधे सज्जन को झूठे आरोप में नहीं फँसाऊँगा। जबकि ज्ञानेन्द्र शर्मा जी को मैं नहीं जानता था। परन्तु वह मुझे साहित्य के नाते से जानते थे।

१९७८ में व्यास कुटि को छोड़कर परमेश्रीदास के मकान में चला गया। कुछ काल तक शान्ति बनी रही और २६ जून १९८३ को इन्दिरा का विवाह कर दिया। इन्दिरा के विवाह के पश्चात् ही परमेश्री ने घर में लगे हत्ती के नल से पानी भरना बन्द करा दिया, बिजली काट दी और शौचालय में भी ताला डाल दिया। यह कुचक्र तीन वर्ष तक चलता रहा। शौच और स्नान के लिये नित्य प्रातः पहले पत्नी राजोगली छोटे भाई के घर जाती और जब वह निबट कर आती तो मैं जाता था। छोटे भाई और उनकी पत्नी का इस संकट काल में बहुत बड़ा सहयोग रहा। इस रक्षात्मक सहयोग को कभी भुलाया नहीं जा सकता। परमात्मा की मेरे ऊपर यह बहुत बड़ी कृपा हुई कि इन्दिरा के विवाह के पश्चात् ही परमेश्रीदास ने यह व्यवहार

किया, नीचे एक कोठरी में सील मशीन, ड्रिल मशीन, नींव के पत्थर पुस्नकें, कागज, मलट, लिहाफ गद्दा रखे थे। परमेश्री के पुत्र सुरेश ने विवाह के अवसर पर मेरी अनुपस्थिति में ताला तोड़ कर सब सामान गायब कर दिया। रमेश चन्द्र जैन और प्रेम नारायण महरोत्रा वकील ने इस चोरी की रिपोर्ट तक नहीं लिखवाने दी। परेशानियाँ बढ़ती रहीं। मेरे ऊपर आक्रमण भी कराने की योजना बनी परन्तु छोटे भाई राजेन्द्रनाथ के रक्षा उपायों के कारण और प्रभु कृपा से मैं बचा रहा। इस सभी झंझट में काफी पैसा बरबाद हो रहा था। कई मकान देखे, हर मकान में प्रेम नारायण महरोत्रा वकील और जैन साहब कीड़े ही निकालते रहे। पी टी सी. ट्रेनिंग कालेज के मनोविज्ञान के प्रोफेसर श्री सेवाराम जी की मेरे ऊपर बड़ी ही कृपा रहती है, एक दिन सेवाराम जी रघुवीर सरन सक्सैना जैन साहब और मैं वकील साहब के घर पर गये। सेवाराम जी ने कहा—वकील साहब आज निश्चय करना है कि मकान खरीदना है या नहीं? वकील साहब ने कहा—हाँ खरीदना है परन्तु ऐसा—वैसा नहीं! सेवाराम जी और रघुवीर सरन जी ने कहा यह निश्चय हुआ कि मकान खरीदना है। वकील साहब ने कहा—मकान के कागज मुझे दिखा देना। सबने यह स्वीकार किया और चले आये।

एक दिन रात्रि को वर्षा होने लगी सुरेश ने जीने की कुण्डी लगा दी, शौचादि को जाने का मार्ग बन्द कर दिया। बराबर में जैन साहब के घर से होकर जाना पड़ा, मैं श्री राम अवतार जी रम्मन बाबू के घर गया, उन्होंने सुरेश को बुलाकर कहा—और जीने की कुण्डी खुल गई। उसी रात इस संकट को देखकर मन बड़ा दुःखी हुआ और प्रभु से प्रार्थना करी कि, हे प्रभु जी! अब इन सभी संकटों को एक साथ ही दूर कर दो। उसी रात स्वप्न में एक वेद मन्त्र सामने आया। मैं प्रातः उठकर यज्ञ करने लगा उसी समय ध्यान आया कि रात एक मन्त्र स्वप्न में आया था, दुकान पर आकर वेद में से मन्त्र निकाला, मन्त्र था यजुर्वेद का २/२० लिखकर याद किया और अगले दिन से ही गायत्री जाप के साथ उसका भी जाप शुरु कर दिया। परिणाम स्वरूप अगले ही दिन रात्रि को ८ बजे श्री वीरकान्त जी ने दुकान

के सेवक को भेजा, मैं उस समय बाहर सड़क के नल से पानी भर रहा था। मैं दुकान पर पहुँचा, कहने लगे एक मकान देखा है, उसे आप देख लें। मैंने कहा—मेरी बुद्धि इस समय काम नहीं कर रही, आप जो ठीक समझें वही कर लें। उन्होंने कहा—कल प्रातः आकर एक बार मकान देख लो। मैं प्रातः गया मकान देखा, ठीक पाया और चर्चा आगे बढ़ाने को कहा—प्रभु कृपा से १९८६ में श्री कृष्ण जन्माष्टमी के दिन जीलाल मोहल्ला छोड़कर अपने स्थायी आवास में चला आया। इसमें आर्य श्रेष्ठ प्रोफेसर सेवाराम जी त्यागी का भरपूर सहयोग रहा।

महामुनि चाणक्य ने सही कहा—जब जुड़ने का समय आता है तभी कुछ जुड़ पाता है, अन्यथा अनेक प्रयत्न करने पर भी नहीं जुड़ पाता। १९७४ में खरीदा गया सोना और इससे पूर्व खरीदी गई भूमि १९८६ में मकान खरीदने में काम आई। □□

विपत्ति और समाधान

घर से पृथक होने के पश्चात् दुकान को ठीक—ठाक किया, कई पेटियों में दीमक लग जाने से बहुत हानि भी हुई। इसी कारण दुकान की मरम्मत करने का विचार बना। बिलारी स्टेट की रानी प्रीतम कुमर और जयदेवी के बीच मुकदमा चल रहा था। सारी सम्पत्ति पर रिसीवर नियुक्त था। श्री कामेश्वर नाथ मिश्रा जी एडवोकेट गऊशाला के प्रधान थे और मैं मन्त्री था। सोच रहा था कि मुझे यह सही और उचित परामर्श अवश्य देगें, इसी आशा से मैं श्री कामेश्वर नाथ मिश्रा जी से मिला और कहा कि मैं दुकान की मरम्मत कराना चाहता हूँ। उन्होंने एक प्रार्थना पत्र लिखकर दिया और कहा इसे टाइप कराकर ले आओ, आपको मरम्मत की आज्ञा मिल जाएगी। मैंने उसे बाबू रामेश्वर प्रसाद जी रंग वालों को दिखाया, इसे देखकर उन्होंने कहा—इसे पहले दूसरे वकील को दिखालें। वह मुझे

साथ लेकर श्री लक्ष्मीनारायण सोती एडवोकेट के पास ले गये। उन्होंने उसे पढ़ा और कहा इसे नहीं देना, इसके देने से आप दुकान से बेदखल हो जायेंगे। कामेश्वर नाथ मिश्रा जी जयदेवी के वकील थे, उन्होंने अपने स्वार्थ के वश होकर अपने केस की पूरी चर्चा इस प्रार्थना पत्र में कर दी थी, जो मुझे दुकान से बेदखल भी करा सकती थी। मैंने उसे टाइप नहीं कराया। वर्तमान रिसीवर श्री हरनन्दन स्वरूप भटनागर की ओर से जो मुन्शी जी मुझ से किराया लेने आते थे, मैंने उनसे चर्चा करी, मुन्शी जी ने कहा—पहले आप दुकान का किरायानामा बदलवा कर अपने नाम कराओ बाद में मरम्मत की भी आज्ञा मिल जायगी। मैं प्रात: ही गुरहट्टी चौराहे पर रिसीवर महोदय के पास गया, वहाँ पर मुन्शी जी मौजूद थे। उन्होंने वकील साहब से कहकर, किरायानामा मेरे नाम का करा दिया और मरम्मत की भी अपने व्यय से कराने की आज्ञा भी दे दी गई। मैंने दशहरे के अगले ही दिन दुकान की मरम्मत का कार्य छेड़ दिया। एक दिन रात्रि को श्री कामेश्वर नाथ मिश्रा जी दुकान की ओर से निकल कर जा रहे थे, और मुझे देख कर एक व्यंगात्मक नमस्ते करी। अगले ही दिन जय देवी के मुन्शी को मेरे पास भेजकर मरम्मत का काम रोक देने की धमकी दी। मैंने कहा मुझे मरम्मत कराने की आज्ञा मिल चुकी है। कुछ दिन पश्चात् मेरे पास तार द्वारा सूचना भेजी कि दुकान की मरम्मत रोक दो। मैं चौधरी श्यामसुन्दर वकील के शिष्य श्री सत्यप्रकाश वकील से मिला, उन्होंने कहा—आप तार के पोस्टमैन को २—४ दिन के लिये टाल दो और मरम्मत का काम शीघ्रता से पूरा कर लो। मरम्मत का कार्य पूर्ण हो गया, तार आया और मैंने उसे ले लिया।

कुछ काल के पश्चात् रानी प्रीतम कुमर का स्वर्गवास हो गया और जयदेवी और राजकुमारी इन्दिरा मोहिनी इन दोनों में समझौता हो गया और सारी सम्पत्ति का विभाजन भी हो गया। मेरी दुकान राजकुमारी इन्दिरा मोहिनी जी के पास पहुँची। उन्होंने छोटी—छोटी सम्पत्तियों को बेचने का विचार बनाया, साथ में यह भी विचार बनाया

कि जो सम्पत्ति जिसके पास है, पहले हम उसी के हाथ सौदा करेंगे। यह समाचार मेरे पास भी आया कि सौदे का पूरा धन लेकर बीस पैसे का रसीदी टिकट लगाकर रसीद दी जा रही है। यह बात मेरे गले नहीं उतरी, मैं नहीं गया। १९७३ की जुलाई मास में मेरी दुकान पर राजकुमारी इन्दिरा मोहिनी का सर्वेकार मेघराज सिंह आया और कहा—आपको ३६ बार बुलाया गया आप नहीं आये। मैंने कहा यह झूठ अपनी रानी को ही बताना तुम मेरे पास आज पहली बार आये हो। सर्वेकार ने कहा हम दुकान किसी और को बेच देंगे। मैंने कहा—मुझे कोई हटा नहीं सकता। इस पर वह चला गया।

नमक मिर्च मिला कर सर्वेकार ने राजकुमारी इन्दिरा मोहिनी के कान भरे, उस समय पर उनके पास साहू प्रेम दर्शन जी भी बैठे थे। उन्होंने कहा—वह ऐंसे व्यक्ति नहीं हैं आपको कोई भ्रान्ति हुई होगी। इस पर राजकुमारी इन्दिरा मोहिनी ने कहा कि आप ही स्वयं इसे निबटा दें। साहू प्रेम दर्शन जी ने कहा मैं इसे निबटा दूँगा। अगले दिन साहू प्रेम दर्शन जी ने मुझे बुलाया और सारी बात बताई, मैंने भी अपनी शंका व्यक्त कर दी। इस पर साहू प्रेम दर्शन जी ने कहा—कल आप उनको पैसा भिजवा दें। मैं अगले ही दिन प्रात: को ही सारा पैसा साहू प्रेम दर्शन जी को दे आया और उन्होंने राजकुमारी इन्दिरा मोहिनी को टेलीफोन पर बता दिया कि दुकान का सौदा पक्का कर दिया है और पैसा भी मेरे पास आ गया है, मैं आपके पास आकर पैसा दे दूँगा। इसी बीच शिवकुमार सरकड़े वाले ने जाकर एक हजार रुपये बढ़ाकर सौदा करना चाहा, परन्तु राजकुमारी इन्दिरा मोहिनी साहू प्रेम दर्शन जी को पहले ही वचन दे चुकी थीं। इस कारण उन्होंने शिवकुमार सरकड़े वाले से मना कर दिया।

रजिस्ट्री वाले दिन मुझे और मेरी गृहणी को अपने साथ कार में बैठाकर स्वयं ही रजिस्ट्री कार्यालय ले गये थे। जैसे ही हनारी कार पहुँची उसी समय पर ही राजकुमारी इन्दिरा मोहिनी की भी कार आकर वही पास में ही रुकी, यह देखकर कि साहू प्रेम दर्शन जी स्वयं अपने साथ कार से लेकर आये हैं तो यह कोई विशेष परिचित

ही होंगे। इस प्रकार साहू प्रेम दर्शन जी के पूर्ण सहयोग से १५/९/१९७३ को दुकान की रजिस्ट्री मेरी गृहणी श्रीमति राजेश्वरी देवी के नाम हो गई। साहू प्रेमदर्शन जी के इस उपकार को भुलाया नहीं जा सकता। इस प्रकार दुकान की विपत्ति का समाधान सदैव के लिये हो गया। □□

शिक्षा और प्रेरणा

१९३६ में कारोनेशन हिन्दू इन्टर कालेज में तीसरी कक्षा से मेरी पढ़ाई का प्रारम्भ हुआ इससे पूर्व डी०पी० पब्लिक इंगलिश स्कूल एवम् आर्य समाज की बलदेव आर्य संस्कृत पाठशाला में पढ़ता था। पढ़ाई में ध्यान कम और खेल में ध्यान अधिक लगा रहता था, इसी कारण एक एक कक्षा को पास करने में तीन—तीन वर्ष लग गए, इसी विद्यालय में मेरे बड़े भाई भी पढ़ते थे इस कारण कई अध्यापक पिता जी से परिचित थे, उनमें से एक स्काउट मास्टर श्री सोती जी ने दुकान पर आकर पिता जी से कहा—इसकी बुद्धि निर्बल है इसे ब्राह्मी आदि दें। मुझे श्री सोती जी का नाम ही नहीं मालूम था, मैंने श्री राजेन्द्र चन्द्र सोती जो पारकर स्कूल में अध्यापक थे उनसे मालूम किया, उन्होंने शौराज किशन सोती नाम बताया, मैंने श्री उमेश चन्द चतुर्वेदी जो राजकीय माध्यमिक विद्यालय में अध्यापक थे उनसे मालूम किया तो उन्होंने बताया सुशील कुमार सोती। सन्तोष नहीं बना तो मैंने श्री आर.सी. अग्रवाल जो हिन्दू कालेज में ही थे उनसे मालूम किया तो उन्होंने कहा—स्कूल में एस.के. सोती नाम से ही जाना जाता था और इसी में दोनों नाम भी निहित हो जाते हैं।

१९३८ में श्रद्धेय तनसुखराय भाल अध्यापक जो शनिवार के दिन चौथी कक्षा में अन्तिम घन्टे में वाक् प्रतियोगिता, कविता पाठ आदि कराते थे। उन्होंने एक बार सभी छात्रों से कहा—सब जने अपनी—अपनी आँखें बन्द कर लें, कोई भी नहीं खोलेगा, और

कहा—आज जो बच्चे स्नान नहीं करके आये हैं वह चुपचाप खड़े हो जायें, पश्चात् बैठ जाने को कहा, फिर कहा—अब वह बच्चे खड़े हो जायें जिन्होंने स्कूल आते समय अपने माता पिता से नमस्ते की है, बैठ जायें, आँखें खोल लें। किसी को नहीं बताया कौन खडा हुआ कौन नहीं सब गुप्त रखा, इसी प्रकार के कार्यों के मध्य सभी विद्यार्थियों को आर्य कुमार सभा में जाने के लिये प्रेरित करते थे। मेरे ऊपर पैतृक संस्कारों का प्रभाव था ही, इससे और अधिक पूर्व के संस्कारों को बल मिला और उनकी प्रेरणा से मैंने आर्य कुमार सभा में जाना आरम्भ कर दिया। बड़े भाई ने एक कविता छोटी सी, सुनाने के लिये, मुझसे याद करने को कहा, पूरे सप्ताह याद करता रहा, कुमार सभा के सत्संग में जब कविता सुनाने गया तो उस समय मेरी जो अवस्था बनी वह बहुत घबराहट की थी अन्दर मन ही मन सोच रहा था यह क्या विपत्ति आई, जैसे तैसे मन्च पर गया कविता पूरी याद थी परन्तु घबराहट के मारे केवल दो लाइनें ही याद रहीं, उन्हीं को कह कर मैं उठकर चला आया तब कुछ जान में जान आई।

१९३९ में चौथी कक्षा पास करके पाँचवी कक्षा में आया, उसमें अंग्रेजी का घन्टा श्री तनसुखराय भाल का था, अंग्रेजी पढ़ाना और घर के लिये कार्य देना, इसी प्रकार तीन मास व्यतीत हो गये, त्रैमासिक परीक्षा का समय आया भाल साहब ने सबकी कापियाँ देखीं कोरी थीं, किसी ने भी कुछ काम नहीं किया था। भाल साहब ने एक मोटा सा बाँस का पैमाना मानीटर से माँगा, सब बच्चों को खड़ा हो जाने को कहा। सबने समझ लिया कि सबकी पिटाई होगी। परन्तु दृश्य कुछ और ही बन गया। भाल साहब ने अपने दायें हाथ में पैमाना पकड़ा और अपने बायें हाथ की हथेली पर मारने लगे और कहते जा रहे थे, यह दोष तुम्हारा नहीं मेरा है, मैंने समझा था तुम सब अच्छे परिवार के बच्चे हो सब काम ठीक से कर लोगे, तुमने नहीं किया इस कारण दण्ड भी मुझे ही मिलना चाहिये, जब दायाँ हाथ थक गया तो बायें हाथ में पैमाना लेकर दायें हाथ की हथेली पर मारने लगे। सभी छात्रों के नेत्रों से आँसू बहने लगे, सबने एक

स्वर से कहा मास्टर साहब अब रुक जाइए केवल तीन दिन का समय दीजिये हम आपको तीन दिन में ही सब कार्य पूर्ण कर के दिखा देंगे। भाल साहब रुक गये, सबने पूरे परिश्रम से तीन दिन में सब कार्य पूर्ण करके दिखा दिया। अध्यापक की इस मनोवैज्ञानिक प्रक्रिया ने सब को क्रियाशील बना दिया और तीन मास का कार्य तीन दिनों में ही पूरा कर डाला।

त्रैमासिक परीक्षा होने से पूर्व ही बड़े भाई श्री विश्वनाथ जी को टी.बी. का रोग लग गया, पिता जी उन्हें चिकित्सा के लिए सैनिटोरियम भवाली ले गये, दुकान बन्द रहने लगी, पढ़ाई छोड़ देनी पड़ी और दुकान पर आकर बैठने लगा। दिन में दुकान पर रात्रि को घर पर और कोई कार्य नहीं, एक दिन घर के पुस्तकालय से एक छोटी सी पुस्तक जिसका नाम था 'नारी दपर्ण' जो लगभग २८ पृष्ठ की थी, उसे पढ़ने लगा १०, १२ पृष्ठ पढ़ने के पश्चात् उसमें एक प्रश्न लिखा था "क्या आजकल भी भीष्म पितामह, द्रोणाचार्य, युधि ाष्ठिर, भीम, अर्जुन, नकुल, सहदेव और श्री कृष्ण जैसी बलिष्ठ आत्मायें जन्म ले सकती हैं?" आगे उत्तर था "हाँ ले सकती हैं" प्रश्न बड़ा ही महत्वपूर्ण था परन्तु उत्तर उससे भी अधिक महत्वपूर्ण। प्रश्न के साथ–साथ उत्तर ने मेरे मस्तिष्क को हिला दिया, उत्सुकता के साथ पूरी पुस्तक पढ़ गया, परन्तु प्रश्न का कोई समाधान नहीं लिखा था। इस प्रेरक पंक्ति ने "कैसे जन्म ले सकती है" मुझे खोज करने के लिए प्रेरित किया और निरन्तर १८ वर्ष तक लगा रहा।

वैद्यराज श्रद्धेय बुद्धा सिंह जी पुतली घर के बाहर एक कच्चे मकान में रहते थे, वह एक अनुभवी और कुशल चिकित्सक थे। सरल स्वभाव और उन्मुक्त जीवन के धनी थे। मैंने स्वयं देखा एक रोगी आया, नाड़ी देखी, औषधि दी, अविभावक ने पाँच रुपये का नोट सामने रखा, वैद्य जी ने कहा–औषधि का सेवन करायें पैसे अबकी बार ले लेंगे। वह चले गये, मैंने पैसे न लेने का कारण जानना चाहा तो कहा–यह रोगी बचेगा नहीं, ऐसी अवस्था में पैसे लेना उचित नहीं। एक और रोगी आया और कहने लगा–वैद्य जी

आपकी औषधि से बहुत लाभ है, मुझे बहुत दूर से आना पड़ता है यदि औषधि का योग बता दें तो मैं उसे तैयार कर लूँ। मैं आश्चर्य चकित हो देखता रहा, वैद्य जी ने उसी समय योग लिख कर दे दिया। मैंने प्रश्न किया—वैद्य जी आपने ऐसा क्यों किया? उत्तर अतिलघु और उद्देश्य पूर्ण था "चिकित्सा परोपकार के लिये होती है, लोभ के लिये नहीं।" सत्संग का लाभ उठाने के लिये मैं व्यापारिक अवकाश के दिन वैद्य जी के पास जाया करता था, एक दिन अपने मित्र की चर्चा करते हुए वैद्य जी ने कहा—हमारे एक मित्र देहरादून में रहते हैं। उनके लड़के का विवाह हो गया, दोनों ही एम.ए. और बी.ए. हैं, वह चाहते हैं, उत्तम सन्तान को जन्म देने की दिशा में साध न। यदि इस विषय की कोई पुस्तक हो तो बतायें। मैंने कहा—वैद्य जी! ऐसी कोई पुस्तक नहीं, मैंने बहुत से ग्रन्थों को देखा, बहुत सा ज्ञान विद्वानों से चर्चा के बीच प्राप्त हुआ, यदि वह यहाँ आ जायें तो मैं सब उनको क्रम बद्ध रूप से बता दूँगा। वैद्य जी कहने लगे—जब इतने परिश्रम से जो कुछ अर्जित किया है वह वास्तव में अद्वितीय है तब इसे अपने पास तक ही सीमित क्यों रखा है? इसे जन हितार्थ लिपिबद्ध कर प्रकाश में लाना सबसे बड़ा परोपकार होगा। वैद्य जी के शब्दों से मुझे लिखने के लिये बहुत बड़ी प्रेरणा मिली। □□

लेखन

मैंने छोटी अवस्था से ही गायत्री का जाप हर समय ही करते रहने की प्रकृति बना ली थी। वैद्यराज श्री बुद्धा सिंह जी की प्रेरणा से पुस्तक लिखने का विचार बनाया, इससे पूर्व कभी कुछ नहीं लिखा था। पुस्तक के विषयों को चुना मस्तिष्क में सब कुछ उपस्थित था। जब लिखने बैठा तो लेखनी ही नहीं चल पायी, थोड़े थोड़े दिनों के अन्तर से कई दिनों तक प्रयत्न करता रहा परन्तु सफलता नहीं मिली। एक दिन मन में विचार उठा क्यों न ४० दिन

का एक गायत्री अनुष्ठान किया जाय, पत्नी से परामर्श किया सहमति मिल जाने पर १९५६ के नवम्बर मास में दीपावली के पश्चात् मैंने रात्रि को खड़े होकर एक माला गायत्री जाप प्रारम्भ कर दिया ४० दिन पश्चात् मैंने पुस्तक लिखना पुनः आरम्भ किया, दिसम्बर मास में प्रातः काल ५:३० बजे उठकर खाट पर ही बैठे—बैठे लिखने का शुभारम्भ किया, प्रभु कृपा से लेखनी अबाध रूप से चलने लगी और एक मास में ग्रन्थ पूर्ण हो गया, जिसका नाम, "इच्छानुसार सन्तानोत्पत्ति" रखा गया। □□

मैं इच्छानुसार सन्तानोत्पत्ति पुस्तक की पाण्डुलिपि लेकर पं० गोपीनाथ जी के पास पहुँचा और उसकी भूमिका लिखने का निवेदन किया, पं० जी ने कहा—मैं यह भली प्रकार जानता हूँ कि यह अत्यन्त महत्वपूर्ण ग्रन्थ है, तुमने इसे कठोर तप और श्रम के साथ लिखकर तैयार किया है इसकी भूमिका भी किसी अद्वितीय विद्वान् से ही लिखानी चाहिये। मैंने कहा—किस से? इस पर उन्होंने सुझाव रखा कि इसकी भूमिका आचार्य भगवत सहाय जी से लिखवानी है। मैंने कहा—मैं उनसे परिचित नहीं! पं० जी ने कहा—मैं साथ चलूँगा। मैं पं० गोपीनाथ जी के साथ डिप्टीगंज आचार्य जी के आवास पर पहुँचा और पं० जी ने पुस्तक सामने रखकर कहा—आपको इसकी भूमिका लिखनी है आचार्य जी ने कहा—मैं इनको तो नहीं जानता, हाँ! आप आये हैं तो मैं भूमिका अवश्य लिखूँगा। पं० जी ने कहा—आप इनके पिता श्री भूकन सरन कागजी को जानते हैं, तब आचार्य जी ने बड़ी प्रसन्नता से कहा—अब मैं समझ गया और मुझसे कहा—आप दो मास में मुझ से पुस्तक ले जाना। १५/५/१९५८ को भूमिका लिखकर मिली और इच्छानुसार सन्तानोत्पत्ति पुस्तक छपकर तैयार हो गई।

१९५९—६० के आसपास एक दिन श्री एस.के.सोती जी दुकान के आगे से निकले जा रहे थे, मैंने उन्हें देखा और करबद्ध नमस्ते कर दुकान पर बैठने का आग्रह किया और इच्छानुसार सन्तानोत्पत्ति की एक प्रति भेंट की। श्री सोती जी ने कहा मैं इसे घर पर बैठकर देखूँगा, इस समय एक विशेप कार्य से जा रहा हूँ। चार या पाँच दिन के पश्चात् श्री सोती जी फिर दुकान पर आये और कहने लगे, पुस्तक देखकर विश्वास नहीं होता कि यह तुम्हारी रचना है, मन में बार—बार यही प्रश्न उठ रहा है कि 'यह बात सही है या वह' मैंने निवेदन किया उस समय मैंने और आपने बहुत प्रयत्न किया परन्तु पढ़ाई न हो सकी और जब प्रभु की कृपा हुई तो यह पुस्तक तैयार हो गई।

५ सितम्बर सर्वपल्ली डा.राधाकृष्णान का जन्म दिवस अध्यापक दिवस के नाम से मनाया जाता है। श्री एस.के.सोती जी राष्ट्रपति सर्वपल्ली डा.राधाकृष्णनन जी के एक चित्र को सादा पट्ठे पर चिपका कर लाये और कहा इसे पैक कर दें। मैंने कहा—आप इसका क्या करेंगे, तो उत्तर दिया कल अध्यापक दिवस है, राष्ट्रपति महोदय को जाकर भेंट में देना है, मैंने कहा—यह ठीक नहीं है मैं इसे ठीक कर दूँगा आप कल प्रात: १० बजे ले लें, मैंने उसे काटकर कलईदार दर्पण में लगाकर सही क़र के पैक कर दिया था, उसे देखकर श्री सोती जी बहुत प्रसन्न हुए। यह प्रसन्नता ही मेरे लिये गुरु जी का अशीर्वाद था।

जिस प्रकार लेखन की विधायें अनेक हैं, उसी प्रकार भूमिका लिखने के भी कई रूप देखने में आयें हैं।

१—कुछ की कामना होती है कि इस पुस्तक की भूमिका मैं लिखूँ।

२— कहीं लेखक भूमिका लिखवाने के लिये भूमिका लेखक के पास जाते हैं।

३— कुछ भूमिका लेखक इस अवसर को अपनी प्रसिद्धि का उपयुक्त आधार मानकर पूरा आधा भाग अपने बारे में ही लिख देते हैं। शेष आधे भाग में कुछ पुस्तक के विषय में और कुछ लेखक के बारे में लिख कर पूरा हो जाता है।

४— कुछ लेखक अपनी प्रशंसा और लेखक के बारे में ही लिखकर भूमिका की इति श्री कर देते हैं। ग्रन्थ के बारे में मौन रहते हैं।

५— कुछ भूमिका लेखक, पुस्तक का अध्ययन करते हैं उसके विषय पर मनन करते हैं, सांस्कृतिक परिप्रेक्ष्य में तुलना करते हैं, तत्पश्चात् पुस्तक की गरिमा के अनुसार लिखकर, अपने आपको गौरवान्वित अनुभव करते हैं। तत्पश्चात् कुछ अंश लेखक के विषय में लिख देते हैं। परन्तु अपने बारे में एक शब्द भी नहीं लिखते।

इस प्रकार भूमिका लेखक का आप स्वयम् ही मूल्याँकन कर सकते हैं। कौन क्या है? भूमिका से ग्रन्थ के स्वरूप का अनुमान लग जाता है। □□

सूखा रोग का योग

इच्छानुसार सन्तानोत्पत्ति पुस्तक लिख कर तैयार हो गई। और छपने के लिये प्रेस में चली गई। एक दिन मन में विचार आया यदि इसमें बच्चों के सूखा रोग की चिकित्सा का भी प्रयोग अंकित कर दिया जाय तो अति उत्तम रहेगा। पं० हरिदत्त जी गौतम पुतलीघर में रहते थे। और सूखा रोग की सफल चिकित्सा करते थे, आर्य समाज के नाते से गौतम जी की और पं० गोपीनाथ जी की अति घनिष्टता और निकटता थी। मैंने पं० गोपीनाथ जी से कहा—यदि गौतम जी सूखा रोग का योग बता दें तो मैं उसे पुस्तक में अंकित कर दूँ। पं० जी ने कहा—मैं बात करुँगा वैसे वह किसी को भी कोई योग नहीं बताते, यदि उन्होंने मुझसे भी मना कर दिया तो मैं ४०

वर्ष की घनिष्टता को उसी समय त्याग कर चला आऊँगा। पं० गोपीनाथ जी की मेरे ऊपर बहुत बड़ी कृपा और स्नेह था। तभी तो अपने चालीस वर्षों की घनिष्टता को भी दाव पर लगाने के लिये उद्यत हो गये, परन्तु मेरी आत्मा ने यह स्वीकार नहीं किया और मैंने पं०जी से कहा—आप इतने छोटे से कार्य के लिये चालीस वर्षों पुरानी मित्रता को दाव पर न लगायें और मैंने मना कर दिया। व्यापारिक अवकाश मंगलवार के दिन मैं श्रद्धेय वैद्य बुद्धा सिंह जी के पास गया, मैंने सारी चर्चा बताई, उन्होंने कहा—आपने यह ठीक किया गौतम जी कोई भी प्रयोग अपने पुत्रों तक को बताने के लिये तैयार नहीं हैं। आप निराश न हों प्रयत्न करें अवश्य ही प्रयोग मिल जायेगा। आप देहली जाते ही रहते हैं, अब की बार कुछ पुस्तकें चिकित्सा की लायें, देखेंगे उसमें कुछ मिल जाये। मैं मंगलवार को देहली गया, कई पुस्तकें खरीदीं। लौटते हुए गाड़ी में भींड़ अधिक थी, ऊपर की सीट पर बैठने को स्थान मिला, बत्ती भी पास थी। उसमें से एक पुस्तक निकाल कर पढ़ने के लिये खोली तो झट सूखा रोग का प्रयोग सामने आ गया उसे पढ़ा, जिस विधि से गौतम जी सेवन कराते थे ठीक वही सेवन विधि उसमें लिखी थी। मन को अति प्रसन्नता हुई सहसा मुँख से निकला प्रभु जी आपकी कृपा से यह योग प्राप्त हो गया। मैं बुद्धबार की प्रातःकाल ही वैद्य बुद्धा सिंह जी के पास गया और योग दिखाया, उन्होंने भी कहा—यह ठीक वही योग है आप इसे पुस्तक में अंकित कर दें। दो दिन के पश्चात् ही गौतम जी मेरी दुकान पर आये, मैंने पुस्तक खोलकर उनके सामने रखी और कहा—गौतम जी इस प्रयोग में धतूरे के एक बीज के लिये लिखा है, क्या इसका अर्थ एक फल से है? मुझे तो यह मालूम था कि इसका क्या अर्थ है, केवल इसे माध्यम बनाकर सामने रखना था। मैंने देखा गौतम जी के चेहरे पर हवाइयाँ उड़ने लगीं और वह पुस्तक बन्द करके यह कहते हुए उठकर चले गये मुझे कुछ नहीं मालूम। मुझे स्पष्ट अनुमान लग गया कि गौतम जी द्वारा बच्चों के सुखा रोग पर दिये जाने वाला प्रयोग यही है और मैंने उसे सब का हित सोचते हुए इच्छानुसार सन्तानोत्पत्ति पुस्तक में प्रकाशित कर दिया। □□

आचार्य जी

मैं अपनी पुस्तक 'इच्छानुसार सन्तानोत्पत्ति' लेकर देहली पुस्तक भण्डार के पास गया, उन्होंने उसे अपनी दुकान पर बेचने के लिये तो नहीं रखा। परन्तु इसी नाम से अपनी एक पुस्तक और तैयार कराके छाप दी। उसमें जो लिखा था उसमें सार्थकता कुछ नहीं थी इसी कारण वह पुस्तक दीमक का भोजन ही बन कर रह गई। इसी कारण मुझे दूसरे संस्करण में पुस्तक का नाम बदलना पड़ा दूसरे संस्करण में इसका नाम 'इच्छानुसार सन्तान' कर दिया गया। यह पुस्तक हैदराबाद में श्री विश्वबन्धु जी शास्त्री के हाथ लगी, उन्हें आचार्य जी की भूमिका देखकर अति प्रसन्नता हुई। श्री विश्वबन्धु जी ने हैदराबाद से एक पत्र आचार्य जी के पते पर लिखा, उसमें लिखा था—''मैंने आपसे बलदेव आर्य संस्कृत पाठशाला में शिक्षा प्राप्त की थी। बहुत लम्बे अन्तराल के पश्चात् आपकी लिखी भूमिका के द्वारा आपका साक्षात्कार हुआ'' इसे पढ़कर आचार्य जी अति प्रसन्न हुये और मेरी दुकान पर आकर पत्र दिखाया।

मैं आचार्य जी के पास मिलने के लिये सदैव जाता ही रहता था और कुछ न कुछ भेंट अवश्य देता था। आचार्य जी ने कहा—गुप्त: जी मुझे पेंशन मिलती है। वह मेरे लिये पर्याप्त है। आप कष्ट न किया करें। मैंन प्रार्थना की कि आप ही ने 'सहस्त्र हस्त संकिरा' के वेद पाठ को पढ़ाया है? इस पर आचार्य जी हँसे और चुप हो गये।

आचार्य जी पहले मोहल्ला भट्टी हाथी खाने के सामने श्री बाँके लाल जी के मकान में रहते थे। श्री बाँकेलाल जी किस्तों का कार्य करते थे। मास में १५ दिन घर से बाहर ही रहना पड़ता था इसी कारण बच्चों की देखभाल नहीं हो पाती थी। उनका बेटा भूमित्र अपनी माँ से स्कूल के लिये फीस लेकर मौज मस्ती करता और स्कूल से भी गायब रहता। इस संकट को श्री बाँके लाल जी ने आचार्य जी के सामने रखा और इसका समाधान बताने का आग्रह

किया। इस पर आचार्य जी ने कहा—लाला जी आप १५ दिन घर से बाहर रहते हैं, बच्चे पर माता की लाड़ वश ताड़ना नहीं है। आप यदि इसे गुरुकुल काँगड़ी भेज दें तो वह सुधर जायेगा। श्री बाँके लाल जी ने भूमित्र को गुरुकुल काँगड़ी भेज दिया, वहाँ से पढ़कर आये और (बीमित्रा) के नाम से नाक, कान, गला आदि के डाक्टर बनकर जन सेवा करने लगे।

आचार्य जी ने एक दिन अपने जीवन की दुखद घटना सुनाई। आचार्य जी ने बताया हमारे परिवार में एक पुत्र का जन्म हुआ, मैं और मेरी पत्नी अति प्रसन्न थे। अचानक कुछ समय के पश्चात् मेरी पत्नी और पुत्र दोनों ही रोग ग्रस्त हो गये। चिकित्सा होती रही, घर का काम धन्धा भी स्वयं ही करता रहा। इसी चिन्ता में था कि इस विपत्ति से मुक्ति मिले। एक दिन रात्रि को स्वप्न में किसी ने कहा इन दोनों में से एक ही बच सकता है—बता किसे चाहता है? इस पर सहसा मेरे मुंख से निकल पड़ा कि पत्नी बची रहेगी तो पुत्र और भी हो सकता है। मैं एक दम भड़ भड़ा कर उठा और सोचने लगा यह क्या हुआ? जो होना था वह अनायास हो गया। पत्नी का स्वास्थ्य ठीक होने लगा और पुत्र सदैव के लिये छिन गया। तब से अब तक किसी भी पुत्र का जन्म नहीं हुआ। गुप्तः जी आपने मुझ से अपनी पुस्तकों की भूमिका लिखवा कर मुझे अमर कर दिया, आपके इस उपकार को मैं कैसे भुला सकता हूँ। मैंने कहा—आचार्य जी आप ऐसी बातें क्यों कर रहे हैं? उपकार तो आपने मेरे साहित्य पर किया है। आपकी भूमिका से मुझे और मेरे साहित्य को गौरव मिला, जो अमिट सत्य है।

विद्वान् मनीषी अपनी अन्तिम स्मृति की छवि छोड़ कर अमर हो जाते हैं। इसी प्रकार प्राचीन व्याकरण के आचार्य पूज्य प्रवर श्रद्धेय भगवत सहाय शर्मा जी भी फाल्गुन शुक्ल पौर्णमासी सम्वत् २०५३ सोमवार २४ मार्च १९९७ को इन्द्रप्रस्थ (देहली) में इस नश्वर पंच भौतिक शरीर के मोह को त्याग कर नवीन जीवन धारण की दिशा की ओर अग्रसर हो, अमर हो गये। मेरी पुस्तक 'वेद उद्गीत' की अन्तिम भूमिका २०/७/९६ को लिखकर चिर स्मृति रूप छवि को छोड़ कर सिधार गये। ◻◻

ज्येष्ठ भ्राता

श्री ब्रजनाथ जी मेरे बड़े भाई थे। आपने सम्वत् १९९० अर्थात् सन् १९३३ में दैनिक—कर्म—पद्धति के नाम से एक पुस्तक तैयार करके प्रकाशित की थी। उस समय इस पुस्तक को आर्य जगत् में सर्वत्र आदर प्राप्त हुआ था। आपने एक विचित्र प्रकार की कहानी का एक पृष्ठ तैयार किया, इसकी विशेषता यह थी कि आप उसे पढ़ जायें तो एक कहानी है और उसे जब एक लाइन छोड़ कर पढ़ें तो दूसरी कहानी बन जाती थी। यह पत्रक मेरे पास बहुत समय तक सुरक्षित रहा परन्तु दो बार भवन की अदला—बदली में नहीं मालूम वह कहा गुम हो गया, अब वह मेरे पास नहीं है। उन्होंने एक गणित का चार्ट भी बनाया था। वह मेरे पास आज तक सुरक्षित है। उसे मैं यहाँ अंकित भी कर रहा हूँ। यह एक बच्चों का खेल भी है।

१	२	३	४	५
१	२	४	८	१६
३	३	५	९	१७
५	६	६	१०	१८
७	७	७	११	१९
९	१०	१२	१२	२०
११	११	१३	१३	२१
१३	१४	१४	१४	२२
१५	१५	१५	१५	२३
१७	१८	२०	२४	२४
१९	१९	२१	२५	२५
२१	२२	२२	२६	२६
२३	२३	२३	२७	२७
२५	२६	२८	२८	२८
२७	२७	२९	२९	२९
२९	३०	३०	३०	३०
३१	३१	३१	३१	३१

इसमें ५ पंक्तियाँ हैं। उसमें से किसी एक अंक को आप अपने मन में विचार लें। आप से मालूम किया जाएगा कि आपका सोचा हुआ अंक किस—किस पंक्ति में है। तो हम आपको बता देंगे कि आपने अपने मन में अमुक अंक विचारा है। जैसे आपने १३ का अंक चुना। आपसे मालूम किया जायेगा कि १३ का अंक किस—किस पंक्ति में है, आप देखकर बतायेंगे कि १३ का अंक पहली पंक्ति में तीसरी पंक्ति में और चौथी पंक्ति में है, हम बता देंगे कि आपने १३ का अंक चुना है।

आपका यह प्रश्न स्वभाविक होगा कि आपने कैसे जाना कि हमने १३ का अंक चुना है। इसका यह समाधान है कि चार्ट में सबसे ऊपर काली पंक्ति में केवल पंक्ति क्रम है, उसे अंकों की पंक्ति में नहीं जोड़ा जायेगा, उससे नीचे की पंक्तियों का ही प्रयोग होता है। उस पंक्ति में जो ऊपर अंक हैं उसे जोड़ देने से १३ का अंक निकल आयेगा। पहली पंक्ति का १ तीसरी पंक्ति का ४ और चौथी पंक्ति का ८ इन तीनों को जोड़ने से १३ का अंक बन गया। इस प्रकार चार्ट की पंक्ति के अंकों को जोड़ कर बता देने से प्रश्न का उत्तर निकल आता है।

इस प्रकार मेरे ज्येष्ठ भ्राता जी ने तीन चीजों का निर्माण किया उसमें से दो को मैं सुरक्षित रख पाया उसे मैंने आपके सामने प्रस्तुत कर दिया है। इनकी मृत्यु का विवरण हम पूर्व अंकित कर चुके हैं। ◻◻

अमोघ औषधि

मुरादाबाद नगर में अमरोहा गेट चौराहे से आगे चल कर दिनदारपुरा की गली है उसके सामने ही ऊपर की मंजिल पर तिलक धर्मार्थ औषधालय था, जो अब श्री कमलेश्वर सरन जी सर्राफ के परिश्रम से मौ० साहू की दुकानों के ऊपर स्थित है। उसमें चिकित्सक थे पं० बद्रीप्रसाद जी, जो सीधे सच्चे वास्तविक ब्राह्मण थे, चिकित्सा में उनका हाथ बहुत अच्छा था। एक दिन पं० गोपीनाथ जी जो

जीलाल स्ट्रीट में रहते थे, वे किसी बच्चे की चिकित्सा के लिए तिलक धर्मार्थ औषधालय पर गये, वहाँ पर वैद्य बद्री प्रसाद जी से नमस्ते हुई। वैद्य जी कुछ खिन्न मुद्रा में दीखे। पं० जी ने कहा वैद्य जी किस चिन्ता में मग्न हैं? वैद्य जी ने कहा कल चौथी बार गर्भपात हो गया, इसी चिन्ता में मैं सोच रहा हूँ कि क्या मेरे भाग्य में सन्तान सुख नहीं है? पं० जी ने कहा—कि यह भाग्य कि बात नहीं? यह तो रोग है, इसकी आपको चिकित्सा करनी चाहिए। वैद्य जी ने कहा कहीं भाग्य की भी चिकित्सा होती है क्या? पं० जी ने कहा यह भाग्य के कारण नहीं रोग के कारण ऐसा होता है। वैद्य जी ने कहा तो आप ही इसका कोई उपचार बताइये। पं० जी ने कहा — अबकी बार जब गर्भ स्थापित हो जाये तो आप मुझे बताना मैं इसकी रक्षा हेतु औषधि दूँगा। समय आने पर वैद्य जी स्वयं पं० गोपीनाथ जी के घर गये और औषधि देने को कहा—पं जी ने वैद्य जी को औषधि दी और कहा—इसमें से चने बराबर टुकड़ा तोड़कर गर्भवती को प्रात: काल निहार मुँह, लेने को कहें, मुख में डालकर चूसती रहें २०—२५ मिनट में सब समाप्त हो जायगी। इसी प्रकार नित्य प्रसव समय तक देते रहें। वैद्य जी ने ऐसा ही किया और समय आने पर प्रभु कृपा और औषधि सेवन से सुरक्षित रूप से पुत्र का जन्म हुआ, वैद्य जी बड़े प्रसन्न थे।

वैद्य जी ने पं० जी को इस उपकार के लिये बधाई दी और कहा इस औषधि को आप हमें बताने की कृपा करें, जिससे औरों को भी लाभ प्राप्त हो सके। मैं अबतक इसे भाग्य की ही बात मानता रहा, चिकित्सक होते हुए भी मेरा ध्यान रोग होने की बात पर नहीं गया, आपने मेरे ऊपर बहुत बड़ी कृपा की जो मेरे संकट को दूर कर मुझे पुत्र की प्राप्ति करा दी। पं० गोपी नाथ जी ने कहा—यह प्रयोग हमें अपने दादा जी से मिला है, मैं आपको बताये देता हूँ। औषधि—काले सिरस की खोज करें कहाँ पर है। जब शनिवार हो और उस दिन पुष्य नक्षत्र भी हो, उस दिन जाकर पहले से खोजे हुए काले सिरस के पेड़ के पास जाकर उसकी छाल जो आसानी से छूट सके उसे छुटा कर ले लें। किसी धातु से न छुटाएं हाँ लकडी से छुटा सकते हैं। इसे घर पर लाकर रख लें। इसी में से चने बराबर नित्य प्रसव समय तक देते रहते हैं।

शनिवार के दिन पुष्य नक्षत्र कई बार एक एक वर्ष तक नही आता। एक बार मैं भी पं० गोपीनाथ जी के साथ काले सिरस की खोज में अमरोहा तक गया और रेलवे स्टेशन के सामने वाले मार्ग पर कुछ दूर जाकर सिरस का पेड़ मिला और पं० जी ने वहाँ से छाल ली। सिरस दो प्रकार का होता है। एक काला दूसरा सफेद, काले सिरस की छाल काली और सफेद की सफेद होती है। सिरस के पेड़ पर लम्बी लम्बी सफेद सूखी हुई फलियाँ लगी रहती हैं दूर से ही दीख पडता है कि यह सिरस का पेड़ है। वैद्य पं० बद्री प्रसाद जी ने इस औषधि का अनेको बार प्रयोग किया और सबको पूर्ण लाभ प्राप्त हुआ। वैद्य जी इसे पत्थर के खरल में कूट कर बारीक चूर्ण बनाकर प्रयोग में लाते थे इसकी पुडियाँ बनाकर रोगी को दे देते और नित्य एक पुडिया प्रात: काल जल से सेवन करा देते थे।

पं० गोपी नाथ जी की पोती विवाह योग्य होने लगी, पं० जी उसके लिए योग्य लडके की खोज में लगे, किसी ने परामर्श दिया कि वैद्य बद्री जी जो तिलक धर्मार्थ औषधालय में चिकित्सा करते हैं, उनका लडका विवाह योग्य है, आप उनसे मिलें पं० जी, वैद्य जी के पास गये और अपनी पोती के प्रस्ताव को सामने रखा, वैद्य जी ने कहा पं० जी आप ने ही मुझे पुत्र दिया, आप उसे मांगने आये हैं, मैं आपसे कैसे मना कर सकता हूँ। विवाह सम्पन्न हो गया। □□

नक्षत्रों का प्रभाव

मेरी पुस्तक 'इच्छानुसार सन्तान' कानपुर आर्य समाज के मन्त्री के पास पहुँची, उन्होंनें उसे ध्यान से पढ़ा। मैनें उसमें कुछ नक्षत्रों के प्रभाव के बारे में चर्चा की है। उसे पढ़कर मन्त्री जी ने मुझे एक पत्र लिखा कि आपने ज्योतिष का समर्थन किया है, जबकी ऋषि दयानन्द जी ने सत्यार्थ प्रकाश में ज्योतिष का खण्डन किया है, इसका समाधान करें।

मैंने उत्तर दिया ऋषिवर ने सत्यार्थ प्रकाश में लिखा है कि सूर्य एक ग्रह है, क्या किसी से दान जाप आदि कराकर, उसे ज्येष्ठ

मास की दोपहर के समय नंगा करके धूप में खड़ा किया जाये तो क्या उसे सूर्य का ताप नहीं सताएगा? इसी प्रकार पौष मास की पौर्णमासी की अर्ध रात्रि में नंगा करके चन्द्रमा की चाँदनी में खड़ा करा जाये तो क्या उसे शीत नहीं लगेगा? इसका प्रयोजन यह है कि ग्रह अपना प्रभाव करते हैं दान पुण्य, जापताप से उसका प्रभाव कम नही होता इस प्रकार के प्रपन्च का ऋषिवर ने खण्डन किया है।

दूसरे गर्भाधान प्रकरण में ऋषिवर ने लिखा है—"यदि दो ऋतुकाल व्यर्थ जाएँ अर्थात् दो महीनों में दो बार गर्भाधान क्रिया निष्फल हो जाये, गर्भ स्थिति न होवे, तो तीसरे महीने में ऋतु काल समय जब आवे तब पुष्य नक्षत्र युक्त ऋतुकाल दिवस में प्रथम प्रातः काल उपस्थित होवे, तब प्रथम प्रसूता गाय का दही दो मासा और यव के दाणों को सेकके पीस के दो मासा लेके इन दोनों को एकत्र करके पत्नी के हाथ में देवे,......बोल कर प्राशन करे इसी रीति से पुनः—पुनः तीन बार विधि करना। तत्पश्चात् संखाहुलि वा भटकटाई औषधि को जल में महीन पीसके उसका रस कपड़े में छानके पति पत्नी के दाहिने नाक के छिद्र में सिंचन करें।" इस क्रिया में पुष्य नक्षत्र की प्रधानता को स्वीकार किया गया है। इसी प्रकार नामकरण संस्कार में जन्म तिथि और तिथि के देवता और जन्म नक्षत्र और उसके देवता की आहुतियाँ देनी चाहिये।

इस प्रकार यह सिद्ध है कि ऋषिवर ने ज्योतिष का नहीं ज्योतिष के नाम पर प्रपन्च का खण्डन किया है।

इस उत्तर को पढ़कर मन्त्री महोदय संतुष्ट हुए और उनकी शंका का समाधान भी हो गया, तब उन्होंने इच्छानुसार सन्तान की २५ पुस्तकें भेजने को भी लिखा। □□

सृष्टि सम्वत्

हर वर्ष वेद संस्थान के नाम से नव वर्ष का पत्रक चैत्र शुक्ल प्रतिपदा को छपता ही रहता है, उस पर सृष्टि सम्वत् भी अंकित होता है। आर्य समाज स्टेशन रोड पर भी पत्रक छपता था, उस पर भी सृष्टि सम्वत् अंकित होता है। इन दोनों के सृष्टि सम्वत् में काफी अन्तर होता है। एक बार स्टेशन रोड आर्य समाज के प्रधान

श्री जगन्नाथ जी सिंघल से डा० वेंकटेश प्रसाद जी ने मालूम किया कि आपके और वीरेन्द्र नाथ के पत्रकों पर सृष्टि सम्वत् अलग–अलग क्यों हैं? इस पर सिंघल जी ने कहा—कि वीरेन्द्र नाथ की बात निराली ही होती है। डा० साहब ने एक दिन मुझसे कहा—मैंने कहा—डा० साहब यह बात बैठकर करने की है। डा० साहब ने कहा—आप मेरे घर पर आइये। मैं मंगलवार के दिन उनसे मिला, मैंने उन्हें ऋग्वेदादि भाष्य भूमिका दिखाई, उसमें जो सृष्टि सम्वत् लिखा है। पश्चात् मैंने कहा अब तक ६ मनवन्तर व्यतीत हो चुके हैं। एक मनवन्तर में ७१ चतुर्युगी होती हैं एक चतुर्युगी में ४३ लाख २० हजार वर्ष होते हैं। आप पहले ४३ लाख २० हजार को ७१ से गुणा करे, यह एक मनवन्तर का समय है, अब आप इसे ६से गुणा करें, इस प्रकार ६ मनवन्तर का समय निकल आया, अब इसमें ७ वें मनवन्तर की २७ चतुर्युगी का समय जो व्यतीत हो चुका है मिला दें पश्चात् २८ वीं चतुर्युगी के सत्युग, त्रेता, द्वापर और आज तक के कलियुग के समय को और जोड़ दें। अब इसमें तीन चतुर्युगी जो पूर्व संधी काल का समय हैं और जोड़ दें, अब आप देखें क्या जोड़ आ रहा है, यह सब हिसाब डा० साहब ने गणक पर जोड़ कर देखा तो कहने लगे कि यह तो आपका वाला सृष्टि सम्वत् आ गया। मैंने कहा—अब आप विचार कर लीजिए कि सही सृष्टि सम्वत् कौन सा है। इस पर डा० साहब ने कहा—यही सम्वत् सही है और ऋग्वेदादि भाष्य भूमिका से भी प्रमाणित है।

१९९३ में मैने 'नवसम्वत्' के नाम से एक पुस्तक प्रकाशित की थी। उसमें सभी कुछ विस्तार से पूरा हिसाब अंकित किया है। गलत वाला सृष्टि सम्वत् किसी भी प्रकार से कहीं पर भी सही सिद्ध नहीं होता।

सार्वदेशिक, आर्य मित्र, आर्ष साहित्य की पत्रिका, परोपकारी, यज्ञयोग ज्योति, वेद वाणी, आदि सबको मैनें सही और ऋग्वेदादि भाष्य भूमिका से प्रमाणित सृष्टि सम्वत् छापने की प्रार्थना की। इनमें से आर्ष साहित्य पत्रिका, परोपकारी, यज्ञयोग ज्योति, इनके सम्पादकों ने इसे स्वीकार कर लिया और ऋषि का बताया सृष्टि सम्वत् छापने लगे। परन्तु वेद वाणी, सार्वदेशिक और आर्य मित्र ने अभी तक नही

बदला। वह वही गलत और अप्रमाणित सृष्टि सम्वत् ही छापते चले आ रहें हैं। मैनें श्री हरिशचन्द्र जी आर्य अमरोहा निवासी जिनकी सार्वदेशिक और आर्य मित्र दोनों में अच्छी पैठ है से कहा था, परन्तु उन्होने भी कोई ध्यान नही दिया, एक विचित्र बात यह भी है कि वेदवाणी ने तो इस अप्रमाणित सृष्टि सम्वत् को वेद काल तथा सृष्टि सम्वत् दोनों ही मान लिया। जबकि सृष्टि सम्वंत् में और वेद काल में तीन चतुर्युगियों का अन्तर है। मैं तो यह कहना चाहता हूँ कि इन तीनों पत्रिकाओं के सम्पादकों तथा संस्था के संचालकों को यह घोषित कर देना चाहिए कि ऋग्वेदादि भाष्य भूमिका झूठी है। अथवा जो सही सृष्टि सम्वत् है और ऋषिकृत ऋग्वेदादि भाष्य भूमिका से प्रमाणित है उसे छापने लगें। मेरी यह बात वहुत कड़वी है परन्तु सत्य है।

अभी कुछ दिन पूर्व श्री कृष्ण कान्त सिंघल ने मुझ से सृष्टि संम्वत् की सही जानकारी लेनी चाही उन्होने कहा—एक सज्जन का कथन है कि वेद से पहले 'वेदान्त' है। मैंने कहा यह तो बहुत बड़ी अज्ञानता की बात है, क्योंकि वेद आदि सृष्टि से हैं और वेद के बिना आये 'वेदान्त' कैसे बन सकता है। वेदान्त का निर्माण वेद व्यास जी ने किया है। वेदान्त दर्शन को जगत गुरू शंकराचार्य जी अपना मुख्य ग्रन्थ मानते हैं इसी के द्वारा अद्वैत वाद के सिद्धान्त को सिद्ध करते हैं। मैनें सृष्टि—संवत विषय को इससे पूर्व के पृष्ठों में स्पष्ट रूप से सविस्तार अंकित किया है।

डा० वैंकटेश प्रसाद जी सूखा रोग के अच्छे और सफल चिकित्सक थे। इसी नाते से वह हर बात की गहराई तक जाने का प्रयत्न करते थे और सही निष्कर्ष तक पहुँचने का प्रयास करते थे। वह नगर में स्थान—स्थान पर कुछ श्रेष्ठ विचार सूत्र लिखवाया करते थे। उन्होंने अपनी पुस्तक (४) में लिखा है—

''देखो विज्ञान ने बहुत उन्नति की परन्तु ऐसी मशीन आज तक नहीं बनाई जिसमें दाल रोटी डालने पर रक्त और भूसा पत्ते डालने पर दूध बनकर तैयार हो जाये।'' कितना सटीक और मौलिक चिन्तन है डा० वैंकटेश प्रसाद गुप्ता जी का। उनके सुपुत्र डा० ब्रजेश प्रसाद गुप्ता भी उसी स्थान पर चिकित्सा कर रहे हैं।

आर्यावर्त केसरी पाक्षिक पत्र अमरोहा मे प्रकाशित होता है। इसके सम्पादक डा० अशोक कुमार आर्य हैं। १५अक्टूवर २००३ को श्री हरीराम आर्य जी मेरे पास आये और पत्र के लिए एक वर्ष

का शुल्क देने को कहा मैंने स्वीकार किया और उन्होंने रसीद काट दी। मैंने पत्र देखा और उनसे एक प्रार्थना की कि यदि आर्यवर्त केसरी में हिन्दी भाषा के साथ हिन्दी के अंक लगा दिये जायें तो बहुत उत्तम रहेगा। हिन्दी के साथ अंग्रेजी के अंक अच्छे नही लगते। श्री हरिराम आर्य जी ने कहा कि आपकी बात उचित है, इस पर किसी ने कोई ध्यान ही नहीं दिया मैं सम्पादक महोदय से कहुँगा। मैंने देखा दो अंको के पश्चात् हिन्दी के अंक आने लगे परन्तु पृष्ठ संख्या पर अंक अंग्रेजी में ही थे। मैंने पुन: आग्रह किया कि पृष्ठ संख्या के अंक भी हिन्दी में ही कर दें और सृष्टि सम्वत् अप्रामाणिक न छापें। संपादक महोदय ने पृष्ठ संख्या के अंक हिन्दी में कर दिये परन्तु सृष्टि सम्वत् वही अप्रामाणिक ही छाप रहे हैं। जबकि ऋषि दयानन्द जी ने ऋग्वेदादि भाष्य भूमिका में सही सृष्टि सम्वत् अंकित किया है। मैं तो यही कहूँगा कि ऋषि दयानन्द को तो मानते हैं परन्तु ऋषि दयानन्द की नहीं मानते। पुन: आग्रह करने पर उन्होंने अपने पाक्षिक में सृष्टि सम्वत् छापना ही बन्द कर दिया। □□

लालच

१९५० में नगर मुरादाबाद में लोधी बैंक के नाम से कई शाखायें खुलीं, उसमें जितना रूपया जमा करो उसके अगले मास तक चार किस्तों में दुगना रुपया प्राप्त करने की घोषणा हुई। बड़े—बड़े चतुर व्यक्ति लालच वश फँसने लगे। सारे नगर में यही एक चर्चा थी, सारे व्यापार ठप हो गये, सबने उसी में सारा रुपया झौंकना आरम्भ कर दिया। व्यापारिक अवकाश मंगलवार के दिन मैं राजोगली के मकान की बैठक में बैठा था। उस समय मैं भर्तृहरि नीति शतक पर वैद्य हरिदास वाराणसी का लिखा भाष्य देख रहा था। घर के सामने राममूर्ति सरन दलाल रहते थे, वे भी मेरे पास आकर बैठ गये और कहा—क्या तुमने लोधी बैंक मे कुछ रुपया जमा करा है? मैंने कहा—नहीं। राममूर्ति सरन बोले—हमने तो जमा किया है। पहले दो सप्ताह में हमारा पैसा वापिस मिल गया, अगले दो सप्ताह

में उतना पैसा फिर मिल जायेगा। हमने तो जो मिला वह भी और उसमें कुछ और मिला कर फिर जमा कर दिया, तुम भी कुछ जमा कर दो इसमें कोई हर्ज नहीं। मैंने कहा—भइय्ये मुझे इसमें कोई रुची नही। देव योग से उस दिन नीतिशतक का ४९वाँ श्लोक देख रहा था वही उनके सामने रखा—

यद्धात्रा निजभालपट्टलिखितं स्तोकं महद्वा धनं
तत्प्राप्नोति मरुस्थले ऽपि नितरां मेरौततो नाधिकम्।
तद्धीरो भववित्ततत्सु कृपणां वृत्तिं वृथा मा कृथा
कूपेश्यपयोनिधावपिघटो गृह्णाति तुल्यंजलम्।।

नीतिशतक ४९

विधाता ने भाग्य में थोडा या बहुत जितना धन के लिए पात्र दिया है। उतना मरु भूमि में भी उसे मिलता ही है। सुवर्णमय मेरुपर्वत पर जाने पर भी उससे अधिक उसको नहीं मिल सकता, इसलिए अपने भाग्य पर ही सन्तोष करो, धनिकों के आगे दीन मत बनो देखो कूप अथवा सागर में घड़ा डालने पर भी वह पात्रानुसार ही पानी लेता है।

मैंने कहा—आपका दलाली का काम कूप के समान है, और यह लोधी बैंक को सागर समझो, यदि आपको इस सागर में कुछ अधिक धन प्राप्त हो गया तो उसके पश्चात् समानता होने तक दलाली का काम कम हो जायेगा या रुक जायेगा।

एक सप्ताह बाद ही सभी लोधी बैंकों पर छापे मारे गये कुछ पकड़े गये कुछ धन लेकर भाग गये। सबका धन मारा गया, लालच का खेल बिगड़ गया।

मेरी दुकान के बराबर में ही मौहम्मद हसन की कागज की दुकान थी, जो वस्तु हमारी दुकान पर बिकती थी। वह भी वही बेचता था। एक बार एक ग्राहक हसन की दुकान पर से कुछ खरीद रहा था परन्तु सौदा नहीं हो सका, वह मेरी दुकान की ओर आया मैंने उस ग्राहक को उसी मेल का अच्छा कागज दिखाया और भाव में भी कम बताया, बहुत प्रयत्न किया परन्तु उसने कुछ नहीं खरीदा और खाली हाथ चला गया।

वर्षा ऋतु आ गई थी। दुकान पर चन्द्रकान्ता रखी थी, वर्षा ऋतु में ग्राहक बहुत कम आते थे, इस कारण सारा दिन खाली ही बीत जाता था, जब पिता जी दुकान पर होते थे। तो वह चन्द्रकान्ता पढ़ते थे और जब वह भोजन के लिए घर चले जाते थे तो उसे मैं पढ़ने लगता था। चन्द्रकान्ता एक तिलस्मी प्रसिद्ध उपन्यास है, उसे छोड़ने को मन नहीं करता, एक दिन जब पिताजी भोजन के लिए घर गये थे और मैं उनके पीछे चन्द्रकान्ता पढ़ रहा था, उसी बीच एक ग्राहक आया और कागज माँगने लगा, मैंने उसे मना कर दिया और चन्द्रकान्ता पढ़ता रहा ग्राहक ने फिर कहा—मैंने भी कहा—नहीं है। ग्राहक कहने लगा—सामने रखा तो है क्यों नहीं दे देते? मैंने पुस्तक को रखा, ग्राहक को कागज दे दिया और वह सौदा लेकर चला गया। उसी समय मन में एक द्वन्द छिड़ गया, यह ग्राहक जबरन सौदा ले गया और दो मास पूर्व मैंने ग्राहक को बुलाया, कम भाव बताया अच्छी वस्तु देनी चाही, तो भी वह क्यों नहीं ले गया? मन में सहसा विचार उठा जिसको लेना है तो वह अवश्य लेकर जायेगा और जिसे नहीं लेना है तो वह हजार प्रयत्न करने पर भी नहीं लेगा, इस प्रक्रिया को देखकर विचारों को स्थिरता मिली, जो पहले ग्राहक के वापिस हो जाने पर बड़ी चिन्ता सी बनती थी। वह दूर हो गयी और भविष्य में ग्राहक को बुलाना बिल्कुल ही बन्द कर दिया, परिणाम स्वरूप मन और बुद्धि का बोझ हटा, चिन्ता दूर भागी और पुरुषार्थ को बल मिला। इसके पश्चात् पंच तन्त्र हितोपदेश और चाणक्य नीति देखने का अवसर मिला वे लिखते हैं—

प्राप्तव्यमर्थं लभते मनुष्यो
दैवोऽपितं लंघयितुंन शक्तः।
तस्मान्न शोचामि न विस्मयो मे,
यदस्मदीयं न हितत्परेषाम्।।

पञ्चतन्त्र २/११४

प्राप्त होने योग्य धन मनुष्य को प्राप्त होता ही है। देव भी उसका उल्लंघन करने में समर्थ नही होते। इस कारण न मैं सोच करता हूँ और न मुझे विस्मय ही होता है। क्योंकि जो हमारा है, वह

दूसरों का नहीं हो सकता। (अपने अनुभव के आधार पर मैंने इसमें और जोड़ा) इसी प्रकार जो दूसरों का है उसे हम जितना चाहे दबाकर रखें वह भी हमारा कभी नहीं हो सकता—

यदभावि न तद्भावि भावि चेन्न तदन्यथा।
इति चिन्ताविषघ्नो ऽयमगदः किं न पीयते।।

हितोपदेश सन्धि ८

जो नहीं होना है, वह नहीं होगा और जो होना है वह होकर ही रहेगा। चिन्ता रूपी विष को दूर करने वाली इस औषधि को क्यों नहीं पीते।

नाहारं चिन्तयेत्प्राज्ञो धर्म मेकं हिचिन्तयेत्
आहारो हि मनुष्याणां जन्मना सहजायते।।

चाणक्य नीति १२/१८

बुद्धिमान पुरुष भोजन की चिन्ता न करे किन्तु एक धर्माचरण का ही चिन्तन करे। भोजन तो मनुष्य के जन्म के साथ ही उत्पन्न होता है।

आर्ष ग्रन्थों के वचन और अपने व्यवहार में आई घटना क्रम के सामंजस्य ने मेरे अन्दर दृढ़ता को और गहराई तक पहुँचा दिया। □□

परिश्रम को नहीं भूले

देहली में बड़शाबुल्ला के चौराहे पर रामनाथ एण्ड सन्स के नाम से एक प्रसिद्ध कागज की दुकान थी, उस दुकान पर मुन्शीलाल कर्मचारी के रूप में कार्य करते थे, कुछ समय के पश्चात् लाला रामनाथ जी के साथ मुन्शीलाल जी की दुकान में भागीदारी बन गई और दुकान का नाम रामनाथ मुन्शीलाल रखा गया, कार्य प्रगति पर रहा, पुनः कुछ समय पश्चात् दोनों में बटवारा हो गया। लाला रामनाथ जी अपनी दुकान पर ही रहे और रामनाथ एण्ड सन्स के नाम से कार्य होने लगा। श्री मुन्शीलाल जी ने उसी चौराहे पर सामने की ओर एक दुकान लेकर कार्य आरम्भ कर दिया नाम रखा मुन्शीलाल एण्ड सन्स। श्री मुन्शीलाल जी मुझे तथा हमारे

पिता जी को भली प्रकार जानते थे। उनके पास ट्रावनकोर सैलोफीन पेपर की सोल एजन्सी थी, मैं उनसे १९५७ में उसके बारे में भाव आदि मालूम करने गया, वह प्रातः दुकान खुलते ही कार में बैठ कर जा रहे थे, उन्होंने मेरा हाथ पकडकर कार में बैठा लिया, मैं समझ रहा था कि यह मुझे गोदाम की ओर ले जा रहे हैं, परन्तु मैंने देखा कि बहुत दूर निकल जाने के पश्चात् कार रुकी और उनके साथ मैं भी उतरा, एक विशाल कोठी का निर्माण हो रहा था, और कई जने देखने आये हुए थे, उनमें से एक ने कहा—कि सेठ जी आपने कोठी बहुत ही उत्तम बनाई है। यह आपके लिए बहुत गौरव की बात है। श्री मुन्शीलाल जी ने उत्तर दिया यह सब (अपने कन्धे पर हाथ रखकर कहा) इन कन्धों की महरवानी है, मैंने इन कन्धों पर बहुत से रिम ढोये हैं। मैं श्री मुन्शीलाल जी के उत्तर को सुनकर चकित रह गया। जो करोड़पति है, उसे जरासा भी अभिमान नहीं? वह अपने जीवन के प्रारम्भिक वर्षों के परिश्रम और पुरुषार्थ को भूला नहीं, उसे आज भी याद रखे हुए है कि मैं भी कभी किसी के पास कर्मचारी के रूप में कार्य करता था। कितना श्रेष्ठ विचार है। ◻◻

संकट के साथी

मैं १९४५ में मौसेरे भाई के विवाह में कायमगंज गया था, लौटकर आने पर पिता जी ने बताया, देहली से सिद्धोमल एण्ड सन्स का मुनीम पाती आया था, मैं उसी दिन सिद्धोमल के पैसों का ड्राफ्ट बनवाकर रजिस्ट्री से भेज चुका था। मैंने पाती से कहा—यह देखो मैंने अभी—अभी रजिस्ट्री कराई है। उसने कहा—मैं नहीं मानता, तुमने मुझे देखकर अपनी बही पर लिख लिया होगा। इस पर पिता जी उसे बैंक ले गये और वहाँ पर ड्राफ्ट बनवाने की पुष्टि हो जाने पर वह चला गया। मैंने कहा—आपने उसे दुकान से धक्का क्यों नहीं दे दिया, जो हमें झूठा समझता है?

इसके पश्चात् मैं पहली बार देहली को अकेला ही गया था पहले नन्नूमल एण्ड सन्स की दुकान पर गया। मैंने जो—जो माल

बताया उसका आधा परदा माल लिखा और अन्त में कहा—हम माल नहीं भेजेंगे, तुम सिद्धोमल को ही जाकर निहाल करो। मैं एकदम घबरा गया और कहा—क्या कारण है। नन्नूमल ने कहा—तुम्हारे यहाँ से पैसा बहुत देर से आता है। मैंने कहा—क्या कोई पैसा आपका बाकी रहा है? नन्नूमल ने कहा—नहीं! तो मैंने कहा—विपत्ति सब पर आती है, हमारे ऊपर विपत्ति आई और सब कुछ बिगड़ गया। नन्नूमल ने कहा—हम चाहते हैं कि हमारे हर बिल का भुगतान एक मास के अन्दर हो जाना चाहिये। मैंने कहा—ऐसा ही होगा, उन्होंने थोड़ा माल भेजा।

मैं डरते—डरते सिद्धोमल की दुकान पर गया, कुछ पैसा रुक गया था वह बहुत देर से पहुँचा था। परन्तु वहाँ पर दृश्य ही कुछ और बना। सिद्धोमल जी ने कहा—देखो घबराना नहीं मुसीबत सब पर आती है। साहस से काम लो। जो तुम्हें चाहिए वह सब मैं दूँगा, बताओ क्या—क्या लेना है। सिद्धोमल की इस कृपा को मैं आज तक नहीं भूला हूँ। वह मुझे सदैव याद रहती है।

श्री डा० अरविन्द मोहन जी बम्बई जा रहे थे, देहली से सीट बुक थी, उसी में देहली के एक व्यापारी की भी सीट बुक थी। दोनों बातें करते रहे, देहली के व्यापारी ने कहा—आप कहाँ से आ रहे हैं? डा० साहब ने कहा—मुरादाबाद से! इस पर देहली के व्यापारी ने कहा—मुरादाबाद में हमारे एक व्यापारी हैं ला० भूकन सरन कागज वाले, क्या आप उनको जानते हैं? डा० साहब ने कहा—हम उनसे कागज लेकर पढ़े हैं। डा० साहब ने कहा—आपका व्यापार कागज का है? हाँ! हमारी दुकान का नाम सिद्धोमल एण्ड सन्स है, यह हमारी सूची में सबसे ऊपर हैं और अत्यन्त विश्वासी भी हैं। कुछ समय पश्चात् नन्नूमल के मुनीम चन्दन जी ने मुनीमी छोड़कर अपना व्यापार शुरू कर दिया और मुझे बुलाकर कहा—वीरन मैंने अपना काम कमलेश पेपर मार्ट के नाम से शुरू कर दिया है। मैंने कहा—अब आपके यहाँ से ही माल जायेगा। मैंने नन्नूमल की दुकान पर ही जाना बन्द कर दिया।

एक दिन मैं नन्नूमल की दुकान के आगे से जा रहा था, उन्होंने मुझे बुलाया और एक एकाउण्टबुक पेपर का नमूना दिखाया और मैं नमूना देखकर ही चला गया। मन में कहा—जब तुम माल नहीं देना चाहते थे और अब हम तुमसे माल नहीं लेना चाहते।

सुमत प्रसाद एण्ड सन्स और श्याम पेपर मार्ट के यहाँ से भी माल आता रहता था। इन दोनों व्यापारियों ने मेरा घर दुकान कुछ नहीं देखी थी, केवल मेरे सत्य व्यवहार के कारण ही वे माल सीधा ही भेज देते थे। एक बार श्याम पेपर मार्ट ने एक—एक सप्ताह के अन्तर से तीन बार माल भेज दिया। मैंने देहली जाकर कहा—आपने यह क्या किया जो मेरे ऊपर इतना बड़ा उधार कर दिया, श्याम ने कहा—हम व्यापारी को निगाह से पहचान लेते हैं वह कैसा है, हमने आपको परख लिया है। हमारा पैसा मारा नहीं जायेगा और कहा—यह माल आपको अच्छा लाभ देगा, वैसा ही हुआ। मैंने यह कई बार अनुभव किया कि सत्यता और ईमानदारी से अच्छी छवि बनती है और जीवन भी सुखी रहता है।

शिवलाल काशीराम की दुकान खारीबावड़ी में है उसके स्वामी लाला अमरनाथ जी हैं। इनके यहाँ से २ वर्ष से बहियाँ आ रही थी। इस बार कुछ रेट बढ़ गया, मेरा आर्डर जा चुका था फार्म (सी) जाना था। अमरनाथ जी ने मुझे तार दिया आपका आर्डर कैन्सिल कर दिया है। मैंने उसी समय फोन मिलाया और कहा—आपको फार्म (सी) भेज दिया है आपको एन टाइम पर आर्डर कैन्सिल करने का कोई अधिकार नहीं है। माल फौरन भेजें और अगर रेट कुछ बढ़ गया है तो आप उसे बढ़ा सकते हैं। यह आपकी नैतिकता है। माल आया और पहले ही रेट पर आया। परन्तु अगले वर्ष मैंने माल का आर्डर दूसरे व्यापारी को दिया। मेरे पास दुकान पर लाला अमरनाथ जी स्वयम् आये और आर्डर देने को कहा। मैंने कहा—ऐसे कच्चे व्यापारी से हम व्यवहार नहीं करते जो अपनी बात से हट जाये। उन्होंने अनेक प्रयत्न किये, मैंने उनको त्याग दिया और दूसरे व्यापारी से माल लेने लगा। अब माल श्री वीरेन्द्र बंसल न्यू पेपर स्टेशनरी प्रोडक्ट आगरा से आ रहा है। □□

सावधानी

१९५० में मंगलवार के दिन मैं प्रात:काल ६ बजे की गाड़ी से देहली जा रहा था, माल खरीदने के लिए तीन हजार रुपये मेरे पास थे, गाड़ी मुरादाबाद से ही बनकर जाती थी, गाड़ी में स्थान पिछले डिब्बे में मिला, उसी डिब्बे में मैं बैठा था, उसी के साथ गार्ड का भी डिब्बा लगा हुआ था, उस पूरी बोगी को काट कर कन्ट्रोल रूम के पास ले जाकर खड़ाकर दिया, गाड़ी के छूटने का समय निकल गया, एक घन्टा और लेट हो गई इस डिब्बे में बैठे हुए सभी यात्री घबराने लगे, कहीं गाड़ी चली न गई हो, और यह बोगी यहीं पर खड़ी रह जाये, बहुत से यात्री उतर कर प्लेट फार्म पर देखने गये, मैंने देखा था इस बोगी में गार्ड का डिब्बा भी लगा हुआ है, बिना इसके लगे गाड़ी नहीं जा सकती मैं यह सोचकर चुप बैठा रहा, कुछ देर बाद गाड़ी चल पड़ी मेरे सामने वाली सीट पर पहले एक मियाँ बन्धु बैठे थे, उनके उतर कर चले जाने पर एक हिन्दु व्यापारी बैठ गया, उतरने चढ़ने में मियां की जेब कट गई, वह उस व्यापारी के सिर हो गये, जो वहाँ बैठ गया था। उसने कहा—मैंने जेब नहीं काटी विवाद बढ़ता गया कैलसा स्टेशन पर पुलिस आई, दोनों की बात सुनी गई। मियाँ ने अपने नोटों की गिनती बताई पुलिस ने दूसरे की तलाशी ली, उसने भी तलाशी लेने से पहले कहा—मेरे पास इतने नोट हैं और इस—इस प्रकार के हैं, उस पर कुछ और नहीं था अमरोहा स्टेशन पर पुलिस ने मियाँ को ले जाकर दूसरे डिब्बे में बैठा दिया।

मैं मन ही मन में सोच रहा था, यदि दैव योग से व्यापारी के पास भी उतने ही नोट होते जो मियाँ बता रहे थे तो यह अवश्य ही चोर समझा जाता। मैंने चन्द्रकान्ता पढ़ी थी, उसी के कारण सावधानी का विचार उठा, उसके पश्चात् जब भी मैं देहली गया तो सौ वाले नोटों के नंबर तथा अन्य नोटों के विवरण की एक कापी घर पर और एक अपने पास रखने लगा। ☐☐

पं० नरोत्तम व्यास की सम्मति

मेरी पुस्तक इच्छानुसार सन्तान १९५८ में प्रकाशित हो चुकी थी। उसका विज्ञापन नगर में वितरित कराया, उस विज्ञापन को पढ़कर चौ० लक्ष्मण प्रसाद जी सर्राफ घर जाते हुए मेरी दुकान पर आये और कहा—क्या आप ही का नाम वीरेन्द्र गप्त: है? मैंने कहा—जी हाँ उसके पश्चात् बड़ी ही उपेक्षा के साथ बोले कि संग्रह किया होगा? मैंने कोई उत्तर नहीं दिया और वह चले गये। एक मास के पश्चात् पं० नरोत्तम व्यास बम्बई से मुरादाबाद आये थे, शाम को घूमने निकले मेरी दुकान पर पिता जी के पास मिलने आये। मैंने उनको एक पुस्तक इच्छानुसार सन्तान की भेंट की, कहा इसे देखूँगा पुस्तक लेकर चले गये। अगली बैठक उनकी चौ० लक्ष्मण प्रसाद सर्राफ की दुकान की थी। चौधरी साहब ने पुस्तक को देखा, रात्रि को घर जाते समय मुझसे फिर वही शब्द कहे—'संग्रह अच्छा किया है' इस पर मैंने कहा—चौधरी साहब मेरा एक प्रश्न है, क्या आप यह वता सकते हैं कि आदि सृष्टि से आज तक केवल अग्नि, वायु, आदित्य, अंगिरा इन चार ऋषियों को छोड़ कर बिना पढ़े किसी ने कुछ लिखा है? जबकि मैंने प्रत्येक उद्धरण के साथ उसका प्रमाण भी अंकित किया है। मैं यह नहीं कहता कि मैंने लिखी है, मैंने तो केवल क्रम बद्ध रूप ही दिया है। इस पर लक्ष्मण प्रसाद जी ने कहा—व्यास जी बता रहे थे कि मैंने इस विषय पर आजतक कोई पुस्तक नहीं देखी, और कह रहे थे कि इतनी छोटी आयु में यह प्रयास प्रशंसनीय है। □□

गऊ रक्षा

१९६५ में, मैं और हमारे मित्र श्री राजाराम जी, नित्य प्रात: काल घूमने जाते थे, स्टेशन रोड़ आर्य समाज के पास हम दोनों इध र से जा रहे थे उधर सामने से डा० हंसराज चौपड़ा आ रहे थे, हमारी

और डा० साहब की नमस्ते हुई, डा० साहब ने कहा—आज मंगलवार है सायं काल के समय टाउन हाल के मैदान में गऊ रक्षा के बारे में एक सभा हो रही है उसमें आप दोनों आये। मैंने कहा—डा० साहब गाय खाने के लिए कम, चमड़े के लिए अधिक मारी जाती है, इस पर डा० ने कहा—नहीं नहीं! मैं यह नहीं मानता, कारण यह था कि डा० साहब स्वयं चमड़े का जूता पहन रहे थे। सायं काल को हम दोनों सभा में गये, सभा का मंच बहुत ऊँचा था दैवयोग से उस समय डा० चोपड़ा ही बोल रहे थे, उसी समय मेरी और चोपड़ा की दृष्टि मिली तो चोपड़ा ने कहा—कि कुछ लोगों का यह विचार है कि गाय खाने के लिए कम और चमड़े के लिए अधिक मारी जाती हैं, मैं इसे नहीं मानता। डा० चोपड़ा जी सार्वजनिक रूप से यह शब्द कह तो गये परन्तु उसका उनके मन पर स्वयं इतना प्रभाव बना कि उस जूते के पश्चात् आज तक चोपड़ा जी ने चमडे का जूता नहीं पहना। मैं स्वयम् १९४८ से ही चमड़े को त्याग चुका था। □□

सी. एल. राकेश

१९६४ के आसपास की बात है दुकान पर छोटे भाई राजेन्द्र नाथ बैठे थे मैं दुकान पर नहीं था, उस समय बिक्री कर अधिकारी सी. एल. राकेश सर्वे करने आये, एक पुस्तक पुत्र प्राप्ति का साधन ले गये थे, अगले दिन सायंकाल को मैं घर से बाँस के कागज का रिम कन्धे पर रखे हुए दुकान पर आ रहा था। मार्ग में अत्तारोगली के नुक्कड़ पर रामनाथ मुखिया की दुकान पर सी. एल राकेश बैठे थे, उन्होंने मुझे देखकर कहा—लाला जी आप कहाँ जा रहे हैं, मैने कहा—दुकान पर, सी. एल. राकेश ने कहा—कि मैं अभी आ रहा हूँ, इस पर मैंने कहा—मैं यहीं रुक जाऊँ राकेश बोले नहीं नहीं मैं दुकान पर ही आ रहा हूँ। मैंने सोचा क्या मुसीबत आयी कल तो सर्वे किया ही था? मैं दुकान पर आया पीछे से सी० एल० राकेश भी आ गये, और कहा—दवा चाहिए। मैंने कहा कितना समय हो गया है। राकेश—मुझे नहीं मालूम, मैंने कहा आप कहाँ रहते हैं?

राकेश—मैं जेल के पीछे गली में अन्तिम मकान में रहता हूँ, मैंने कहा—मैं रात्रि को आपके घर आ रहा हूँ, आप मिलेंगे। मैं घर पर गया पत्रे में देखा कल ही का दिन शेष है औषधि देने का, मैंने कहा—राकेश जी यह औषधि है कल प्रात:काल देनी है भूल न जाना, मैं चला आया समय आने पर विक्टोरिया महिला चिकित्सालय, जिसका वर्तमान नाम जिला महिला चिकित्सालय है। उसमें पुत्र का जन्म हुआ, मैं और मेरे मित्र राजाराम दोनों जने मंगलवार के दिन चिकित्सालय पहुँचे, बिक्रीकर अधिकारी सी० एल० राकेश तथा दूसरे अधिकारी जे० एस० मिश्रा बैठे हुए थे, मुझे देखकर राकेश खड़े हुए और मेरा धन्यवाद करने लगे, कुर्सी आई हम दोनों भी वहीं बैठ गये। श्री राकेश जी ने जे० एस० मिश्रा जी से कहा—आप ही की औषधि से इस लड़के का जन्म हुआ है और फिर मुझसे कहा—लाला जी मिश्रा जी के पास भी एक कन्या ही है। इनके भी लड़का होना चाहिए, मैंने मिश्रा जी से निवास स्थान का पता ज्ञात किया और अगले दिन एक पुस्तक इच्छानुसार सन्तान उनको दे आया। कुछ दिनों के पश्चात् श्री विश्वनाथ जी (भगत जी) का बिक्रीकर का केस जे० एस० मिश्रा के पास लगा था, उसमें केवल यह कमी थी कि एक व्यापारी का फार्म सी नहीं था। मैं एक दिन भगत जी को लेकर श्री मिश्रा जी के पास गया, मैंने उनसे कहा—यह हमारे मित्र हैं, कवि हैं, उसी समय भगत जी ने कहा—यदि आपकी आज्ञा हो तो एक रचना सुनाऊँ, मिश्रा जी ने कहा—हाँ, भगत जी ने रचना सुनाई, घड़ी में ९ बज रहे थे मैंने कहा—आपको कार्यालय जाना है देर हो रही है फिर कभी आपके दर्शन करेंगे, यह कह कर चले आये, रास्ते में भगत जी ने कहा—आपने उनसे कुछ कहा नहीं? मैंने कहा—जो काम बिना कहे हो जाये तो उसे कहने की क्या आवश्यकता। भगत जी को कुछ निराशा सी बनी, अगले ही दिन केस था जब भगत जी श्री जे० एस० मिश्रा जी के पास पहुँचे तो देखते ही कहा—कि कल आप ही गुप्त: जी के साथ आये थे? भगत जी—जी हाँ! क्या परेशानी है? सर—एक फार्म सी व्यापारी के यहाँ से अभी तक नहीं आया, मैंने फिर उसे पत्र लिखा है दो चार

दिन में आ जायेगा, मिश्रा जी—अच्छा आते ही हमें दिखा देना। भगत जी चले आये कार्य पूरा हो गया, यह सारी चर्चा भगत जी ने वहाँ से लौटकर बताई।

कुछ समय पश्चात् श्री सी० एल० राकेश जी ने पुत्र जन्म के उपलक्ष्य में भोज का आयोजन किया उसमें मुझे भी आमन्त्रण था, मैं गया वहाँ पर देखा पं० जी हवन करा रहे थे। गायत्री मन्त्र उल्टा पढ़ रहे थे और अन्त में नीबू काटकर हवन की अग्नि पर निचुड़वाकर बुझा दिया। मुझे यह देखकर बड़ा क्रोध सा आ रहा था। मैं जानता था कि यह पौराणिक पं० जब कभी किसी शूद्र के यहाँ हवन कराते हैं तो मन्त्र उल्टा बोलते हैं और अन्त में हवन की अग्नि को बुझा देते हैं। सी० एल० राकेश जाटव थे इस कारण उन्होंने ऐसा किया और इससे पूर्व वही पं० जी अन्दर बैठे एक मुसलमान वकील के साथ मदिरा का पान कर रहे थे 'गुड़ खायें गुल गुलों से परहेज करें' उल्टे मन्त्र से हवन करें, अग्नि को बुझा दें, क्योंकि यह कार्य शूद्र के यहाँ था परन्तु उसी के प्यालों में मदिरा पान करने से धर्म नहीं जाता? कैसी उल्टी बुद्धि है। जब मैंने पं० जी से कहा—आपने यह क्या किया? इस पर पं० जी कुछ कहना चाहते थे उसी समय श्री राकेश जी ने रोक दिया और पं० जी से कहा—आप चुप रहें आप लाला जी का मुकाबला नहीं कर सकते।

श्री राकेश जी के पिता जी भी आये हुये थे वह भी मुझसे मिले वह कायमगंज जिला फर्रूखाबाद के रहने वाले थे, मैंने उनसे कहा—की कायमगंज में हमारे मौसा जी श्री लक्ष्मी नारायण जी ताले वाले भी रहते हैं वह आर्य समाज के प्रमुख कार्यकर्ता हैं, इस पर उन्होंने कहा—मैं उनके पास जाकर बैठता हूँ और आर्य समाज के सत्संग में भी जाता हूँ। □□

दीपावली सूनी

श्री विश्वनाथ भगत जी मेरी दुकान पर बैठे थे, दीपावली का पर्व निकट था, कहने लगे—अब की दीपावली बिल्कुल सूनी जायेगी। मैंने कहा—क्यों? भगत जी ने उत्तर दिया—जेब बिल्कुल

खाली है। मेरी दुकान पर एक दान पात्र रखा रहता था, उसमें जो ग्राहक बही ठीक कराने आते थे तो उनसे दान पात्र में कुछ डालने को कह देता था, वही उसमें संचित हो रहा था मैंने उस पात्र को उंठाकर खोला उसकी सब राशि बिना गिने एक कागज की थैली में भरकर भगत जी को दे दी, उन्होंने उसे ग्रहण कर कहा—जब आप दान पात्र से राशि लौटकर थैली में भर रहे थे तो मेरे मन में यह विचार उठने लगा कि यदि यह मुझे दे दें तो मेरी दीपावली सूनी न रहेगी आपने उसी क्षण मेरे हाथ में पकड़ा दी, इसी के साथ उनके नेत्रों से कुछ स्नेह भरे मोती भी टपके। वह अच्छे कवि थे, उसके धन्यवाद में उन्होंने भोजपत्र पर एक रचना अपने हाथ से लिखकर मुझे १८ नवम्बर १९६८ को भेंट की।

रचना इस प्रकार थी—

निश्चय ही तुम वीर पिता सम, पालन करने वाले।
काले दिन पर देखे तुम कुछ गिने चुने उजियाले।
द्वेषजीत! तुम भाई, गुरु अरु मित्र सभी के सच्चे।
सागर से गम्भीर, कभी मन से हो भावुक बच्चे।
रहो जगत में सदा सर्वदा धर्म दीप तुम बनकर।
मानवता को अमृत दो जीवन—मंथन विष पीकर।
मुद्रा का मुद्रा से बदला हो सकता है होगा।
मन का सबसे भारी बोझा कभी न हल्का होगा।
प्रेम भार इतने हैं सर पर कवि गिनने में अक्षम।
बदला देने हेतु, एक क्या कई जन्म भी हैं कम।

(विश्व गुप्त)

दीपावली के दिन सूर्यास्त के पश्चात् व्यापारी अपनी—अपनी दुकानों पर घी का दीपक जला कर एक दूसरे को मिठाइयाँ देते हैं, मैं भी ऐसा ही करता था, श्री विश्वनाथ जी की दुकान बर्तन बाजार में थी, मैंने उनकी दुकान पर भी मिठाई अश्विनी कुमार के हाथ भिजवाई। उसके दो दिन पश्चात् श्री विश्वनाथ जी दुकान पर आये और कहा—वीरेन्द्र जी संसार में सब देकर लेना ही चाहते हैं जिसके यहाँ से कुछ आने की आशा नहीं होती, उसकी ओर कोई देखता

भी नहीं उसके विपरीत आप यह जानते हैं कि भगत जी के यहाँ से कुछ नहीं आना है तो भी आपने दीपावली की मिठाई भिजवाई, जबकि मेरी दुकान के आस—पास व्यापारी और नातेदार भी हैं, उनमें से किसी ने एक बताशा तक नहीं भेजा, केवल एक आप ही ने मेरा ध्यान रखा। क्या मैं इस बात को भूल सकता हूँ? ◻◻

वीर गति

लल्लू सिहं जी ग्राम फरीदपुर पो. रजतपुर के निवासी हैं वह मुरादाबाद पढ़ाई के लिए आया करते थे। यदा—कदा शंका समाधान के लिए मेरी दुकान पर भी आ जाते थे। पी. ए. सी. की २४ वीं वटालियन के लालाराम टाइपिस्ट रविवार के दिन आर्य समाज स्टेशन रोड सत्संग में गये, उन्होंने वहाँ पर ऋषिवर दयानन्द जी का जीवन चरित्र पढ़ने के लिए लेना चाहा, तो वहाँ के सेवक रामचन्द्र जी ने मेरी दुकान का पता बता दिया, वह मेरे पास आये और ऋषि का जीवन चरित्र पढ़ने की इच्छा व्यक्त की। मैंने कहा मेरे पास जीवन चरित्र है, आप कल ले लेना मैं घर से लाकर रख लूँगा।

रविवार के दिन विद्यालय का अवकाश था लल्लू सिंह भी सायं काल के समय गंगा के किनारे घूमने चले गये, वहीं पर ही लालाराम जी से भेंट हो गई। रामगंगा किनारे बैठकर बातें होती रहीं, सूर्यास्त भी होने लगा, दोनों उठकर चलने लगे, लालाराम लल्लू सिंह को साथ लेकर अपने क्वाटर पर ले आये चाय बनाकर पिलाई और अपने कमाण्डेन्ट से भी भेंट कराई। अंधकार होने लगा था, लल्लू सिंह भी उठकर चल दिये और वह सीधे मेरी दुकान पर आये और उक्त सारी घटना सुनाई। अगले दिन प्रातः समय लालाराम जी मेरी दुकान पर आये, और मैंने कलकी सारी घटना बताई, इसे सुनकर लालाराम जी चकित हो कहने लगे, क्या आप वहाँ पर थे? यह घटना सूर्यास्त समय की है आप तक कैसे पहुँची। मैंने कहा—यह कोई आश्चर्य जनक बात नहीं है और मैंने उनको

कलकत्ता निवासी श्री देवेन्द्र बाबू द्वारा लिखित दो भागों में वैदिक यंत्रालय अजमेर से प्रकाशित ऋषि जीवन चरित्र दिया। उन्होंने उसका पहला भाग ले जाने के लिए मुझसे कहा, मैंने कहा आप सहर्ष ले जाये।

कुछ समय के पश्चात् ही १९६२ में चीन ने भारत पर आक्रमण कर दिया था। मुरादाबाद की २४वीं बटालियन को तेजपुर जाने का आदेश मिला। उसी में लालाराम टाइपिस्ट भी जाने की तैयारी करने लगे। रात्रि को लगभग ८बजे मुरादाबाद रेलवे स्टेशन पर तीन युवक घूम रहे थे, उनसे लालाराम जी ने कहा—क्या आप मण्डी चौक में श्री वीरेन्द्र नाथ जी कागज वालों को जानते हैं? युवकों ने कहा हाँ हम जानते हैं। लालाराम जी ने कहा—आप उनसे कह देना कि हमारी बटालियन को तेजपुर जाने का शीघ्रता से आदेश मिला था, इस कारण मैं उनसे नहीं मिल सका, सो आप उनसे कह देना कि लालाराम तेजपुर की ओर जा रहे हैं और वहीं से वह आपको पत्र लिखेंगे। एक युवक ने आकर यह समाचार दिया और एक सप्ताह पश्चात् तेजपुर से लालाराम जी का पत्र आया—लिखा था "हम रात्रि को बैठ ऋषि जीवन का पाठ करते हैं और सब बड़ी रुचि से सुनते हैं। पुस्तक समाप्त हो जाने पर मैं आपको वापिस भेज दूँगा तो आप इसका दूसरा भाग मेरे पास भेज देना, धन्यवाद!"

इसके पश्चात् एक पत्र तेजपुर से फिर आया और उसमें लिखा था। "कि हम अब एक अज्ञात स्थान की ओर जा रहे हैं, वहाँ से लौटकर आपको पत्र लिखेंगे," इसके पश्चात् आजतक उनका कोई पत्र नहीं आया। लगता है उस दिव्य पुरुष लालाराम टाइपिस्ट को वहीं वीर गति प्राप्त हो गई। ☐☐

ऐसे रण बाँकुरे को नमन

सन् १९६२ में क्यूबा पर संसार की दो महाशक्तियाँ रूस और अमरीका आमने सामने आ गये। इस अवसर का लाभ उठाने के लिए चीन ने भारत पर आक्रमण कर दिया।

सन् १९३९ के विश्व युद्ध में रंगून क्षेत्र के जनरल मैकार्थर से हिन्दी दैनिक हिन्दुस्तान के पत्रकार मिले और उनसे भारत चीन युद्ध में भारतीय सैनिकों की वीरता के विषय में अपने विचार व्यक्त करने को कहा था।

जरनल मैंकार्थर ने कहा—युद्धकाल में मेरी कमान में इंग्लैण्ड, आस्ट्रेलिया और भारत की कम्पनियाँ काम कर रहीं थीं। उस समय जर्मनी के कमांडर रोमेल का सभी सैनिकों में भय छाया हुआ था। कोई भी सेना रोमेल से टकराने को तैयार नहीं थी। उस समय इग्लैण्ड के प्रधानमन्त्री चर्चिल का पत्र आया कि रोमेल रंगून की ओर बढ़ रहा है, उसे रोको! कुछ घण्टों के पश्चात् रोमेल को रोकने के लिए तार द्वारा आदेश आया। शाम को वायर लैस आया। परन्तु मैं असमर्थ था, कोई भी कमाण्डर उनके सामने जाने को तैयार नहीं था। सायंकाल के समय मेरे खेमे में एक भारतीय टोली नायक अपने काम से आया, उसने मुझे चिन्ता युक्त देखकर कहा —क्या बात है सर! मैंने कहा—चर्चिल का यह पत्र और तार आया है रोमेल को रोकने के लिए, परन्तु कोई सैनिक रोमेल के सामने जाने को तैयार नहीं, बस यही चिन्ता है?

उस टोली नायक ने कहा—आप चिन्ता न करें, उसने अपनी बन्दूक आकाश की ओर उठाते हुए कहा—या रोमेल नहीं या मैं नहीं। मेरे अन्दर जान में जान आई, मैंने कहा—तुम्हें क्या चाहिए। उस सैनिक ने कहा—कुछ नहीं मैं केवल अपनी टुकड़ी को ही लेकर जाता हूँ। उस वीर रण बाँकुरे सैनिक ने रात भर के भयंकर युद्ध में रोमेल को १०—१२ मील पीछे धकेल दिया। रोमेल को तो पीछे धकेल दिया परन्तु वह वीर योद्धा भी वापिस नहीं आया। वह अपने साथियों सहित वहीं पर बलिदान हो गया।

जब वेतन लेकर भारतीय सैनिक एक मुट्ठी भुने चने और एक बोतल पानी के सहारे यह कौशल दिखा सकते हैं तो अपनी मात्र भूमि के लिए क्या कुछ नहीं कर सकते। इसी से अनुमान लगाया जा सकता है।

यह सांक्षातकार हिन्दी दैनिक हिन्दुस्तान में १९६२ में युद्ध काल में ही पढ़ा था। □□

जीव की अल्पज्ञता

१९६५—६६ के आस—पास की बात है कि आर्य समाज मण्डी बाँस मुरादाबाद में नगर की सभी आर्य समाजों का सम्मिलित कार्यक्रम मास के अन्तिम रविवार को होता था। उसमें श्री विश्वबन्धु शास्त्री जो उत्तर प्रदेश आर्य प्रतिनिधि सभा के प्रधान भी थे उनका प्रवचन हुआ। प्रवचन के मध्य बोलते हुए शास्त्री जी ने कहा —"जीवात्मा मोक्ष में जाने के पश्चात् सभी शुभ कर्मों के फलों को भोग कर फिर आवागमन में आता है" मैंने खड़े होकर इस पर प्रश्न किया—विद्वानों के द्वारा सुना है और कुछ पढ़ा भी है कि जब जीवात्मा के सभी शुभाशुभ कर्मों के सभी फल समाप्त हो जाते हैं तभी मोक्ष मिलती है, तो फिर कौन से शुभ कर्मों के फलों को भोगकर मोक्ष से लौटता है? यह मेरी समझ में नहीं आया।" उस समय श्री बलदेव जी अग्निहोत्री एवं मौलाना सत्यदेव जी भी बैठे थे। श्री बलदेव जी ने मुझे कुछ उलझाना चाहा जैसी उनकी आदत थी। इस पर मैंने कहा—मैं और कुछ नहीं जानता जो शंका थी वह सामने रख दी। इस पर मौलाना सत्यदेव जी ने कहा—यह सही है सांख्यदर्शन ३/२३ में आता है 'ज्ञानान्मुक्ति' मुक्ति ज्ञान से ही मिलती है बिना ज्ञान के नहीं, इस कारण कर्म अकर्म सभी समाप्त होने पर ही मुक्ति मिलती है। श्री शास्त्री जी मौन रहे।

उसी दिन सायंकाल का भोजन श्री मुन्नी लाल जी के घर पर था। उनका घर राजोगली में मेरे घर के सामने है। मैं सायंकाल के समय ऊपर छत पर जाकर सन्ध्या गायत्री जाप और उसके पश्चात् ऊँचे स्वर से त्वमेव माता च पिता त्वमेव की १६ पंक्तियों का पाठ करता था इस ध्वनि को सुनकर शास्त्री जी ने श्री मुन्नीलाल जी से कहा—'भयानाम भयं भीषणानाम' का पाठ करने वाले कौन हैं? मुन्नी लाल जी ने कहा—यह वीरेन्द्र जी हैं नित्य सन्ध्या करने ऊपर आते हैं।

पुनः आर्य समाज मण्डी बाँस मुरादाबाद में सम्मिलित कार्यक्रम रखा गया उसमें भी श्री विश्वबन्धु जी शास्त्री आये और उनका प्रवचन होने लगा, प्रवचन के मध्य कहा—"परमात्मा यह

जानता है कि अमुक जीवात्मा हजार जन्म आगे आने वाले जन्म में अमुक समय पर अमुक कार्य करेगा।'' मैंने खड़े होकर शंका व्यक्त की, इस पर शास्त्री जी ने कहा—अन्त में बात करेंगे। कार्यक्रम समाप्त हो गया मेरे सहित ३, ४ व्यक्ति और रुक गये उनमें से एक बन्धु ने सत्यार्थ प्रकाश में कुछ दिखलाया मैंने एक स्थान पर 'कौमा' लगाकर, उनसे पढ़ने को कहा—तो वह बन्धु बोले अब तो आपकी बात सत्य लगने लगी, इस पर मैंने कहा—सत्यार्थ प्रकाश पढ़ते समय दृष्टि पैनी रखनी चाहिए, इसी बीच शास्त्री जी आये और पास बैठकर बोले क्या प्रश्न है? मैंने कहा—आपकी बात समझ नहीं आई। शास्त्री जी ने कहा—मान लीजिए मैंने एक कक्षा को पढ़ाया, परीक्षा के समय पर मैंने ही प्रश्न पत्र बनाया, देव योग से उसी कक्षा का मुझे गाइड बना दिया गया, तो मुझे यह मालूम है कि मैंने इन बच्चों को यह—यह पढ़ाया है, और मुझे यह भी मालूम है कि मैंने प्रश्न पत्र में अमुक—अमुक प्रश्न रखे हैं, तो मैं यह जानता हूँ कि अमुक—अमुक बच्चा अमुक—अमुक प्रश्न कर सकता है। मैंने कहा—क्या आप यह बता सकते हैं कि अमुक बच्चा इस समय कौन सा प्रश्न हल कर रहा है? इस पर शास्त्री जी ने कहा—हम सर्वज्ञ नहीं अल्पज्ञ हैं। मैंने कहा—आपने जिस प्रकार के उदाहरण से समाध ान करना चाहा मेरा प्रश्न उसी के अनुसार है। मैंने कहा—मान लीजिए श्री विश्वबन्धु शास्त्री अपनी सात्विक आय से अर्जित धन लेकर घर जा रहे हैं यह परमात्मा जानता है और वह यह भी जानता है कि आगे चलकर अमुक व्यक्ति जेब काटकर धन निकाल लेगा, और वह यह भी जानता है कि घर पर बच्चे स्त्री सब प्रतीक्षा में बैठे हैं कि कब शास्त्री जी आयें और सामान लाकर भोजन बनाया जाये। तो क्या परमात्मा उस जेब कतरे को यह नहीं बता सकता कि तू उसकी जेब मत काट। जब वह ऐसा नहीं कर सकता तो परमात्मा के जानने से क्या लाभ, दूसरे जब उसे मालूम है कि यह जेब काटेगा तो वह अपराधी भी नहीं रहा, जब अपराधी नहीं है तब दण्ड भी नहीं मिल सकता, इस प्रकार न्याय व्यवस्था भी अस्त व्यस्त हो जायेगी।

□□

दुर्गादत्त त्रिपाठी

मेरी पुस्तक 'पुत्र प्राप्ति का साधन' १९६३ में छपी थी। मन में विचार आया कि इसका अंग्रजी में रूपान्तर हो। श्री ओम प्रकाश जी सेठ जो पंजाब नैशनल बैंक में कार्य करते थे, वे इस समय मेरठ में सेवा निवृत होकर जन हितार्थ होम्योपैथिक चिकित्सा करते हैं। उनके पुत्र डाक्टर हैं और चौरसिया नर्सिंग होम चला रहे हैं। उनसे मैंने पुस्तक के रुपान्तर की बात कही, उन्होंने रुपान्तर कर टाइप कराकर मुझे दिया और उसका नाम दिया 'हाउ टू गैटिंग ए सन'। मैंने उसे डा० हरिशंकर पत जी को दिखाया, डा० साहब ने अवलोकन कर कहा—रुपान्तर सही है, परन्तु उसमें भाषा की सरसता नहीं। आप इसे हिन्दू कॉलेज के अंग्रेजी के प्रोफेसर हैं उनको दिखायें। मैं उनके पास गया, उन्होंने कुछ टाल मटोल की भाषा में बात की, जैसा कि आज कल पढ़े लिखे अभिमानी पुरुष करते हैं। मैं यहाँ पर उनका नाम नहीं लेना चाहता, केवल संकेत मात्र ही कह रहा हूँ। प्रोफेसर ने कहा 'टू' के साथ 'गैटिंग' कैसे आ सकता है, यह नाम गलत है। मैनें कहा इसी लिए डा० पंत जी ने आपके पास भेजा है। परन्तु उनका व्यवहार टालने का ही रहा। मैं चला आया।

मैंने महेश जी से इसकी चर्चा करी उन्होंने कहा—हम दुर्गादत्त त्रिपाठी जी से बात करेंगे। एक दिन सायंकाल के समय अमरोहा गेट पर श्री चन्द्रसेन जी लाल रगड़े वालों की दुकान पर त्रिपाठी जी बैठे थे, मैं उनको नहीं पहचानता था। मैं दुकान के आगे से जा रहा था। उसी समय महेश जी ने मुझे आवाज दी और श्री दुर्गादत्त त्रिपाठी जी से भेंट कराई। मैंने उसी समय टाइप की हुई कापी और मूल पुस्तक 'पुत्र प्राप्ति का साधन' ले जाकर दिखाई और पूर्व के प्रोफेसर का व्यवहार और पुस्तक के नाम की बात कही। त्रिपाठी जी ने कहा—नहीं 'गैटिग' के साथ 'टू' आ सकता है, नेहरू जी ने भी कई स्थानों पर लगाया है, परन्तु यह नाम ही मूल रूप से गलत है। 'गैटिंग' का अर्थ है जो वस्तु हमें दीख रही है उसे प्राप्त

करना है, परन्तु यहाँ पर जिस वस्तु को हम प्राप्त करना चाहते हैं वह दीख ही नहीं रही। इसलिए यहाँ पर इसका नाम होगा। ''हाऊ टू बिगैट ए सन'' यह तर्क मेरे मन को स्वीकार हुआ और मैंने उनसे इसका रूपान्तर करने का आग्रह किया, जिसे त्रिपाठी जी ने स्वीकार कर पुस्तक का रूपान्तर कृतज्ञता व्यक्त करते हुए १/१/१९६६ को मुझे दिया।

उसे लेकर मैं डा० हरिशंकर पतं जी से मिला। इस रुपान्तर को देखकर पंत जी ने कहा—अब सही रूप पुस्तक का बना है और अपनी सम्मति भी लिखकर दी।

दुर्गादत्त त्रिपाठी जी उच्च कोटि के कवि थे, वह सुमित्रा नन्दन पंत की कोटि के थे। अनके काव्य ग्रन्थों की रचना की 'गांधी सम्वत् सर' महाकाव्य मैंने प्रकाशित किया था। योग्यता और यश अथवा भाग्य दोनों ही अलग—अलग हैं। त्रिपाठी जी की योग्यता सूर्य के समान है। परन्तु भाग्य ने कभी साथ नहीं दिया। इसका एक कारण यह भी हो सकता है कि आपकी भाषा सरल नहीं है। बिना शब्द कोश के अर्थ समझना कठिन है। साथ में स्वरचित शब्दों का अर्थ वही जान सकते थे। त्रिपाठी जी के रचे कुछ शब्दों का अर्थ शब्दकोश में भी नहीं मिलता था

एक बार त्रिपाठी जी ने कहा—वीरेन्द्र जी! 'गांधी सम्वत् सर' में लगाया आपका पैसा वापिस नहीं मिला, इसका मुझे खेद है। मैं इस भार को उतारना चाहता हूँ मैं 'सत्यार्थी' नाम से महर्षि दयानन्द के जीवन और सत्यार्थ प्रकाश पर लिखूँगा। कुछ लिखा भी परन्तु प्रभु को यह स्वीकार नहीं था। त्रिपाठी जी रोग ग्रस्त हो गये, चिकित्सा का कोई लाभ न मिला और वे ३१/१/७९ को स्वर्ग सिधार गये।

सरल स्वभाव

१९६४ के आसपास की बात है कि बनारस के सुविख्यात भारतीय दर्शन के प्रकाण्ड पंडित डा० भिक्खन लाल जी आत्रेय अपनी विदेश यात्रा से लौटते समय नगर मुरादाबाद में पधारे, आपका

आर्य समाज स्टेशन रोड पर भव्य समारोह के साथ अभिनन्दन किया गया। अभिनन्दन का धन्यवाद देते हुए उन्होंने अपनी यात्रा के संस्मरण सुनाये, उसी के बीच आपने बताया "मैंने अनेक स्थानों पर भारतीय दर्शन पर प्रवचन दिये, जब मैं फ्रांस पहुँचा तो वहाँ भी मेरा भारतीय दर्शन पर प्रवचन हुआ, प्रवचन के पश्चात् एक वृद्ध महिला ने खड़े होकर प्रश्न किया—डाक्टर साहब यदि हम अष्टांग योग के अंगो पर आचरण किये बिना ही सीधे समाधि की ओर चलने लगें तो इससे क्या हानि लाभ हो सकता है? डा० साहब ने बताया—मैं अष्टाँग योग का नाम सुनकर चकरा गया, मैंने इससे पूर्व अष्टांग योग का नाम ही नहीं सुना था। मैंने राम चरितमानस की एक दो चौपाई बोलकर हाथ जोड़ते हुए कहा—माता जी इस विषय में मैं जितना जानता हूँ, आप उससे कहीं अधिक जानती हैं" सरल स्वभाव के व्यक्ति ने अपनी कमी को जन साधारण के सामने स्वीकार किया। बड़ी अज्ञानता की बात रही कि सारे विश्व में भारतीय दर्शन पर प्रवचन करने जाते हैं और भारतीय दर्शन की नसैनी के पहले डण्डे के बारे में अनभिज्ञ थे, जिसे 'अष्टांग योग' कहते हैं।

आपके सुपुत्र डा० जगत प्रकाश आत्रेय भी अच्छे योग्य व्यक्ति हैं आप के० जी० के० कालेज मुरादाबाद में दर्शन पढ़ाते हैं, दर्शन की पत्रिका भी निकालते हैं, जो विदेशों में रुचि से पढ़ी जाती है आप का मेरे ऊपर विशेष स्नेह रहता है। जब कभी दुकान की ओर से निकलते हैं तो दुकान पर अवश्य ही रुकते हैं, मैं भी उसी प्रकार आपका सम्मान करता हूँ, उस समय पर जो नई पुस्तक प्रकाशित होती है उसे डा० आत्रेय जी को अवश्य भेंट करता हूँ। एक दिन दुकान पर बैठे और प्रश्न किया—वीरेन्द्र जी आप दिन भर दुकान पर रहते हैं, घर का भी उत्तरदायित्व है, सब कुछ अकेले ही देखते हैं और कोई सहारा भी नहीं—तिस पर भी आप इतना लिखते हैं, आपको इतने व्यस्त जीवन में लिखने का समय कैसे मिल जाता है? मैंने कहा—डा० साहब जिस प्रकार व्यसनी अपने व्यसन के लिए समय निकाल लेता है उसी प्रकार मैं भी अपने लेखन कार्य के लिये समय निकाल ही लेता हूँ। सारा लेखन कार्य, प्रकाशन कार्य, स्वध्याय

आदि सब कुछ दुकान पर ही होता है, घर पर समय नहीं मिल पाता, रात्रि को ८ बजे दुकान बन्द करके घर जाना, भोजन करना, समाचार सुनना फिर सीरियल देखकर रात्रि को १० बजे तक विश्राम, प्रातः ५ बजे तक उठना शौचादि से निवृत होकर प्राणायाम गायत्री जाप, सन्ध्या और यज्ञ आदि कार्य से निबट कर घर का कुछ कार्य या सामान लाना है उसे लेकर ९:३० बजे भोजन कर दुकान पर आ जाना, इस प्रकार सब कुछ कार्य दुकान पर ही होता है। डा० साहब ने कहा—आप बड़े पुरुषार्थी, उद्यमी और स्वाध्याय शील हैं। बड़े विद्वान् होते हुए भी आपका पिता और पुत्र दोनों का सरलतापूर्ण व्यवहार प्रशंसनीय है। □□

दुकान पर बोर्ड लगायें

उड़ीसा के डा० पवन कुमार वन्सल ने एक पुस्तक इच्छानुसार सन्तान मगवाई, उसे देखने के पश्चात् वह इतने प्रभावित हुए कि उन्होने २३ अप्रैल १९६५को पत्र द्वारा मुझे सूचित किया कि मेरे सुपुत्र का विवाह १५ मई १९६५ का है मैं उस अवसर पर आपकी पुस्तक इच्छानुसार सन्तान बारातियों को भेंट में देना चाहता हूँ सो आप २५ प्रतियाँ शीघ्र भेज दें।

दुकान पर मैनें एक बोर्ड इच्छानुसार सन्तान का लगाया। इन्द्र कुमार जो मेरे साथ कारोनेशन हिन्दू कॉलेज में पढते थे, वह बोर्ड को पढ़कर मेरे पास आये और पुस्तक मांगी दैव योग से खोलने के साथ ही मेरा चित्र जो पुस्तक में लगा था सामने आया, उसे देखकर कहा—ओहो! यह आपकी लिखी हुई है? बन्द करके छोड़कर चले गये, उसी समय मुझे 'घर का जोगी जोगना आन गाँव का सिद्ध' यह उक्ति याद आ गई अगले दिन से मैंने बोर्ड हटा दिया। उसके पश्चात् एक सज्जन जयपुर से कलकत्ता जा रहे थे उनसे किसी ने लौटते हुए ५ पुस्तकें इच्छानुसार सन्तान की लेते आने को कहा, उन्होंने मेरी पुस्तक किसी के पास देखी थी रुचिकर लगी होगी। वह सज्जन सोमवार की सायं काल को मुरादाबाद स्टेशन पर उतरे, नगर में

आकर कई स्थानों पर देखा दुकान हाथ न आई, अगला दिन मंगलवार का था इस दिन नगर में व्यापारिक अवकाश होता है। बुद्धवार के दिन ढूँढ़ते ढूँढ़ते मेरी दुकान पर आये और कहा—आपने कोई बोर्ड नहीं लगाया? मैंने उक्त घटना सुनाई, इस पर वह बोले आपने अपनी बात को सोचा परन्तु हम परदेसी की कठिनाई को भी तो देखिये? उन्होंने ५ प्रतियाँ इच्छानुसार सन्तान की लीं और बोर्ड लगाने का भी आग्रह किया।

डा० बिसन चन्द्र ठक्कर होम्योपैथी के सुयोग्य चिकित्सक थे उनके सुपुत्र डा० मनसुखलाल ठक्कर ने मेरी पुस्तक इच्छानुसार सन्तान देखी वह इससे इतने प्रभावित हुए कि उन्होंने अपने गुरु जी को एक पुस्तक कलकत्ता भेजी। गुरु जी ने पुस्तक को पढ़ा और डा० मनसुखलाल ठक्कर को पत्र लिखा मैं मुरादाबाद आ रहा हूँ आप मुझे लेखक महोदय से साक्षात्कार करायें। दोनों सज्जन मेरी दुकान पर आये और मिलकर अति प्रसन्न हुए। □□

अद्वैत

संसार के सभी मतमतान्तर 'द्वैत' 'अद्वैत' से ही प्रभावित हैं। 'द्वैत' दो को कहते हैं अर्थात् जो मत दो को मानता है वह 'द्वैत' है। कोई 'ईश्वर' और 'जीव' को मानता है, कोई 'जीव और प्रकृति' को मानता है, तो कोई 'ईश और प्रक्रति' को मानता। इसी प्रकार 'अद्वैत' अर्थात् दो से रहित एक, जो केवल एक को ही मानता है वह 'अद्वैत' हैं। कोई केवल 'ब्रह्म' को ही मानता है, कोई 'जीव' को ही मानता है तो कोई 'प्रकृति' को ही मानता है। सारा संसार इन्हीं दो वादों को मानता है। इससे भिन्न 'वेद' का सिद्धान्त 'त्रैत' तीन को मानता है अर्थात् 'ईश्वर, जीव और प्रकृति' इन तीनों को ही अनादि मानता है। इसकी चर्चा ऋग्वेद १/१६४/२० और अथर्ववेद ९/९/२० में आई है। इन तीन के बिना सृष्टि का निर्माण सम्भव नहीं है।

आर्य समाज मण्डी बाँस मुरादाबाद के १९६८ में प्रधान श्री विन्दाप्रसाद जी तथा मन्त्री श्री मास्टर रामनिवास जी थे। साप्ताहिक सत्संग में एक महात्मा जी आ विराजे, मन्त्री जी ने उनसे प्रवचन देने

को कहा। महात्मा जी मंच पर बैठ कर बोलने लगे। वह 'अद्वैत' वाद के समर्थक थे। सारा प्रवचन 'अहम् ब्रह्मास्मि' पर ही आधारित था, वह अन्त में कन्धे के उपवस्त्र को मंच पर रख कर कहने लगे यही 'ब्रह्मा' है। प्रवचन की समाप्ति पर मन्त्री जी ने कहा—महात्मा जी बहुत बड़े विद्वान् हैं, उन्होंने सागर को गागर में भरकर हमारे सामने रख दिया मेरा महात्मा जी से निवेदन है कि वह जब कभी मुरादाबाद आयें तो हमारी समाज में आने की अवश्य कृपा करें। कार्यक्रम समाप्त होने जा रहा था, मैंने मन्त्री जी से कुछ समय माँगा तो श्री प्रधान जी ने कहा—समय पूरा हो चुका है, आप अगले सत्संग में अपनी बात रखें। मैंने कहा—अगले सत्संग में न तो महात्मा जी होंगे और न आज के सभी श्रोतागण, इसलिए मुझे कुछ समय दिया जाये। मुझे समय दिया गया। मैंने जैसे ही प्रश्न करना आरम्भ किया तो महात्मा जी उठकर खिसक लिये। मैंने कहा—जब सब ही ब्रह्म है तो हमारी भूमि भी ब्रह्म है, जब सारी भूमि ब्रह्म है तो सब जगह कोयला और सोने की खाने क्यों नहीं? मैंने कहा—यह सिद्धान्त आदि जगत गुरु शंकराचार्य का है। वह सारे संसार को और संसार की सभी वस्तुओं को भी ब्रह्म मानते थे।

इनका मुख्य ग्रन्थ है वेदान्तदर्शन और इनको महर्षि दयानन्द जी ने नवीन वेदान्ती कहकर सम्बोधन किया है। ब्रह्म और जीव की एकता सिद्ध करने के लिए इन दो पदों का प्रयोग करते हैं। १—"अहं ब्रह्मास्मि" २— "एकं ब्रह्म द्वितीयो नास्ति"। अहं ब्रह्मास्मि का अर्थ किया "मैं ब्रह्म हूँ" यह अर्थ बिल्कुल गलत है, सही अर्थ यह है कि 'मैं ब्रह्मस्थ हूँ अर्थात् मैं ब्रह्म में स्थित हूँ"। मैं ब्रह्म हूँ ऐसा अर्थ नहीं बनता।

दूसरा है, एकं ब्रह्म द्वितीय नास्ति, इस वाक्य का अर्थ किया जाता है "एकं ब्रह्म ही है, दूसरा कोई नहीं"। इसका यह अर्थ कदापि नहीं हो सकता।

इसका सही अर्थ है—"एकम=एक, ब्रह्म=परमात्मा, द्वितीय=दूसरा, न—अस्ति=नहीं है।" अर्थात् परमात्मा एक है. दूसरा परमात्मा कोई नहीं है। जिसका भ्रम मूलक अर्थ करते हैं, परमात्मा

एक ही है दूसरा कोई नहीं अर्थात् केवल एक ही परमात्मा है और जीव और प्रकृति कुछ नहीं है। जबके इसका सही अर्थ यही बनता है कि "परमात्मा एक ही है दूसरा कोई परमात्मा नहीं है।" यह बात सभी ईश्वर के मानने वालों को मान्य है, जिसमें कोई सन्देह नहीं।

वेदान्तदर्शन का पहला सूत्र कहता है "अथातो ब्रह्म जिज्ञासा" अर्थात् अब यहाँ से ब्रह्म विषयक विचार प्रारम्भ करते हैं।

जब सब चीज ही ब्रह्म है तो ब्रह्म विषयक विचार का क्या औचित्य है। स्पष्ट है जीव अलग है, ब्रह्म अलग है, अर्थात् जीव, ब्रह्म को जानने की जिज्ञासा में हैं।

अन्त में मन्त्री श्री मास्टर रामनिवास जी ने कहा—कि हम नहीं समझ पाये कि महात्मा जी हमारे 'त्रेत' वाद के सिद्धान्तों के विपरीत बोल गये और हमने उन्हें टोका तक भी नहीं, आप सिद्धान्तों से पूरी तरह परिचित हैं, आपने स्पष्ट कर हमें सचेत कर दिया। □□

प्रतिमा उपासना कब से

सृष्टि को बने पौने दो अर्ब वर्ष हो चुके हैं। यह व्यवस्था ७वें मनवन्तर की २८ वीं चतुर्युगी के द्वापर के अन्त समय तक अर्थात् महाभारत के भयंकर युद्ध से कुछ पूर्व समय तक व्यवस्थित रूप से चलती चली आ रही थी। भीषण संग्राम में सब कुछ समाप्त हो गया। इस कारण शनै—शनै अव्यवस्था, स्वेच्छाचारिता, अराजकता, अज्ञानता, अकर्मण्यता और धर्म के स्वरुप में आस्था विश्वास और कर्मकाण्ड में अन्तर आने लगा। परिणाम स्वरुप अनेक प्रकार के नये—नये पन्थ चलने लगे। परन्तु एक बात अच्छी रही कि किसी ने भी वेद और एकेश्वर वाद का परित्याग नहीं किया था। अज्ञानता पराकष्ठा तक पहुँच गई, वेदार्थ को समझने समझाने की सामर्थ्य समाप्त होने लगी, वेद का मनमाना अर्थ करने लगे। यह अवनति का युग २५०० वर्ष तक चलता रहा, ईश्वरोपासना को व्यक्ति भूलने लगे। परन्तु मानव के मन में नैसर्गिक उपासना वृत्ति होने के कारण छटपटाहट होने लगी और मानव अन्धकार में भटकने लगा और

विचारने लगा कि मैं अपनी उपासना की पिपासा कैसे शान्त करूँ। परिणाम स्वरूप बौद्ध और जैन मतों का प्रादुर्भाव हुआ। शाक्यमुनि गौतम बुद्ध और महावीर स्वामी इन दोनों का स्वरुप एक ही व्यक्ति का प्रतीत होता है। दोनों की प्रतिमायें भी एक समान ही लगती हैं। महावीर स्वामी और गौतम बुद्ध के जाने के पश्चात् दोनों के अनुयायियों ने अपनी—अपनी प्रतिमायें बनाकर खड़ी कर दीं। यहीं से ही प्रतिमा उपासना का जन्म हुआ। इससे पूर्व कहीं पर भी किसी की कोई प्रतिमा नहीं थी। धूप और दीपक जलाकर प्रतिमा के दर्शन करके घन्टी बजाना मात्र ही उपासना का प्रकार बन गया।

यह काल अब से २४०० वर्ष पूर्व का है। यही रूप प्रतिमा उपासना का प्रतीक बनकर सारे देश में छाने लगा। इससे पूर्व प्रतिमा उपासना का कोई भी स्वरूप नहीं था। उससे पूर्व सर्वव्यापक, निराकार परमेश्वर की ही सर्वत्र उपासना की जाती थी। कुछ का मानना है कि निराकार की उपासना करने वाले भी अपने ध्यान को केन्द्रित करने के लिए किसी न किसी रूप को माध्यम बनाते हैं। यह बिल्कुल मिथ्या है, निराकार का उपासक किसी को भी अपना केन्द्र बिन्दु नहीं बनाता, वह तो ''ध्यानम निर्विशयम्मन'' वह निर्विषय होकर ध्यान करता है। कितने आश्चर्य की बात है कि पढ़ने वाले बच्चे दो वर्ष के पश्चात् कटकौड़े पर लिखना बन्द करके स्वतन्त्र लिखने लगते हैं। परन्तु यह प्रतिमा उपासक जीवन के अन्त तक भी कटकौड़े पर ही ध्यान लगाये रहते हैं। इनका स्वतन्त्र ध्यान ही नहीं लगता और न जमता है। □□

भूल स्वीकार

१९६४ की चर्चा है, छदम्मीलाल राममूर्ती सरन बर्तन वाले जिनकी दुकान देवेन्द्र नारायण सिन्हा के फाटक के सामने बर्तन बाजार में है, उनके यहाँ पैकिंग का काग़ज जाया करता था। उधार की कॉपी में जिस दिन जो माल गया उसे अंकित कर दिया और जब पुनः आगे कुछ गया तो उसे आगे अंकित कर पिछला भी उसी में

जोड़ दिया जाता है, इसी प्रकार छदम्मीलाल राममूर्ती सरन के यहाँ भी माल गया उसे अंकित कर लिया, जब आगे और गया तो उसे भी अंकित कर पिछला भी उसी में जोड़ दिया था, उसके दो चार दिन के पश्चात् मैं पैसे लेने गया, योग बताया तो इस पर राममूर्ती सरन ने कहा—इसमें कुछ अन्तर है, मैंने दुकान पर आकर कॉपी में देखा तो अन्तर सही था भूल यह बनी कागज ४१ पौंड का था और मूल्य ३९ रुपये का था भूल में ३९ के स्थान पर ४१ रुपये लिख गया, उसी को जोड़ कर पैसे लेने गया था। बहुत विचारा यह गलती हो गई इसका सुधार कैसे हो। उसी दिन मैं कॉपी लेकर मौ० साहु में श्रीभगवान जी के पास गया और सारी बात बताते हुए कहा—अब मुझे क्या करना चाहिए, उस पर श्रीभगवान जी ने कहा—क्या भूल है या जानबूझकर किया है? मैंने उत्तर दिया यह भूल के कारण ऐसा हो गया। उन्होंने कहा आप कापी ले जाकर राममूर्ती सरन को दिखायें और अपनी भूल स्वीकार कर लें, इस पर मैंने कहा वह क्या समझेंगे? इस पर श्रीभगवान जी ने कहा—आप अपनी जगह सही हैं दूसरा जो समझे वह वो जानें आपको कोई चिन्ता नहीं करनी चाहिए और मैंने ऐसा ही किया लाला राममूर्ती सरन जी ने भी इसी सरलता से बात स्वीकार कर ली। □□

विश्वास से विश्वास पैदा होता है

देहली निवासी श्री सुरेश चन्द्र जैन जिन्होंने मुरादाबाद में आकर बल्लम मौहल्ले में जैन एक्सपोर्ट के नाम से व्यापार प्रारम्भ किया, मेरे यहाँ से उनकी फर्म में कागज जाता था कुछ माल गर्ग एण्ड सन्स्, जिसके स्वामी रमेश चन्द्र अग्रवाल थे उनके यहाँ से भी जाता था। एक्सपोर्ट के एक कर्मचारी दर्शन ने चोरी करी, उसे निकाल दिया गया, उसी झमेले में मेरा और रमेश चन्द्र का पैसा रुक गया, रमेश चन्द्र गाली गलौंच और बुरा भला कहकर अपना पैसा वसूल कर लाये। मेरे द्वारा ऐसा करना सम्भव नहीं था, मैं चुप रहा, रमेश चन्द्र के यहाँ से माल का जाना बन्द हो गया, मेरे यहाँ से जाता रहा, कुछ महीनों के पश्चात् एक दिन सुरेश चन्द्र जैन खाली बैठे

थे मैंने भी पास बैठ कर कहा—आप जैनी हैं अहिंसा परमो धर्मा को मानते हैं, मैं आर्य हूँ, आप तो केवल अहिंसा को ही मानते हैं, मैं अहिंसा, सत्य, अस्तेय, ब्रह्मचर्य, अपरिग्रह इन पाँच को मानता हूँ, फिर समझ नहीं आ रहा कि मेरे और आपके बीच पिछला हिसाब क्यों रुका पड़ा है, इस पर जैन साहब ने हँसकर कहा—अच्छा; कल आकर अपना हिसाब ले जाना और पैसे मिल गये। □□

मंघाराम

बर्तन बाजार में अत्तारो गली के पास तुलसीदास मंघाराम की दुकान है, वहाँ कागज जाया करता था, एक दिन प्रात:काल दुकान को जाते हुए देखा कि उनका बड़ा पुत्र अमर नाथ सिर घुटे बैठा है मालूम किया तो पता चला कि मंघाराम जी का स्वर्गवास हो गया। दोपहर को घर जाते समय उस दुकान पर आसानन्द जी को बैठे देखकर मैंने कहा—सेठ जी कुछ हमारा भी हिसाब है, आसानन्द जी ने कहा—पर्चे देख लें तब बतायेंगे, मैंने कहा—मेरा कोई पर्चा नही है, मैं कोई पर्चा नहीं देता था आपको मेरा कोई पर्चा नहीं मिलेगा। इस पर कहा—तो हमें कैसे विश्वास हो, यह सुनकर मुझे कुछ रोष आया और कहा—मुझे अपने ऊपर विश्वास है, भरोसा है कि मैंने माल दिया है, आपको मेरे ऊपर विश्वास और भरोसा हो या न हो मुझे इससे कोई मतलब नहीं, मुझे अपने ऊपर पूरा भरोसा है और मैंने माल दिया है, मैं अब आपके पास पैसे लेने नहीं आऊँगा आपकी इच्छा हो तो भिजवा देना। यह कहकर मैं घर चला गया, भोजन से निपट कर जब मैं दुकान को जा रहा था तो आसानन्द जी ने मुझे सेठ जी कहकर पुकारा मैं दुकान पर गया और उन्होंने मुझे हिसाब के सारे पैसे दे दिये। □□

वह मेरे शिष्य हैं

१९७७ में "वेद की चार शक्तियाँ" नाम से एक पुस्तक प्रकाशित की, दशहरे के अवसर पर गिरवरदास गुजराती दुकान पर खाते लेने आये, सब ग्राहकों के अनुसार गिरवरदास गुजराती को भी एक पुस्तक वेद की चार शक्तियाँ दी। कुछ दिनों पश्चात् गिरवरदास

गुजराती मेरी दुकान पर आकर कहने लगे, आपने यह पुस्तक किसी से लिखवाई या स्वयं लिखी। इस प्रश्न को सुनकर मैं कुछ क्षणों के लिए स्तब्ध रह गया, इसके पश्चात् मैंने उत्तर में कहा यह तो सब वेद मन्त्र ही हैं इन्हें मेरे या किसी और के लिखने का प्रश्न ही नहीं उठता, आपका मन्तव्य क्या है वह स्पष्ट कीजिये। उन दिनों एक व्यक्ति बाहर से आये थे वह मेरी दुकान पर भी आये, उन्हें अपना शिष्य बनाने का बड़ा शौक था, आप चाहें सवा रुपया ही हाथ पर रखकर उनके चेले बने हों, वह उससे बड़े प्रसन्न होते थे। अपने को तान्त्रिक और ज्योतिषी भी मानते थे, इनका नाम याद नहीं आ रहा, वह गिरवरदास गुजराती को भी अपना शिष्य मानते थे, जब गिरवरदास गुजराती के हाथ में "वेद की चार शक्तियाँ" पुस्तक देखी तो उसे तांत्रिक महोदय ने अपने हाथ में लेकर देखते हुए मेरे लिए कहा—वे हमारे शिष्य हैं उन्होंने मुझसे कहा कि यह पुस्तक मैं अपने नाम से छपवा दूँ, तो मैंने उन्हें यह पुस्तक छापने के लिए दे दी। यह सुनकर मुझे बड़ा आश्चर्य हुआ, उसके पश्चात् जब अगली पुस्तक 'कामनाओं की पूर्ति कैसे' छपकर तैयार हुई तो मैंने गिरवरदास गुजराती को एक प्रति देते हुए कहा—आप उन तांत्रिक महोदय से यह मालूम करना क्या यह भी आपकी ही लिखी हुई है? आज तक कोई उत्तर नहीं आया, झूठ के कहीं पैर होते हैं? तान्त्रिक महोदय नगर छोड़कर पता नहीं कहा चले गये। □□

श्रेय किसका

श्री अशोक कुमार जी अग्रवाल जिनका कोल डीपो रोडवेज़ के पीछे हरपाल नगर में है, उनको किसी ने मुझसे मिलने का सुझाव दिया था, वह एक दिन मेरी दुकान पर आये और कहने लगे मेरी दो कन्या हैं दूसरी कन्या के पश्चात् शीघ्र ही गर्भ रुक गया था, बच्ची अधिक छोटी थी, इस विचार से सफाई करा दी थी, उसके पश्चात् अभी तक कोई गर्भ स्थित नहीं हुआ। यहाँ मुरादाबाद में सभी डाक्टरों और डाक्टरनियों को दिखाया कोई लाभ नहीं मिला, इसके

पश्चात् देहली दिखाया वहाँ पर भी कोई लाभ नहीं हुआ और यह कह दिया कि इस महिला के अब गर्भ नहीं ठहरेगा, एक महानुभाव से आपका परिचय मिला तो मैं आपके पास इस कामना को लेकर आया हूँ कि हमारे घर में एक पुत्र का जन्म हो। मैंने कहा आपकी कामना पूरी हो जायगी परन्तु समय अधिक लग सकता है, इस पर अशोक जी ने कहा—कोई बात नहीं जब तक आप कहेंगे आपके निर्देश का पालन किया जायेगा। मैंने एक औषधि का योग लिखकर दिया और कहा—इसे तैयार कराकर सेवन करायें इसके दो मास के पश्चात् आप फिर मिलें। दो मास के पूर्व ही गर्भ स्थिति हो गई, इसकी सूचना मुझे देने आये और अति प्रसन्न थे। दुर्भाग्य ने पीछा नहीं छोड़ा था, चौथा मास, घर का बड़ा आंगन उस पर मार्बल का चिकना फर्श और पैरों में प्लास्टिक की चप्पल इन सबने मिलकर एक दुर्घटना को जन्म दे दिया, पैर फिसल गया धड़ाम से पत्नी गिरीं गर्भाशय पर ठसक पहुँची और रक्तपात होने लगा, उसी समय डाक्टरनी को दिखाया मेरे पास आये रक्त बहुत जा चुका था, मैंने कहा इसकी सफाई करायें। एक सप्ताह के पश्चात् आये मुखड़े पर चिन्ता और खिन्नता थी, मैंने कहा—निराश न हों जहाँ इतनी सफलता मिली है, आगे को और मिलेगी। श्री अशोक जी ने कहा अब क्या करना है? मैंने कहा—अभी दो मास ठहरें। पत्नी के स्वास्थ को ठीक होने दें, उसके पश्चात् वहीं औषधि शुरु करा देना। चार मास के पश्चात् अशोक जी आये और कहा गर्भ स्थित हो गया है, सूर्य गुणी औषधि का सेवन कराया और समय आने पर पुत्र रत्न की प्रप्ति हुई। उसकी प्रसन्नता में भोज किया मुझे भी आमन्त्रित किया, गोद में बच्चे को लेकर मेरे साथ अपना छाया चित्र लिया। मैं अन्दर बैठा था अशोक जी की माता जी कहने लगीं आपकी कृपा से अशोक का घर आनन्द से भर गया। मैं मन में सोचने लगा, वनस्पतियों को प्रभु ने उत्पन्न किया, बड़े—बड़े ऋषियों ने उनके गुणें को जाना, मैंने तो केवल औषधि बनाकर देने मात्र का कार्य किया था। इतने छोटे से कार्य का इतने बड़े उपकार का श्रेय मुझे मिल रहा है। प्रभु जी यह आपकी कैसी विचित्र लीला है इसका सारा श्रेय मेरा नहीं आप ही का है। □□

नमस्ते या नमस्कार

भारतीय स्टेट बैंक मुरादाबाद की प्रधान शाखा न्यायालय के सामने स्थित है उसी में श्री महिपाल जैन कार्यरत थे, वह बहुत ही सुलझे हुए व्यक्ति हैं और प्रत्येक बात की तह में पहुँचने की इच्छा रखते हैं, मेरी दुकान पर यदा—कदा आने की कृपा करते हैं, और अभिवादन रूप में 'नमस्कार का ही उच्चारण करते हैं, कई बार ऐसा होने के पश्चात् मैंने अपनी टोकने की प्रकृति का प्रयोग किया, मैं चाहता था सुलझे हुए व्यक्ति के मुख से अशुद्ध उच्चारण न हो तो अच्छा है इसी विचार से मैंने एक बार श्री महिपाल जैन से कहा आप योग्य हैं, सामाजिक कार्य कर्त्ता और हर बात को समझने की इच्छा भी रखते हैं, तो मेरा आप से निवेदन यह है कि अभिवादन में 'नमस्कार' जो अपूर्ण शब्द है उसे न बोला करें। जैन साहब ने कहा वह किस प्रकार मैंने समाधान किया 'नमस्कार' की व्युत्पत्ति करने से स्पष्ट होता है, 'नमः' का अर्थ नमन, अभिवादन स्वागत करना होता है, दूसरे 'कार' 'कृ' धातु से 'करना' जो मिलकर नमस्कार बनता है अर्थात् 'नमन करना' किसके लिए यह कुछ प्रतीत नहीं होता। इसके साथ जोड़ना पड़ेगा ''आपको नमस्कार है'' नमस्कार के साथ इतना वाक्य बोलने से पूर्ति होती है। जबकि 'नमस्ते' के साथ यह बात नहीं। इसी प्रकार 'नमस्ते' की व्युत्पत्ति करें तो 'नमः' 'ते' जो मिलकर नमस्ते बनता है। 'नमः' का अर्थ नमन, अभिवादन, स्वागत करना, 'ते' का अर्थ तेरे लिए अर्थात् मैं तुम्हें नमन करता हूँ। इस प्रकार 'नमस्कार' नहीं ''नमस्ते'' जो शब्द पर्याप्त और लघु भी है, उसी को बोलकर अभिवादन करना सही और उचित है। इस प्रकार श्री महिपाल जैन ने इसे स्वीकार किया और अब वह 'नमस्कार' के स्थान पर अभिवादन रूप से 'नमस्ते' ही कहते हैं।

□□

शब्द से मन के भाव का पता लगता है

शम्भू सरन जी पंसारी का आवास दिन्दारपुरा में और व्यवसाय अमरोहा गेट पर है अब उस दुकान पर उनके पुत्र श्री सन्देश कुमार जी के पुत्र परितोष कार्य करते हैं। एक बार संदेश जी ने मुझ से कहा—एक बहुत बड़े महात्मा, ज्ञानी, तपस्वी आये हुए हैं, मैं उनके पास कई बार मिलने गया था, वे थाना सिविल लाइन के सामने शान्ती स्वरूप मित्तल की कोठी में टिके हुए हैं, आप भी उनसे मिलें। मैं महात्मा जी से मिलने गया दैव योग से महात्मा जी कहीं गये थे, वहाँ पर उपस्थित उनके चेलों से मालूम किया तो पता चला कि महात्मा जी कुछ ही देर में आ जायेंगे, मैं वही मूँढ़े पर बैठ गया। चेले आपस में कुछ बात कर रहे थे, वह चर्चा कुछ सिद्धान्त के विपरीत थी, मैंने टोकते हुए कहा—ऐसे नहीं ऐसे है। वह सन्दर्भ तो मुझे इस समय याद नहीं रहा, यह बात १९७०की है। मेरे टोकने पर एक चेले ने कहा—क्या आप आर्य समाजी हैं? मैंने कहा हाँ, इस पर चेले ने फिर कहा—आर्य समाजी तो ऐसे हैं जैसे एक 'वेश्या' जो सिंगार करके बैठती है वैसा ही आर्य समाजी हैं। मुझे यह सहन न हो सका मैंने कहा—इस बाने में भी आकर वेश्या का आकर्षण मन से नहीं गया? उपमा से व्यक्ति के चरित्र का पता लगता है। मैंने कहा—सुनों! उपमा इसको कहते हैं—मेरी दुकान पर दशहरे के दिनों में लक्ष्मीनारायण, जो मौ० जीलाल में रहते हैं दरीबापान में उनकी छाली कत्थे की दुकान है, वह बहियाँ लेने आये, उसी समय एक ग्राहक ने आकर हमारे पिता जी को उधार के पैसे दिये, पिता जी ने बचे खुचे कागज की एक कॉपी बना ली थी उसी में जमा कर दिये। ऐसे अवसर पर सब यही उक्ति देते हैं कि'' कबाड़िये की छत चुचियाती रहती है'' परन्तु मुझे बड़ा आश्चर्य हुआ जब उस समय लक्ष्मीनारयण जी ने कहा— सही है ''माँ बच्चों को अच्छा खिलाती है और स्वयं जला फुका ही खा लेती है''इस उक्ति के अन्दर क्या चरित्र छिपा है? कितनी ऊँची उड़ान है और कितनी उदात्त भावना है।

उक्ति इसे कहते हैं उक्ति से ही मानव के चरित्र का पता चलता है, वही आपकी उपमा से पता चल गया। जिसके चेलों के मन में वारांगना समाई बैठी हो तो उसके गुरु का क्या हाल होगा 'जैसी नकटी देवी वैसे ऊत पुजेरी' कहते हुए मैं उठकर चला आया। □□

तुमने क्या खिला दिया

१९७२ में श्री ब्रजमोहन जैन मौ० जीलाल के निवासी थे सायंकाल को मेरी दुकान पर आया करते थे, स्वास्थ्य और औषधि अथवा चिकित्सा के विषय में चर्चा होती रहती थी। एक बार असगन्धा पाक बनाने की इच्छा व्यक्त की मैंने सारा प्रयोग निर्माण विधि सहित बतला दिया और वह तैयार हो गया। ब्रजमोहन जी अपनी बैठक में बैठे थे, पाक सामने रखा था जब मैं उधर से निकला तो मुझे आवाज दी मैं बैठक में गया पाक देखा ठीक तैयार हो गया था ब्रजमोहन जी ने और मैंने खाकर देखा स्वाद भी ठीक था। मैं घर को चला गया। उनके घर के सामने राधेलाल रस्तोगी रहते थे वे भी उसके पश्चात् आ गये और कहा—ब्रजमोहन क्या बनाया है? ब्रजमोहन जी ने कहा—यह पाक बनाया है। राधेलाल जी ने कहा—थोड़ा सा हमें भी देना, उसमें से ब्रजमोहन जी ने दो मात्रा दे दीं, उन्होंने सेवन किया, तीन दिन के पश्चात् राधेलाल जी, ब्रजमोहन जी से बोले—तुमने मुझे क्या खिला दिया जो मुझे हार्टअटैक हो गया? ब्रजमोहन जी ने कहा—मैंने क्या दिया? जो खा रहा हूँ उसे आप ही ने मांगा था तो दे दिया। जब यह घटना ब्रजमोहन जी ने मुझे बताई तो मुझे बड़ा आश्चर्य हुआ कि यह कैसा हार्टअटैक था जो दूसरे दिन ही उठकर बाहर आ गये। ब्रजमोहन जी ने कहा—कि अब किसी को भी कोई बनाई औषधि नहीं देनी चाहिए, मैंने भी इसका समर्थन किया और औषधि देना बिल्कुल बन्द कर दिया। □□

शोभा यात्रा

स्वाधीनता से पूर्व हिन्दू स्कूल के छोटे मैदान में सनातन धर्म सभा का उत्सव होता था, मैं और पिता जी उसमें सुनने के लिए जाया करते थे। छोटे मैदान के आगे नाले पर बहुत बड़ा चबूतरा था, आज उस चबूतरे पर दुकानें, होटल आदि बन गये हैं। किन्हीं कारणों से सनातन धर्म सभा का उत्सव होना बन्द हो गया।

मुनि गली में अन्दर जाकर सामने की ओर एक ऋषि औषद्यालय था, उसमें वैद्य हरिहर नाथ सांख्याचार्य जी के भतीजे वैद्य ओम प्रकाश जी चिकित्सा करते थे। सन् १९७२—७३ के आस—पास वैद्य ओम प्रकाश जी पं० नरोत्तम व्यास जी से मिलने आये और कहा—पं० जी मेरी इच्छा है कि सनातन धर्म सभा का एक उत्सव किया जाये। व्यास जी ने कहा—अवश्य करना चाहिए। उत्सव की तैयारी होने लगी, वेद भगवान की सवारी निकालने की घोषणा भी हो गई। पूरे नगर के सभी मंदिरो में देखा, अनेक विद्वानों के पास भी गये, परन्तु वेद की प्रतियाँ कहीं भी नहीं मिलीं। शोभा यात्रा का केवल एक ही दिन शेष रह गया। पं० नरोत्तम व्यास जी ने मुझसे कहा—वीरेन्द्र जी! नाक का प्रशन बन गया है। वेद भगवान की सवारी निकलनी है परन्तु हमें नगर में कहीं भी चारो वेद नहीं मिले। अब आप अपने पास से चारो वेद निकाल कर दें। मैंने चारो वेदों की प्रतियाँ निकालकर उन पर नया मलट चढ़ाकर दिया, और उन की शोभा यात्रा निकाली गई। □□

शरद पूर्णिमा

१९७८ में शरद पूर्णिमा की रात्रि में रजत सम प्रपात की छटा विलक्षण, रोग निवारक अमृत मय वृष्टि को सामूहिक रूप से पान करने हेतु श्री महाराज नारायण जी की कोठी के सामने हरे कोमल प्राकृतिक कालीन पर बैठे नगर के प्रसिद्ध अप्रसिद्ध सभी

कवि गण उस माता प्रकृति के गुणों का काव्य मयी वाणी से गायन कर रहे हैं, इसके मुकुट मणी रूप पं० नरोत्तम व्यास सभापतिस्थान पर विराजमान हैं। मैं कवि नहीं छोटा मोटा लेखक अवश्य हूँ, परन्तु न जाने किस कारण श्री पुष्पेन्द्र जी वर्णवाल मुझे उस अमृत पान सभा में साथ ले गये। उस अमृत गोष्ठी में बहुत से व्यक्तियों को देखा जिन्हें मैं जानता भी था कि वे क्या हैं परन्तु उनका भी 'आइये कवि जी' के शब्दों से सम्मान किया जा रहा था। उसमें से एक व्यक्ति के मधुर कण्ठ से काव्य पाठ ने मुझे अनायास आकर्षित किया, नाम याद नहीं रहा बाद में श्री पुष्पेन्द्र जी से ज्ञात हुआ कि वह विभूति थी श्री अजय अग्रवाल अनुपम की। उस समय मेरी १४ वीं पुस्तक 'कामनाओं की पूर्ति कैसे' छप चुकी थी। मैं कोई कवि तो था नहीं इस कारण मुझे बैठने को भी कहने के लिए किसी के पास कोई शब्द भी नहीं था, मैं स्वयम् ही जाकर बैठ गया। मन में बात तो चुभने वाली थी। हो सकता है कि उपस्थिति में से कोई मुझे न जानता हो। दूसरे, मैं आमन्त्रित भी नहीं था। मन में कष्ट हुआ। अतः मैंने भी कविता लिखने की कोशिश की परन्तु सफल न हुआ। मुझे लगा कि परमात्मा ने मुझे इस कार्य के लिए नहीं भेजा है आगे चलकर मुझे तब स्वयं ही इस बात का अनुभव हुआ जब ग्वालियर के सम्मेलन में लेखक होने के नाते मुझे प्यार, सम्मान और प्रशंसा प्राप्त हुई। हाँ इतना अवश्य हुआ कि उस शरद पूर्णिमा ने मेरे सही मार्ग की ओर सावधानी से चलने की प्रेरणा भी दी और अनेक स्नेही मित्र भी दिये, साथ ही व्यक्ति को पहचानने का ज्ञान भी दिया। ◻◻

हकीम बद्री प्रसाद

हकीम बद्री प्रसाद जी की दुकान बाजार गंज में थी। वहीं पर चिकित्सा का कार्य भी करते थे। इनको नाड़ी का ज्ञान बहुत अच्छा था। शरीर के सभी विकारों को नाड़ी देखकर ही पहचान लेते थे। मैं भी एक दिन दुकान पर पहुँचा, मेरी नाड़ी देखकर गला देखने लगे। मैंने कहा—गले में क्या देख रहे हैं। हकीम जी नें कहा—नाड़ी

कह रही है 'खुनाक' हैं परन्तु गले में नहीं दीख रहे। मैंने कहा—वह अभी अन्दर हैं ।

एक दिन हकीम जी ने बताया, श्री रामगुलाम जी के पुत्र देवकी नन्दन जन्म से ही नपुंसक थे। रामगुलाम जी के कोई और पुत्र नहीं था, इस कारण वह चिन्तित थे कि आगे वंश कैसे चलेगा। रामगुलाम जी पुत्र को लेकर मेरे पास आये और मैंने उसकी इन्द्रियों को देखकर बताया कि यह ठीक हो जायेगा। इन्द्रियाँ दो प्रकार की होती है। एक 'जौ' आकार की वह ठीक नहीं होती दूसरी 'मिर्च' आकार की वह ठीक हो जाती है। उसके लिए एक तिला बनाया। मैंने कहा—काले सर्प के अण्डे जिसमें पड़ते हैं वह बनाया होगा? हकीम जी ने चकित होकर कहा—आपको कैसे मालूम? मैंने कहा—उसे मैंने ग्रन्थ में पढ़ा है। इस प्रयोग से वह ठीक हो गये और उनका विवाह भी हो गया। हकीम जी ने कहा—आपको भी इसका अच्छा ज्ञान है। एक समाधान करो। मैंने कई जगह पर 'पोता जिया' के बारे में पढ़ा है, क्या आप बता सकते हैं कि वह क्यां चीज है? मैंने कहा—आयुर्वेद में इसे 'पुत्र जीवक' कहते हैं और इसका प्रयोग गर्भ रक्षा के लिए किया जाता है। हकीम जी ने कहा—क्या आपने इसे देखा है? मैंने कहा—मैंने इसे देखा है और प्रयोग भी कराया है, पूर्ण सफलता प्राप्त हुई इसके सेवन से। हकीम जी ने कहा—मैंने भी ऐसा ही पढ़ा है।

हकीम बद्री प्रसाद जी ने अपने जीवन की दो विचित्र घटनाऐं सुनाई—एक व्यक्ति आया, उसने बताया, मेरे पेट में हर समय दर्द रहता है, रुक—रुक कर सुइयाँ चुभती हैं, कई को दिखा चुका, कोई अन्तर नहीं पड़ा, आपका नाम सुनकर आया हूँ मुझे ठीक करिये। हकीम जी ने नाड़ी देखी, दुकान से नीचे उतरे, कहा—तुम यहीं बैठे रहना मैं अभी आता हूँ। वह कम्पनी बाग गये, वहाँ से गैंदे के पौधे की पत्तियाँ तोड़ कर लाये, उसे एक मिट्टी की हाँडी में डाला, पानी डाल कर सामने गुलाबी बालों की दुकान पर भट्टी पर पकाने रख दिया। तैयार होने पर उठा लाये, कुछ ठण्डा होने पर छान कर उसका पानी पिला दिया। इस काढ़े को पिला देने के आधा घन्टा

के पश्चात् उसे एक उल्टी हुई, उसमें सात ततैय्यें जीवित निकलीं, रोगी—भी भौंचक्का रह गया। हकीम जी ने कहा—अभी पेट में दो और हैं। कुछ देर पश्चात् बचा हुआ काढ़ा उसे फिर पिला दिया। उल्टी हुई और उसमें दो ततैय्याँ और निकलीं। पेट का दर्द और चुभन आदि सब कुछ ठीक हो गया। हकीम जी ने नाड़ी से ही पहचान लिया कि इसके पेट में ९ ततैय्याँ हैं वही डंक मारती रहती थीं। रोगी ने कहा—हकीम जी यह ततैय्याँ मेरे पेट में कहाँ से आ पहुँची। हकीम जी ने बताया—ततैय्याँ गुड़ में अण्डे रखती हैं, आपने गुड़ बिना चबाये खा लिया, अण्डे पेट में जाकर पनपने लगे और ततैय्याँ बन गई।

साहू शम्भू नाथ के० जी० के० कालेज के प्रबन्धक थे, उनके घर पर नित्य दरबार लगता था। कभी—कभी उपहास और व्यंगात्मक चर्चायें भी होती रहती थी। एक दिन साहू शम्भूनाथ को उपहास करने की सूझी। उन्होंने नगर के प्रसिद्ध वैद्य टीका दत्त और शंखधार को घर बुलाया, कमरे के अन्दर बैठी महिला का चिकित्सा निदान करने के लिए। कमरे के बाहर चिक पड़ी थी, वैद्य जी हाथ देखते तो महिला बाहर हाथ निकाल देती। दोनों चिकित्सकों के निदान अलग—अलग थे।

जिला चिकित्सालय से सिविल सर्जन को भी बुलाया, उन्होंने भी देखा और बताया। साहू साहब ने कहा—हमारी समझ में किसी का भी निदान ठीक नहीं लग रहा। उन्होंने एक व्यक्ति को हकीम बद्री प्रसाद जी को बुलाने भेजा। बद्री प्रसाद जी आये और तीन वरिष्ठ चिकित्सकों को देखकर आश्चर्य चकित थे, सोचने लगे कोई गम्भीर मामला है। साहू साहब ने कहा—हकीम जी रोगी को देखकर आप बतायें क्या बात है। हकीम जी चिक के पास पड़े स्टूल पर जाकर बैठे और हाथ दिखाने को कहा। चिक के अन्दर से हाथ निकला नाड़ी देखी, कहा दूसरा हाथ दिखाओ, चिक के अन्दर से दूसरा हाथ निकला, नाड़ी पर हाथ रखते ही हकीम जी ने हाथ हटा लिया और कहा—साहू साहब! आप मजाक कर रहे हैं, अन्दर दो महिलायें बैठा रखी हैं? साहू साहब ने कहा—नहीं तो। हकीम बद्री

प्रसाद जी ने कहा—आप गलत कहते हैं, एक से रंग की दो महिलायें अन्दर बैठी हैं, एक ने एक हाथ दिखाया दूसरी ने दूसरा हाथ दिखाया, एक हाथ कहता है कुछ नहीं है और दूसरा कहता है तीन मास का गर्भ है।

तीनों वरिष्ठ चिकित्सक भौंचक्के रह गये। साहू शम्भूनाथ जी हँस पड़े और कहने लगे, हकीम जी! आप सही कह रहे हैं। आपके बारे में जैसा सुना था वैसा ही आज पाया।

हकीम बद्री प्रसाद जी के छोटे भाई श्री बैजनाथ जी थे। वह चौराहागली में कूँचा शीतलदास मुरादाबाद के निवासी थे। इनके सुयोग्य सुपुत्र श्री देवकी नन्दन जी उद्योग पति, देना जी सस्थान हैं। एक दिन प्रात: काल वहीं पर एक बच्चे ने कपूर की डली मुँह में रखली, वह सटक गया। कपूर स्वाँस नली पर जाकर अटक गया, स्वाँस का आना जाना बन्द हो गया और वह बच्चा अचेत होकर गिर पड़ा। गली के लोग दौड़कर वहाँ पहुँचे, डॉ० को बुलाया गया, किसी की समझ में कुछ नहीं आ रहा था। स्वाँस बन्द हो जाने के कारण बच्चा पीला पड़ने लगा। उसी समय श्री बैजनाथ जी घर से बाहर निकले, बच्चे के अचेत होने की बात सुनी, वह भी उधर गये, देखा हालत बहुत गम्भीर थी। बैजनाथ जी ने बूझा इसे क्या हो गया? बच्चे के पिता ने कहा—इसने कपूर सटक लिया। यह सुनकर बैजनाथ जी झटपट अपने घर पर आये और शीघ्रता से चुटकी में पिपरमैंट दवा कर ले गये। उन्होंने बच्चे का मुँह खोलकर चुटकी का पिपरमैन्ट डाल दिया, उसे चैन पड़ा कुछ स्वाँस ली और कुछ ही देर में वह उठकर बैठ गया।

इस चमत्कार को देखकर सभी दंग रह गये, सभी ने उत्सुकता वश मालूम किया कि आपने यह कैसा जादू कर दिया। श्री बैजनाथजी ने बताया कि कपूर इसकी स्वाँस नली पर बैठ गया था, कपूर पानी में नहीं घुलता, पीपरमैन्ट उसे गला देता है, सो मैंने पिपरमैन्ट उसके मुँह में डाला, कपूर घुल गया, बच्चे को स्वाँस आने लगी। ☐☐

हकीम देवी प्रसाद

हकीम देवी प्रसाद जी नगर मुरादाबाद के सुयोग्य एवं सफल यूनानी चिकित्सक रहे इनका चिकित्सालय चमारों की पुलिया पर है जिसे आज इन्दिरा चौक के नाम से जाना जाता है। देवी प्रसाद जी के कोई सन्तान नहीं थी, इनके छोटे भाई हकीम किशन स्वरुप माथुर के सुपुत्र श्री हकीम ओमप्रकाश जी माथुर ही ताऊ जी तथा पिता जी के पश्चात् चिकित्सालय में बैठते थे, इनके यहाँ मेरी दुकान से रोगियों के लिए मोटा रजिस्टर जाया करता था, इच्छानुसार सन्तान पुस्तक सामने रखी थी उस समय श्री ओम प्रकाश जी रोगियों का रजिस्टर लेने आये, पुस्तक पर ध्यान गया, उठाकर देखने लगे और ले गये। उसके पश्चात् पुत्र की कामना के इच्छुक दम्पति को चिकित्सा के साथ उक्त पुस्तक को पढ़ने का सुझाव देते थे, अनेक रोगियों को पुस्तक से पूर्ण लाभ मिला १९८४ में हकीम ओम प्रकाश जी माथुर देवलोक सिधार गये, अब उस चिकित्सालय में उनके सुपुत्र हकीम श्री अशोक कुमार जी माथुर चिकित्सा करते हैं, जब मैं उनसे मिला तो उन्होंने स्वयं ही इच्छानुसार सन्तान पुस्तक की बहुत प्रशंसा की। □□

हिन्दी के प्रति सतर्कता

मेरी एक प्रकृति है कि मैं किसी की भी गलत बात को स्वीकार नहीं कर पाता और न मेरे गले उतरती है, इसी कारण टोकते रहने की एक प्रकृति भी बन गई है। मेरे पास १९५० से दैनिक समाचार पत्र हिन्दी दैनिक हिन्दुस्तान आता रहता है। १९८१ के ९ फरवरी के अंक में हिन्दी के अंकों के स्थान पर अंग्रेजी के अंक लगे थे, यह बात मुझे चुभी, मेरे मन में सहसा यह विचार उठा कि हिन्दी लिपि देव नागरी के अंकों को हटाकर यह सिद्ध किया जा रहा है कि देवनगरी लिपि इतनी दरिद्री है कि उसके पास अपने अंक भी नहीं। यह मुझे स्वीकार नहीं था, मैंने हिन्दी दैनिक हिन्दुस्तान के सम्पादक

महोदय को पत्र लिखा—

११/२/८१

माननीय श्री सम्पादक जी हिन्दी दैनिक हिन्दुस्तान सादर नमस्ते।

महोदय,

हमारा दैनिक पत्र हिन्दुस्तान हिन्दी भाषा की रक्षा में एक सजग और सक्रिय योग दान में लगा हुआ है। मैं उक्त पत्र का ३० वर्ष से निरन्तर स्थाई ग्राहक हूँ। स्थाई ग्राहक को आपसे कुछ निवेदन करने का अधिकार होता है। इस नाते मैं आपका ध्यान ८ फरवरी १९८१ के पश्चात् ९ फरवरी १९८१ से हमारे हिन्दी दैनिक पत्र हिन्दुस्तान में एक बहुत बड़ा परिवर्तन आया है। वह परिवर्तन यह है कि गिनती से हिन्दी के अंकों को निकाल बाहर किया गया है। भाषा के साथ गिनती के अंकों का भी अपना अस्तित्व है जिसे आपने ८ फरवरी १९८१ तक सुरक्षित बनाये रखा था। आपसे करबद्ध विनम्र निवेदन है कि अब के रविवार अंक से गिनती के हिन्दी अंको को वर्ष, सन्, सम्वत् आदि दूरदर्शन और कलका पंचाँग आदि स्थानों पर पुनः आसीन कर गिनती के हिन्दी अंकों को सम्मान देने की अवश्य कृपा करें।

वीरेन्द्र नाथ

इस पत्र को लिखने के पश्चात् मैंने यह देखा कि १३/२/८१ के अंक तक अंग्रेजी के अंक अर्थात् ५ अंको तक अंग्रजी के अंक आये, उसके पश्चात् १४/२/८१ से हिन्दी के अंकों को पुनः स्थान प्राप्त हुआ। मन को पूर्ण सन्तोष बना और टोकते रहने की प्रकृति को और बल मिला। मैंने सम्पादक महोदय को १७/२/८१ को एक धन्यवाद पत्र देकर कृतज्ञता व्यक्त की।

१७/२/८१

सम्पादक श्री विनोद कुमार जी मिश्र देहली

धन्यवाद पत्र

मैंने आपकी सेवा में एक पत्र ११/२/८१को प्रस्तुत किया था। आपने मेरे पत्र पर तत्काल ध्यान दिया और १३/२/८१ के अंक के पश्चात् १४/२/८१ के अंक से गिनती के हिन्दी अंकों को

पुनः स्थान प्राप्त होते हुए देखकर मन को अत्यन्त हर्ष प्राप्त हुआ। इससे मन कितना हर्षित हुआ उसे लेखनी द्वारा लिखा नहीं जा सकता, मानो कोई अमूल्य निधि प्राप्त हो गई हो। इस शुभ कृत्य के लिए हम आपका कोटिशत कोटि आभार व्यक्त करते हैं और आपको इस पुनीत कार्य के लिए धन्यवाद देते हैं।

वीरेन्द्र नाथ

दैनिक हिन्दुस्तान के उन चारों अंकों को यहाँ प्रस्तुत किया है।

हिन्दी का सर्वश्रेष्ठ दैनिक
हिन्दुस्तान

हिन्दी का सर्वश्रेष्ठ दैनिक
हिन्दुस्तान

हिन्दी का सर्वश्रेष्ठ दैनिक
हिन्दुस्तान

हिन्दी का सर्वश्रेष्ठ दैनिक
हिन्दुस्तान

शिक्षा का मूल्य अधिक

नगर मुरादाबाद में १९८० के साम्प्रदायिक दंगों के पश्चात् १९८१ में जगतगुरु शंकराचार्य का मुरादाबाद नगरी में आगमन हुआ, उनके सम्मान में नगर पालिका भवन में श्री रामसरन जी वानप्रस्थी यज्ञ करा रहे थे, वहीं पर पास में अमर नाथ भी बैठे थे, उन्होंने यज्ञ की प्रक्रिया को देखा, उससे प्रभावित होकर मेरी एक पुस्तक 'दैनिक पंच महायज्ञ' जिससे वह यज्ञ करा रहे थे पैसे देकर खरीद ली। उस पर लिखे पते पर मेरी दुकान को खोजने लगे तीसरे दिन मेरे पास आये, उन्होंने सबसे पहला प्रश्न शीर्षासन के विषय में किया, उनका समाधान करते हुए मैंने कहा—इसके स्थान पर उर्ध्व—सर्वांगासन का लगाना अधिक उपयोगी है। इसके पश्चात् वह आते रहे और अपनी शंकाओं का निवारण करते रहे, आर्य समाज का प्रवेश पत्र भरकर आर्य समाज के सदस्य बनें। कुछ समय के पश्चात् अमर नाथ जी ने मुझसे कहा—पिता जी मेरा विवाह करने की शीघ्रता कर रहे हैं मैं अभी विवाह नहीं करना चाहता, आप उनको समझा दें। अमरनाथ जी के पिता श्री बनबारी लाल जी राजकीय इन्टर कॉलेज में अध्यापक थे, मैं उनसे मिल भी नहीं पाया था, उन्होंने सम्बन्ध तय करके सगाई ले ली। अमर नाथ जी को यह अभिष्ट नहीं था, वह उसी रात को एक झोले में कुछ वस्त्र रखकर घर से निकल पड़े। कई दिन तक उनके पिता जी ने खोज की कोई अता पता न चला कुछ दिन पश्चात् वह मेरी दुकान पर भी आये, इस बारे में मुझे कुछ पता नहीं था, उन्हीं से जानकारी मिली कि अमर नाथ घर से चले गये हैं। इस वेदना को माता पिता ही समझ सकते हैं, अन्य व्यक्ति केवल सद्भावना व्यक्त कर सन्तोष ही दिला सकते हैं। ठीक दो वर्ष पश्चात् श्री अमर नाथ जी का पत्र मेरे पते पर आया उसमें लिखा था—गुरुजी मैं आपके बताये मार्ग पर चल रहा हूँ मैंने एक पत्र घर पर भी लिखा है, मैंने अपना पता इसलिए नहीं दिया कि मेरी शिक्षा पूर्ण होने में बाधा न पड़े, लगभग ६ मास में शिक्षा पूर्ण हो जायेगी तभी मैं घर

लौटूँगा। रोहतक में महात्मा दयानन्द जी के पास रहकर विद्या प्राप्त करके घर लौटे। योग्यता पूर्ण थी, प्रवचन और शास्त्रार्थ करने की पूर्ण क्षमता प्राप्त थी। कार्य करने लगे अनेक स्थानों पर जाने लगे, जमशेदपुर टाटा अधिकारी वर्ग कालोनी में आर्य समाज की स्थापना की और कई स्थानों पर आर्य समाज की स्थापना की। आज भी श्री अमर नाथ जी जब कभी मिलते हैं तो चरण स्पर्श कर गुरु जी नमस्ते कहते हैं।

जिस कन्या के साथ सगाई तय हुई थी, उसने कहा—विवाह मैं उन्हीं के साथ करुँगी अन्यथा अविवाहित ही रहूँगी। उसके इतने शुद्ध विचारों से प्रभावित होकर श्री अमर नाथ जी ने भी उसी से विवाह किया। □□

विचार और दृष्टि कोण

आर्य समाज मण्डी बाँस मुरादाबाद में वेद कथा का आयोजन चल रहा था, कथाकार थे एम० ए०—पी० एच० डी० इतिहास प्रो. राजेन्द्र जी जिज्ञासु अबोहर निवासी, उसके अन्तिम दिन ३ अक्टूबर १९८२ रविवार की प्रात: कालीन सभा में मेरी एक पुस्तक 'दिव्य दर्शन' का विमोचन जिज्ञासु जी के करकमलों द्वारा हुआ, उस समय मुझसे कुछ बोलने के लिए कहा—मैंने कहा—हमारे देखने में आता है कि जब किसी मुसलमान भाई के यहाँ कोई भोज का कार्यक्रम होता है तो वह अपने मित्र और परिचित हिन्दू भाइयों को भी निमन्त्रित करता है और उनके लिए शाकाहारी भोजन की व्यवस्था अलग से होती है, देखा यह गया कि हिन्दू भाई शाकाहार की ओर न जाकर मांसाहार की ओर जाते हैं ऐसा क्यों? इसके विपरीत जब किसी हिन्दू के यहाँ किसी भोज का अवसर आता है तो वह भी परिचित और मित्र मुसलिम भाइयों को आमंत्रित करता है और उनके लिए मांसाहारी भोजन की अलग से व्यवस्था करता है, परन्तु देखने में यही आया कि मुसलिम भाई मांसाहार की ओर न जाकर शाकाहार की ओर जाते हैं ऐसा क्यों? आप यह कह सकते हैं कि हिन्दुओं को घर पर मांसाहार नहीं मिल पाता और मुसलमानों

को घर पर पूरी पकवान नहीं मिल पाता इसलिए हिन्दू मांसाहार की ओर और मुसलमान शाकाहार की ओर जाते हैं। मैंने आगे कहा—यह बात सही नहीं हाँ हिन्दुओं के लिए तो सही है कारण घर पर उन्हें मांसाहार नहीं मिल पाता, परन्तु मुसलमानों के बारे में यह बात सही नहीं। हम देखते हैं कि अब मुसलमानी मोहल्लों में और मुसलिम पर्वों पर घर—घर पूरी पकवान बनता है। हिन्दू के यहाँ भोज में मुसलमानों के शाकाहार की ओर जाने का एक और कारण है। वह कारण यह है कि मुसलमान अपने मज़हब के प्रति बहुत कट्टर है, उसके मन में यह भ्रम रहता है कि हिन्दू लोग यह तो नहीं समझपाते कि 'झटका' क्या होता है और 'हलाल' क्या होता है। मुसलमान 'हलाल' ही मांसाहार खाना चाहता है 'झटका' नहीं, इस भ्रम के कारण वह हिन्दू के यहाँ मांसाहार नहीं करता।

हमारे सामने मास्टर सत्यवीर सिहं जी बैठे हैं वह एस.एस. के. कालेज में विज्ञान पढ़ाते हैं, उन्होंने मुझे बताया था, एक मुसलिम बच्चा परीक्षा में नकल करते हुए पकड़ा गया, सत्यवीर जी ने कहा—मैंने उस बच्चे के वर्ष को नष्ट होने के विचार से कहा—देखो तुम जाकर मास्टर साहब से पैर छूकर माँफी माँग लो, मैं तुम्हें कापी दिलवा दुँगा तुम्हारा वर्ष नष्ट होने से बच जायेगा। परन्तु बच्चे ने एक न सुनी, उसने यह तो स्वीकार किया भले ही वर्ष नष्ट हो जाये परन्तु वह पैर छूकर क्षमा माँगने को अपने मज़हब के हिसाब से कुफ्र समझता है। इस प्रकार एक मुसलमान हिन्दू से सलाम नहीं करेगा वह आदाब ही करेगा इसका भी एक कारण है, सलाम का अर्थ सलामती से है मुसलमान कभी हिन्दु की सलामती नहीं चाहता इस कारण वह कभी सलाम नहीं करेगा, आदाब! अदब करने को कहते हैं सो अदब तो कर सकता है सलामती नहीं चाहता। इस पर श्री जिज्ञासु जी ने कहा—गुप्त: जी ने जो बात कही इस पर मैं भी विचार करता रहता था, परन्तु इस द्रष्टिकोण से कभी नहीं सोचा, यह जो कुछ गुप्त: जी ने कहा वह बिल्कुल सत्य है। □□

मोती राम ने बीडी छोड़ दी

मास्टर सुमेर सिंह जी जाटव आर्य समाज मण्डी बाँस मुरादाबाद के पुस्तकाध्यक्ष थे, बड़े ही स्वाध्याय शील थे, उन्होंने एक पुस्तक 'समस्त हरिजन (अछूत) ब्राह्मण, क्षत्री हैं' नाम से लिखी वह १९८१में आर्य समाज मण्डी बाँस की ओर से छापी गई, उस समय श्री वीरसिंह जी वर्मा प्रधान और श्री राजेन्द्र कुमार गुप्त मन्त्री थे। मैं मास्टर साहब के घर पर यदा कदा जाया करता था, एक बार जब गया तो घर पर मास्टर सुमेर सिंह जी नहीं थे, उनके पुत्र मोती राम थे, जिस समय मैं घर पर पहुँचा तो मोती राम के हाथ में बीड़ी थी और दूसरे हाथ में माचिस, बीड़ी सुलगाने ही वाले थे, मुझे देखकर रुक गये, मैंने कहा—मास्टर साहब कहाँ हैं? मोती राम ने कहा—वह पढ़ाने गये हैं, आप बैठिये मैंने कहा—उनसे हमारी नमस्ते कह देना और मैं चला आया। उसी दिन सायंकाल को मास्टर सुमेरसिंह जी दुकान पर आये और कहा—आपका घर जाना एक चमत्कार हो गया, मैंने कहा—क्या हो गया? मास्टर साहब ने बताया आपके चले आने के पश्चात् मोती राम ने सोचा—हमारे घर पर इतने बड़े व्यक्ति आये, हमें उनके स्वागत में कुछ करना चाहिए, इस विचार के आते ही निश्चय किया कि मैं उनके स्वागत में अभी से बीड़ी का परित्याग करता हूँ, हाथ की बीड़ी माचिस और बीड़ी का जो बण्डल था वह सब मसल कर फैंक दिया और सदैव के लिये बीड़ी न पीने का संकल्प किया। मास्टर साहब ने कहा—मैंने उसे कई बार समझाया परन्तु न माना अपके घर जाने से उसकी बीड़ी पीने की लत छूट गई। □□

विचार नमस्ते में बाधक नहीं

१९८६ में मैंने मौ० जीलाल का मकान छोड़कर गंज कटरा पूरन जाट में एक मकान खरीद लिया। १९८७ में डा.महेश चन्द्र गुप्ता जी के सुपुत्र डा० अनिल कुमार गोयल प्रातः काल दो साथियों

सहित घर पर आये, मैं उसी समय यज्ञ से निबटा था, डा० साहब ने एक खाली लिफाफा मुझे देते हुए कहा—कल गुरुदक्षणा है उसमें आप आयें, मैंने कहा—मैं नहीं आ सकूँगा? डा०—आप जैसों को तो आना चाहिए। मैं—आप कहते हैं तो मैं आ जाऊँगा परन्तु यदि वहाँ पर ध्वज या गुरु के चित्र पर पुष्प चढ़ाने की बात आई तो मैं ऐसा नहीं कर सकूँगा? इस पर डा० ने कहा—यह तो हमारे गुरु का अपमान होगा। मैंने खाली लिफाफा वापिस करते हुए कहा—इसी कारण मैं नहीं आना चाहता। इस पर साथ के दो साथियों ने चिढ़कर आवेश के साथ कहा—हमने भी वेद पढ़ा है, हम भी आर्य समाजी हैं। मैंने उत्तर दिया—आपने वेद की पिछाई तक तो देखी नहीं, आप इस विवाद में क्यों पड़ते हैं, जाइये अपना काम देखिये। उनके चिकित्सालय में यदा—कदा श्री बावूराम जी दाल वाले मंगलवार के अवकाश में मिलने चले आते थे। उक्त घटना के पश्चात् जब श्री बाबूराम जी उनके चिकित्सालय पर मंगलवार को गये तो उन्होंने कहा—हम लाला जी को बहुत अच्छा मानते थे परन्तु वह तो बहुत गलत व्यक्ति निकले? इस पर श्री बावूराम जी ने कहा—ऐसी क्या बात हो गई। डा०साहब ने सारी बात बताई, इस पर श्री बाबू राम जी ने कहा—डा० साहब यदि आप मुझ से भी यह बात कहेंगे तो मेरा भी उत्तर वही होगा जो श्री वीरेन्द्र नाथ जी का है। हम केवल हिन्दुत्व के नाते आपके साथ हैं, यदि आप यह चाहें कि हम अपना सिद्धान्त छोड़कर आपके साथ आयें ऐसा कभी नहीं हो सकता। घटना के पश्चात् डा० साहब ने नमस्ते तक बन्द कर दी थी, जब श्री बाबूराम जी के उत्तर से उन्हें ऐसा लगा कि मैं स्वयं ही गलती पर था तो उनके मन का मैल धुल गया और फिर नमस्ते होने लगी। □□

भूल सुधार

नगर मुरादाबाद में समस्त व्यापारी और साहूकार आदि सब अपना—अपना खाता दशहरा और दीपावली पर पूजन कर के प्रारम्भ करते रहते थे। इसमें आयकर और बिक्रीकर विभागों को कर निरधारण

करने में कुछ असुविधा होती थी, इस कारण लगभग १९८६ से राज्य व्यवस्था के अनुसार घोषित किया गया कि सब के खाते वित्तीय वर्ष १ अप्रैल से ३१ मार्च तक ही रखे जायेगें। इस पर अधिकतर व्यापारी और साहूकारों ने यह व्यवस्था बनाई कि वह दशहरा और दीपावली पर जैसे पूर्व काल से खातों का पूजन करते चले आये हैं वे वैसा ही करेगें और उनका उपयोग १ अप्रैल से ही किया जायेगा। मेरा व्यापार खातों का है।

दीपावली के अवसर पर बिलारी के निवासी श्री प्रेम सहाय जी सर्राफ भी दुकान पर बहियाँ लेने आये, मैं बहियाँ तोलकर बाँधने लगा, श्री प्रेम सहाय जी जूता खरीदकर लाये थे जो डिब्बे में बन्द था, उन्होंने उस जूते के डिब्बे को बहियों के ऊपर रख दिया और कहा—यह सब एक जगह ही बाँध दें, मेरा हाथ क्षण मात्र के लिए रुक गया, सोचा यही विचार कर लें? परन्तु वह कुछ न समझ पाये तो मैंने कहा—यह कुछ अच्छा नहीं लग रहा। मेरे इतना कहने के साथ ही श्री प्रेम सहाय जी ने एक दम जूते का डिब्बा उठा लिया और कहा—यह मुझसे भूल हो गयी भविष्य में ऐसा नहीं होगा। ❑❑

लेखन से लेखक जाना जाता है

कहीं लेखक से लेखन पहिचाना जाता है तो कहीं लेखन से लेखक जाना जाता है, इससे लेखन और लेखक दोनों के सामर्थ्य का परिचय मिलता है। इसमें कौन छोटा और कौन बड़ा है, इसका मूल्याँकन करना आपके अपने विचार के आश्रित है। संत तुलसीदास को रामचरित मानस से पहचाना जाता है न कि सन्त तुलसीदास से रामचरित मानस। एक पत्रिका में मैंने पढ़ा था, — नोविल पुरुस्कार विजेता कविवर रविन्द्रनाथ टैगोर से एक बार उनके सेवक ने विनम्रता पूर्वक आग्रह किया कि 'सर' एक कविता मेरे नाम से भी लिख दें जिससे मेरा नाम भी पत्रिका में छप जाये? टैगोर ने एक कविता लिखकर सेवक को दे दी। सेवक ने अपने नाम से वह कविता पत्रिका के सम्पादक को दी। सम्पादक महोदय ने कहा— 'यह किसने

लिखी है'? सेवक—'मैंने'। सम्पादक—'तुम कविता करना क्या जानों'? सेवक—'मैं टैगोर जी के साथ रहते—रहते कविता करना सीख गया हूँ। सम्पादक—'इस कविता का कोई स्टैण्डर्ड ही नहीं, यह हमारी पत्रिका में कैसे प्रकाशित हो सकती है? यह कह कर वापिस कर दी। सेवक ने कुछ उल्टी सीधी तुकबन्दी करके एक कविता तैयार करी और उसके नीचे टैगोर जी का नाम लिखकर उन्हीं सम्पादक महोदय के पास गया। उन्होंने टैगोर की रचना देखकर प्रकाशित कर दी। सेवक ने रवीन्द्रनाथ टैगोर को सारी घटना बताते हुए कविता वापिस कर दी। कालान्तर के पश्चात् उसी कविता को सेवक का नाम काटकर अपने नाम से प्रकाशनार्थ भेजी, तो वह छपकर प्रकाशित हो गई।

मेरी कई पुस्तकें प्रकाशित हो चुकी थीं, उसमें से कुछ श्री रमेशचन्द्र जी यादव के हाथ लगीं, पढ़ने के पश्चात् इच्छा जागृत हुई कि लेखक से मिला जाये, मैं श्री यादव जी से परिचित नहीं था। दैव योग से आर्य समाज मण्ड़ी बाँस मुरादाबाद के रविवारीय साप्ताहिक सत्संग में मैं तो जाता ही रहता हूँ, उस दिन श्री यादव जी भी उपस्थित थे, मन्त्री महोदय ने मन्च से कहा—श्री वीरेन्द्र नाथ जी अब अपने विचार रखेंगे। सत्संग की समाप्ति के पश्चात् श्री रमेश चन्द्र जी यादव मेरे पास तक आये और नमस्ते करते हुए कहा—बहुत दिनों से आपसे मिलने की इच्छा थी, अपके साहित्य ने सहसा मुझे आपकी ओर आकर्षित किया और आज आपसे साक्षात्कार हुआ।

श्री ओंकार स्वरूप जी ठाकुर द्वारा वाले मेरी दुकान पर आया ही करते थे, कभी—कभी अपनी छोटी पुस्तिका उन्हें दे दिया करता था। १९८८ में जब मेरा वेद—दर्शन तैयार होकर आया तो मैंने उसे उन्हें दिखाया, देखकर दुकान पर बैठ गये और कहा—मैं तो केवल आपको यही छोटी—छोटी पुस्तिका लिखने वाला मात्र ही समझता था। यह तो आपने बहुत बड़ा आश्चर्यजनक कार्य किया। मुझे इससे बहुत ही प्रसन्नता हुई, मैं इसे लिए जाता हूँ और अपनी पत्नी को दिखलाऊँगा जो गोकुलदास गुजराती डिग्री कालेज में

संस्कृत विभाग में कार्यरत रही हैं। इसी प्रकार के अनेकों पत्र आते रहते हैं, जो मुझे नहीं जानते परन्तु लेखन को देखकर प्रभवित होते हैं और साक्षात्कार भी करना चाहते हैं। □□

रम्मन बाबू

४/१०/९२ रविवार के दिन श्री रामअवतार जी सर्राफ जिनका उपनाम रम्मन बाबू है। दुकान पर खाते लेने आये, साथ में एक प्रतिभा युक्त अतिथि भी साथ में थे, वास्तव में खाते उन्हीं को लेने थे, खाते बाँध कर दिये साथ में दोनों को एक–एक पुस्तक गायत्री साधन भी भेंट की, अतिथि महोदय ने पुस्तक देखते हुये कहा–क्या आप आर्य समाजी हैं? इस पर श्री रम्मन जी ने कहा–हाँ कई पुस्तकें भी लिखी हैं। मैंने श्री रम्मन जी से कहा–आपका परिचय। श्री रम्मन जी ने कहा–आप हमारे समधी श्री विनोद कुमार जी गोयल जसपुर निवासी हैं, यह कहकर श्री रम्मन जी ने आगे कहा–कि जब मैं। विवाह का निमन्त्रण पत्र देने आया तो आपने बड़े ही संकोच और विनम्रता से कहा–मैं तो विवाह में उपस्थित नहीं हो सकूँगा, मैं एक दम चौंका और आश्चर्य से कहा–क्यों? तब आपने उत्तर दिया कि निमन्त्रण पत्र अंग्रेजी भाषा में छपा है। मुझे बड़ा एहसास हुआ और कार्ड वापिस लेंकर मौखिक निमन्त्रण दिया और उस समय मुझे कुछ ऐसा लगा कि मैंने एक बहुत बड़ी भूल की जो अपनी भाषा को नहीं अपनाया। इस पर श्री विनोद कुमार जी गोयल ने कहा–आपके काफी गहरे सम्बन्ध हैं, मैंने कहा–श्री रम्मन जी हमारी वैश्य शिक्षा समिति के मन्त्री हैं, तब श्री रम्मन जी ने कहा आप उसी समिति में हमारे वरिष्ठ उपप्रधान हैं।

मेरे व्यापारिक संस्थान पर श्री बाबू रामेश्वर प्रसाद जी तथा श्री रम्मन जी बैठे चर्चा कर रहे थे, होली पर्व पास आ रहा है, होलकाष्टक, प्रारम्भ हो गये हैं, इन दिनों में विवाह आदि कोई भी मांगलिक कार्य अशुभ दिन होने के कारण नहीं करते हैं। उसी समय

एक मुसल्मि बारात आ गई। मैंने कहा—इन अशुभ दिनों का प्रभाव इस बारात पर होगा या नहीं? दोनों का एक ही उत्तर था, यह मानने न मानने की बात है, हम इन दिनों को अशुभ मानते हैं तो हमारे ऊपर प्रभाव होता है, यह नहीं मानते इसलिए इन पर प्रभाव नहीं होना। मैंने कहा—यह बात उचित नहीं रही, अशुभ दिन सबके लिए अशुभ होने चाहिए और शुभ दिन सबके लिए शुभ होने चाहिए। मानने न मानने से क्या होता है? वर्षा हो रही है, तो क्या मेरे न मानने से वर्षा नहीं होगी या रुक जायेगी? नहीं! मेरे मानने न मानने से वर्षा के ऊपर कोई प्रभाव नहीं होता। अशुभ दिनों को शुभ दिन मानने से उसके परिणाम स्वरुप विपरीत फल का प्रभाव क्यों नहीं होता? स्पष्ट सिद्ध है कि यह बात सत्य नहीं असत्य है, इस पर हँसते हुए श्री रम्मन जी बोले यह है आर्य समाजी की बात। □□

न्यायिक मजिस्ट्रेट की विनम्रता

१९९० मुरादाबाद न्यायालय में श्री सर्वेश कुमार जी गुप्ता न्यायिक मैजिस्ट्रेट थे, मेरी कोई पुस्तक उनके हाथ लगी, उसे पढ़कर उन्होंने अपने स्टैनो को मेरे पास भेजा और एक पुस्तक पुत्र प्राप्ति का साधन मंगवाई। उसे पढ़कर श्री सर्वेश कुमार जी गुप्ता की मुझसे मिलने की इच्छा और तीव्र हो गई, स्टैनो को भेजा और मिलने के लिए निवेदन किया मैं मंगलवार को व्यापारिक अवकाश के दिन न्यायालय में ही गया, पर्ची भेजी उसे देखकर अवकाश दीर्घा में बैठाने के लिए स्टैनो को भेजा और कुछ देर पश्चात् स्वयं भी आ गये। लगभग ३० मिनट तक चर्चा रही बहुत प्रसन्न हुए। एक दो बार और मिले। यहाँ से फिरोजाबाद को स्थानान्तरण हो गया, वहाँ से पत्र आया और औषधि मंगवाई। फलतः प्रभु कृपा से नवजात शिशु के आगमन से परिवार में अति उल्लास छा गया, प्रसन्नता में विनम्रता पूर्वक आग्रह के साथ मनीआर्डर द्वारा कुछ राशि भेंट रूप में भेजी। २०/६/९२ को मुख्य न्यायिक मजिस्ट्रेट, झाँसी के पते से पत्र भेजा और उसमें लिखा—"मुरादाबाद में रहने के दौरान दो तीन

बार आपसे भेंट हुई उससे बहुत प्रभाव पड़ा वस्तुत: आप जो समाज की सेवा कर रहे हैं उसकी प्रशंसा करने एवं सराहने के लिए कोई उपयुक्त शब्द नहीं हैं। ईश्वर आपके इस मिशन को सफलता दे ऐसी मेरी प्रभु से कामना है''। १६/१०/९२ को एक मनीआर्डर मिला उसके कूपन पर यह लिखा—''आपके द्वारा भेजी 'गायत्री साधन' पुस्तक प्राप्त हुई। वस्तुत: आपकी धर्म परायणता समाज के प्रति अद्वतीय है। सही मायने में मानव जीवन का सच्चा उपयोग किया है। आपको जितना नमन किया जाय कम ही है'' □□

नकल कर लेखक बने

श्री आलोक कुमार जी गोटे वाले मेरे पास दुकान पर आया करते हैं, अनेक प्रकार की चर्चा होती है। एक बार श्री आलोक कुमार जी ने बताया—कि एक बन्धु जी मुझसे कह रहे थे कि पाँच सात पुस्तकें मँगा लीं उनमें से कहीं का कुछ कहीं का कुछ लेकर पुस्तक बना डाली और लेखक बन बैठे, यह कोई योग्यता की बात है? इस पर आलोक जी ने उनसे कहा—आपकी बात बड़ी करते हुऐ यह कहता हूँ कि आप उनसे अधिक पढ़े हैं, उनसे अधिक योग्य हैं और पैसे में भी कम नहीं, यदि वे पाँच सात पुस्तकें देखकर लिखते हैं तो आप यह काम दस पन्द्रह पुस्तकें मंगवाकर उनमें कुछ कहीं का—कुछ कहीं का निकाल कर आपकी भी एक पुस्तक उनसे भी अच्छी बन सकती है। लेखक बनने का यह बहुत सुगम मार्ग है। आप भी इसे अपनाईये। मैंने कहा—श्री आलोक जी यह चर्चा किसके बारे में है और किसने कही। इस पर श्री आलोक जी ने कहा—यह आपके बारे में कहा गया था और कहने वाले थे हिन्दूकालेज के पुराने लायब्रेरियन श्री परमेश्रीदास। आपके जमीदार।

ला० रामोतार पुत्र श्री रामचरन लाल जी सर्राफ मेरी दुकान पर बैठे कह रहे थे कि लोग दूसरों की पुस्तकां पर अपने नाम का टाइटिल लगा कर अपनी कहने लगते हैं।

मैं बड़े असमंजस में पड़ गया, एक का यह कथन चार पाँच पुस्तकों में से कुछ निकाल कर लेखक बन गये, दूसरे के यह विचार, कि दूसरे की पुस्तक पर अपना टाइटिल लगाकर अपनी कहने लगे। विचार सबके अपने अपने होते हैं, उस पर मुझे क्या सोचना, जो उनका कार्य है वे वह कर रहे हैं और जो मेरा कार्य है उसे मैं कर रहा हूँ।

अनिल बन्सल जिनका बचपने का नाम गोपी है, वह मेरे पास नबम्बर १९९१ में आये और कहा हम "साहू शिवशक्ति शरण कोठीवाल स्मारक समिति मुरादाबाद" द्वारा साहित्य के क्षेत्र में आपका सम्मान करना चाहते हैं, मैंने कहा—इसकी कोई आवश्यकता नहीं। फिर आग्रह किया तो मैंने कहा—कहीं सम्मान की ओट में कोई रहस्य तो नहीं छिपा है? मैं किसी के हाथ बिक नहीं सकता और न मुझसे व्यर्थ की प्रशंसा हो सकती है, मुझे इससे मुक्त रखें। इस पर वह बोले नहीं—नहीं ऐसी कोई बात नहीं है। हम तो हर वर्ष किसी अच्छे योग्य विद्वान् का सम्मान करते ही हैं। आप २ जनवरी १९९२ को कार्यक्रम में अवश्य ही उपस्थित हों।

कुछ समय पश्चात् अनिल बंसल मेरी दुकान पर आये और कहा—आप महत्वाकाँक्षी तो नहीं, आपने अपनी पुस्तकों में जो अपना चित्र लगाया वह प्रचार की दृष्टि से तो नहीं हो सकता, इसका कोई और ही कारण हो सकता है, मैं इसे जानना चाहता हूँ। मैंने उपरोक्त दोनों सम्बादों को सुनाते हुए चित्र लगाने के औचित्य को बताया और कहा अब पुस्तक के प्रत्येक पृष्ठ पर नाम भी देना आरम्भ कर दिया है जैसे गायत्री साधन से आगे की पुस्तकों में छपा है। □□

सहयोगी

श्री पुष्पेन्द्र वर्णवाल जी ने मुझसे कई बार कहा—कि आपने आर्य समाज की बहुत सेवा कर ली। अब आपको कुछ साहित्यिक सेवा भी करनी चाहिए, वैसे तो आपकी सभी कृतियाँ उपयोगी और

उत्तम हैं, वेदों पर आधारित हैं, आपने आर्य समाज के साथ—साथ वेद की भी बहुत सेवा की है, अब आप कोई मौलिक कृति की रचना कीजिए जिसमें आपका अपना चिन्तन निहित हो।

१९९२ में कर्फ्यु के दिनों में मैंने छोटी—छोटी २१ कहानियाँ लिखकर तैयार कीं। उसे श्री पुष्पेन्द्र जी ने देखा और कहा—यह बहुत ही उत्तम प्रयास है, इसकी भूमिका मैं ही लिखुँगा और नामकरण भी करूँगा।

१९९१ में आर्य समाज मण्डी बाँस मुरादाबाद में कुछ भवन निर्माण का कार्य हुआ था उस समय प्रधान हंसराज चौपड़ा और मन्त्री विनोद कुमार थे। निर्माण कार्य में पर्याप्त घोटाला हो रहा था, इसकी कई बार चेतावनी प्रधान को दी गई, परन्तु उस पर प्रधान ने कोई ध्यान नहीं दिया। उसके पश्चात् ८ मार्च १९९२ को अगला चुनाव हुआ, उसमें हंसराज चौपड़ा जबरन फिर प्रधान बने और मन्त्री मैं (वीरेन्द्र नाथ)। इस घोटाले को अंतरग़ सभा की कई बैठकों में उठाया गया, परन्तु प्रधान ने उसे उठाने नहीं दिया। फलस्वरुप सदस्यों में यह ज्वाला दिन प्रतिदिन भड़कती रही। व्यक्तिगत रुप से निरीक्षण कराया गया। १५ हजार से ऊपर का घोटाला सिद्ध हो गया। चर्चायें होने लगी, परिणाम यह निकला कि मुझे ५ जून १९९३ को बिना किसी आरोप के, साथ में आर्य समाज की नियमावली को भी ताक पर रख कर ६ वर्ष के लिये निष्काषित कर दिया। इस विषय का सारा पत्राचार २६ जनवरी १९९४ के 'कहन सुनन' समाचार पत्र में प्रकाशित हुआ है।

पुस्तक का नाम रखा 'आनुषक्' छप कर तैयार होने लगी, श्री पुष्पेन्द्र जी ने कहा—इसका विमोचन अवश्य कराना। योजना बनी वेद संस्थान के द्वारा आर्य समाज स्टेशन रोड पर यह कार्यक्रम २६ जनवरी १९९४ को होना निश्चित हुआ। दैव योग से श्री पुष्पेन्द्र जी को नगर से बाहर जाना पड़ा। विमोचन डा० जगत प्रकाश आत्रेय जी के करकमलों द्वारा सम्पन्न होना निश्चित हुआ था। मैं पुस्तक विमोचन के कार्यक्रम से बिलकुल ही परिचित नहीं था, मेरे सामने संकट उपस्थित था। पुष्पेन्द्र जी यहाँ थे नहीं, मेरी चिन्ता दिनों दिन

बढ़ने लगी और सोचने लगा कि यह कार्यक्रम कैसे सम्पन्न होगा? २३ जनवरी की सायंकाल अनायास ध्यान आया कि इस कार्यक्रम का भार डा० अजय अनुपम जी को सौंपा जाये, मैं रात्रि को ही मिला। उनकी यह महानता है कि उन्होंने उसी समय स्वीकार कर मेरे संकट को दूर कर दिया। संयोजक डा० अजय अनुपम जी के नाम से २४ जनवरी को निमन्त्रण पत्र छपने को दे दिया गया और वह रात्रि तक तैयार होकर मिल गया। श्री अनुपम जी ने सबके नाम पते लिखे और उसी समय से वितरित करना प्रारम्भ कर दिया।

केवल एक दिन के कठोर प्रयास से कार्यक्रम बहुत ही प्रभावी रहा उसमें लगभग २५० विद्वान् कवि प्रोफेसर्स आदि उपस्थित हुऐ, और सौभाग्य से उसी समय श्री पुष्पेन्द्र जी भी आ गये थे। इतने लघु समय में कार्यक्रम की भव्यता और पुस्तक के विषय से सभी प्रभावित रहे।

श्री पुष्पेन्द्र जी ने अगले दिन दुकान पर आकर कहा—कि पुस्तक के कार्यक्रम की सफलता के लिए आपको बधाई है। आगे और कहा—कि अब आपके ऊपर एक अभिनन्दन ग्रन्थ तैयार होना चाहिए। मैंने कहा—यह कार्य मेरा नहीं, इस पर श्री पुष्पेन्द्र जी ने कहा—इसे हम करेंगे। पत्रक की भाषा बनी छपकर तैयार हुये और चारो ओर जाने लगे। दो ढाई मास के पश्चात् कुछ लेख आने लगे। लगभग २० लेख आये थे। शनै:—शनै: कुछ लेख आते रहे, पुष्पेन्द्र जी उनको देखते रहे। एक दिन कहा—पहले लेखों को लिखा जायेगा, उसमें काट—छाँट की जायगी और फिर उनको लिखा जायगा उसके पश्चात् दोबारा पढ़कर काट—छाँट की जायेगी। तब जाकर छपने योग्य शुद्ध लेख तैयार होंगे। उनमें से भी कुछ को छाँटकर किसी पत्रिका में विशेपांक के रूप में प्रकाशित करा देगें और शेष ग्रन्थ के रूप मे छप जायेंगे।

मेरी कुछ चिन्ता बढ़ी मन में सोचा जिस विद्वान् लेखक ने बड़े परिश्रम से अपनी भावनाओं को संचित कर उसे शब्द रूपी मोतियों में पिरोकर जो लेख तैयार कर बड़े उत्साह के साथ भेजा है,

क्या उसमें काट—छाँट करने का किसी को कोई मौलिक अधिकार है? जब तक वह किसी प्रकार सिद्धान्त के विपरीत अथवा अप्रासंगिक प्रलाप से पूरित न हो? लेख को ग्रन्थ में स्थान न देकर किसी पत्रिका के विशेषांक में छापना लेखक का अपमान नहीं? मैं इन प्रश्नों के समाध ाान के लिए श्री अम्बरीश कुमार जी से मिला और मैंने कहा—अभिनन्दन ग्रन्थ के हेतु जो लेख आये हैं अथवा आयेंगे, उनमें काट—छाँट करना क्या अनिवार्य होता है? श्री अम्बरीश जी ने कहा—ऐसा कोई नियम तो है नहीं? हाँ यदि ग्रन्थ का आकार बजट से ऊपर हो जाये तो ऐसा किया जा सकता है अन्यथा नहीं। या लेख निरर्थक प्रलापों से भरा हो, उसे काट—छाँट कर सुरूपवान बनाया जा सकता है।

एक दिन श्री पुष्पेन्द्र जी ने कहा—आपके लिये तो २०,२५ लेख आ भी गये? मैंने बहुतों से कहा था कि दुर्गादत्त त्रिपाठी जी के बारे में कुछ लेख लिखकर मुझे दें, मैं उनके नाम से एक लेख संग्रह निकालना चाहता हूँ, बहुतों से सिर मारा परन्तु किसी ने कुछ लिखकर नहीं दिया, आपके लिये तो फिर भी बहुत कुछ आ गया।

अभिनन्दन ग्रन्थ के लिए शुभकामना संदेश, व्यक्तित्व एवं कृतित्व, कवितायें और सैद्धान्तिक लेखों के रूप में ९३ सन्दर्भों से सज्जित होकर अभिनन्दन ग्रन्थ छपकर तैयार होकर उसकी एक प्रति मेरे पास आई। एक दिन श्री पुष्पेन्द्र जी ने दुकान पर आकर कृति देखी, कुछ लेख पढ़े और प्रसन्नता पूर्वक यह कहा—कि इस ग्रन्थ की विशेषता यह है कि इसमें आधे से अधिक लेख सम्पूर्ण भारतवर्ष के सुदूर निवासियों ने अपने विचारों की अभिव्यक्ति को व्यक्त करते हुए भेजे हैं, शेष नगर से भी जो लेख आये हैं वे भी योग्य, विद्वान् और सम्मानित व्यक्तियों के हैं। श्री पुष्पेन्द्र जी ने और आगे कहा—वीरेन्द्र जी इस ग्रन्थ को देखकर आपकी दुकान पर आने वाले व्यक्तियों में जिनमें से मैं भी एक हूँ उनमें आपके प्रति ईर्ष्या भड़क उठेगी। मैंने कहा—ऐसा कुछ नहीं होगा, सबको प्रसन्नता ही होगी।

७ जनवरी १९९६ का कार्यक्रम निश्चित किया गया, पत्रक छपा उसमें लिखा था—

।।ओ३म् खं ब्रह्म।।

सम्मान्यवर—

वेद संस्थान मण्डी चौक मुरादाबाद द्वारा आयोजित नगर के सुपरिचित साहित्यकार वैदिक स्वाध्यायी श्री वीरेन्द्र गुप्त: के नागरिक अभिनन्दन एवं अभिनन्दन ग्रन्थ लोकार्पण समारोह के अवसर पर इष्ट—मित्रों सहित सपरिवार आपकी उपस्थिति प्रार्थनीय है। अध्यक्ष श्री अनन्तराम अग्रवाल (पूर्व जिला विद्यालय निरीक्षक) मुख्य अतिथि—प्रो०शेर सिंह जी (पूर्व रक्षा राज्य मन्त्री, भारत सरकार) विशिष्ट अतिथि— १. डा० श्री भारत भूषण जी आर्य (वेदालंकार, गुरुकुलकागड़ी, हरिद्वार) २— श्री अजीत कुमार जी गुप्ता। दिनांक ७ जनवरी १९९६, रविवार समय मध्यान १.३० बजे, स्थान—एस. एस. इन्टर कालेज, स्टेशन रोड, मुरादाबाद। निवेदक—जगदीश सरन अध्यक्ष; डा० अजय अनुपम—संयोजक, राजेन्द्र कुमार गुप्त मन्त्री।

कार्यक्रम बहुत भव्य और विशाल रहा श्री पुष्पेन्द्र जी वर्णवाल और श्री विजय कुमार गुप्ता जी ने बड़ी कुशलता से कार्यक्रम की व्यवस्था की। सभा स्थल पूर्ण भरा हुआ था और बहुत से भद्र पुरुष बाहर भी खड़े थे। सबको अभिनन्दन ग्रन्थ भेंट किया गया उसका नाम था 'अभिनन्दनीय व्यक्तित्व श्री वीरेन्द्र गुप्त:' सम्पादन था प्रो० राजेन्द्र जिज्ञासु अबोहर निवासी का। सबको अति प्रसन्नता थी, सबने कहा—पिछले ६० वर्षों से ऐसा कार्यक्रम नगर में हुआ ही नहीं था। इस कार्यक्रम का संचालन डा. अजय अनुपम ने किया था। अभिनन्दन ग्रन्थ की प्रतिक्रिया रूप में कई ने कहा—आपने ग्रन्थ अच्छा लिखा है। मैंने उत्तर दिया—यह मेरा लिखा नहीं, यह तो मुझे भेंट किया गया है। स्वयम् विचारिये ऐसे व्यक्तियों की सोच पर। हाँ! एक दिन मेरी दुकान पर आकर श्री डाल चन्द्र जी ने जिनका व्यापारिक संस्थान मौ० साहू में बर्तनों का है कहा—साहब! हमें नहीं मालूम था कि आप इतने बड़े लेखक हैं। यह जानकारी

आपके अभिनन्दन ग्रन्थ से मिली, आपकी लिखिंत पुस्तक नींव के पत्थर की बहुत चर्चा की गई है।। हमें बड़ी प्रसन्नता हुई, आपके सादा जीवन में छिपे हुए वास्तविक स्वरूप को पढ़कर। २५ जनवरी १९९६ को इलाहाबाद से आये, हिन्दू स्कूल के सहपाठी, इलाहबाद हाईकोर्ट के एडवोकेट श्री सूर्य प्रकाश जी गुप्ता उन्होंने कहा—वीरेन्द्र! यह विशाल आयोजन किसने किया? मैंने कहा—अभिनन्दन समिति ने। एडवोकेट महोदय ने कहा—यह बहुत ही सराहनीय कार्य हुआ, यह अवश्य होना चाहिए था, आपके कार्य को देखते हुए इसकी आवश्यता भी थी। श्री डा० राम प्रसाद मिश्रा जी १४ सहयोग अपार्टमेंट, मयूर बिहार, देहली से पत्र द्वारा लिखकर भेजते हैं।

"वीरेन्द्र गुप्त की प्रकट है साधना
उनकी अनवरत धन्य वेद आराधना।"

□□

क्या फोटो भगवान हैं?

आषढ़ शुक्ल ११ सं २०४९—१० जौलाई १९९२ शुक्रवार के दिन जब मैं दुकान बन्द करके घर पर आया तो उस समय सुपुत्री इन्दिरा तीनों बच्चों सहित आई हुई थीं, मैं कुर्सी पर बैठा हुआ था। उसी समय धेवती नेहा जिसका जन्म १ दिसम्बर १९८६ को हुआ था गोदी में आकर बैठ गई, अपने हाथ से मेरे मुँह को अपनी ओर घुमाते हुए कहा—नाना जी! क्या फोटो भी भगवान होते हैं?

मैं एक सैकेन्ड को असमन्जस में पड़ गया कि साढ़े पाँच वर्ष की आयु में इतना गूढ़ प्रश्न? मैंने कहा—आपके कई फोटो खिंचे हैं, अभी संजीव चाचा जी के विवाह में भी फोटो खिंचे हैं तो क्या फोटो नेहा है?

तत्काल उसने उत्तर दिया—नेहा तो मैं हूँ, फोटो नहीं।

मैंने कहा—क्या फोटो भगवान हो सकते हैं?

तब उसने उत्तर दिया नहीं, परन्तु हमारी दादी जी और पिता जी फोटो को ही भगवान मानकर ही पूजा करते हैं, आप नहीं करते,

आप तो सच्चे भगवान की हवन करके पूजा करते हैं।

मैंने प्रभु से प्रार्थना की—प्रभु जी इस बच्ची के मन में आप अपनी ज्योति का प्रकाश बनाये रखिये।

रविवार के दिन पुनः नेहा से बात हुई। घर पर खाल का बना हुआ एक खिलौना (चीता) रखा था, उसी के पास मिट्टी के दो तोते भी रखे थे, मैंने नेहा से कहा—आप यह बताइये, क्या यह चीता है?

नेहा ने कहा—यह नकली चीता है असली नहीं।

मैंने कहा—और यह तोने?

उत्तर दिया—यह भी नकली हैं असली नहीं।

तब मैंने कहा—इसी प्रकार मूर्ति असली नहीं नकली भगवान होते हैं।

लगभग डेढ़ वर्ष के पश्चात् जनवरी १९९४ में नेहा ने अपने पिता जी से प्रश्न किया—क्या सबके अन्दर भगवान जी हैं।

नेहा के पिता जी श्री वीरकान्त जी ने कहा—हाँ।

नेहा—क्या गधे में भी भगवान जी हैं?

पिता जी—हाँ।

नेहा—तो क्या भगवान जी गधे हैं?

इस पर नेहा के पिता जी हँसने लगे और कहा—इसका उत्तर अपने नाना जी से मालूम करना।

नेहा—क्या भगवान जी को किसी ने देखा है?

पिता जी—हाँ तुम्हारे नाना जी ने देखा है। उन्हीं से मालूम करना।

नेहा ने जब मुझसे प्रश्न किया—क्या आपने भगवान जी को देखा है?

मैंने कहा—हाँ देखा है।

नेहा—जब भगवान जी गधे में हैं तो क्या भगवान जी गधे हो गये?

मैंने कहा—इसका उत्तर हम तुमको फिर बतायेंगे।

यदा–कदा ईश्वर के सर्वव्यापक होने का उपहास उड़ाते हुए प्रश्न करते हैं, क्या परमात्मा मल (टट्टी) में भी मौजूद है? मैंने इस व्यंगात्मक प्रश्न का उत्तर 'दस नियम' पुस्तक में कठोपनिषद् के उद्धरंण से दिया है, परन्तु यह उत्तर सातवर्षीय बालिका के लिए बहुत क्लिष्ट है, मैं इस पर विचार करता रहा कि किस सरल युक्ति से इसका समाधान करूँ। एक दिन प्रात: काल गायत्री जाप के पश्चात् अनायास समाचार पत्र में प्रकाशित एक समाचार पर ध्यान केन्द्रित हो गया, समाचार था कि किसी धनी पुरुष ने सोने के पाँसे अपने फिलैष के टैंक में छिपा रखे थे जिसे खोजी मशीन ने बताया। तत्काल मस्तिष्क में समाधान उठ आया। जो वस्तु परिपक्व है वह किसी भी दोष युक्त वस्तु के सम्पर्क में आने से दूषित नहीं होती, इसके स्थान पर खाने आदि की अपक्व वस्तु .दोष युक्त वस्तु के सम्पर्क में आने से दूषित हो जाती है, समाधान स्पप्ट है।

मैंने नेहा से कहा—यदि सोने या चाँदी की अँगूठी गंदी नाली में गिर जाये तो उसे निकालकर धोकर साफ करने के पश्चात् वह क्या बेकार हो जाती है?

नेहा—नहीं!

मैंनें कहा—क्या उसे फिर से पहना जा सकता है?

नेहा—हाँ!

मैंने कहा—क्या रोटी गन्दी नाली में गिर जाने पर उसे उठाकर धोकर फिर खाने के काम में लिया जा सकता है?

नेहा—नहीं।

मैंने कहा—क्यों?

नेहा—क्योंकि वह गन्दी हो गई।

मैंने कहा—और अँगूठी?

नेहा—अंगूठी राख से माँज कर धोई जा सकती है परन्तु रोटी राख से माँज कर नहीं धोई जा सकती।

मैंने कहा—भगवान जी! अंगूठी की तरह परिपक्व (सबकाल में सच्चिदानन्द) हैं इस कारण वह गधे के अन्दर होते हुए भी गधा नहीं हैं।

इस प्रकार समझाने पर नेहा की समझ में आया कि गधे के अन्दर जो भगवान् जी हैं वह पवित्र और परिपक्व (जिसका गुण धर्म सामान्यत: स्पर्श, आदि से परिवर्तित न हो) होने पर गधा नहीं हो जाते। ◻◻

श्री कृष्ण चर्चा अधूरी

भादों कृष्णा ८ सं २०४९ तदनुसार २१ जौलाई १९९२ शुक्रवार के दिन महिला आर्य समाज स्टेशन रोड के द्वारा एक विशाल वेद कथा का आयोजन स्टेशन रोड आर्य समाज में किया गया, उसमें आर्चार्या प्रज्ञा जी वाराणसी से तथा श्रीमती शकुन्तला जी देहली से आई थीं, इसका संचालन मन्त्री श्रीमति निर्मला जी आर्य ने किया था। रात्रि की सभा में श्री कृष्ण के जीवन पर सभी ने प्रकाश डाला, मुझे भी अवसर प्रदान किया गया, मैंने श्री कृष्ण जी के ब्रह्मचर्य स्वरूप से सबको अवगत कराया और अन्त में निवेदन किया कि प्रत्येक आर्य बन्धु को प्रवचन से पूर्व वेद मन्त्र का पाठ अवश्य करना चाहिए। मेरे पश्चात् श्री रमेश चन्द्र जी यादव को समय दिया गया, उन्होंने बैठते ही कहा—कृष्ण की चर्चा बिना गीता के अधूरी है, उन्होंने यह शब्द दूसरे किसी के मत्थे मढ़ते हुए कहे। प्रवचन में गीता और महाभारत के पाण्डित्य का प्रदर्शन दिखाते हुए श्लोकों की झड़ी लगा दी। प्रवाह में बहते हुए कहा—ब्रह्मा ने जिस मिट्टी से कृष्ण को बनाया था वह मिट्टी अब ब्रह्मा के पास नहीं रही, राम तो बार—बार आ सकते हैं परन्तु कृष्ण अब दुबारा नहीं आ सकते। श्री यादव जी उस समय यह भूल गये कि कार्यक्रम श्री कृष्ण जन्माष्टमी का हो रहा है न कि गीता जयन्ती का, श्री कृष्ण के जन्म से लेकर महाभारत युद्ध में दोनो सेनाओं के बीच अर्जुन के रथ को ले जाकर खड़ा करते समय तथा मोहवश अर्जुन का गाण्डीव रख देने के समय से एक क्षण पूर्व तक संसार में गीता नाम की कोई वस्तु नहीं थी तो फिर गीता बिना श्री कृष्ण चर्चा अधूरी कैसे हो सकती है जब की श्री कृष्ण के जीवन के चौथे चरण में गीता ने प्रवेश किया था।

कृत्वा पौर्वान्हिकं स्नातः शुचिरंकलकृतः।
उपतस्ये विवस्वन्तं पावकं च जनार्दनः।।

उद्योगा पर्व

श्री कृष्ण ने शौचादि से निवृत होकर, स्नान करके प्रातः काल सन्ध्या और अग्निहोत्र किया।

अवतीयँ रथात् तूर्णा कृत्वा शोचं यदा विधि।
रथ मोचनमादिश्य संध्यामुपविवेश ह।।

उद्योग पर्व

हस्तिनापुर जाते हुए मार्ग में रथ रुकवा कर संध्या करते हैं।

कृतोदकानुजप्यः स हुताग्निः सयंलकृतः

उद्योग पर्व

प्रातः काल दुर्योधन की सभा में जाने से पूर्व सन्ध्या हवन से निवृत होते हैं।

इन प्रमाणों से स्पष्ट सिद्ध है कि श्री कृष्ण जीवन चर्चा गीता नहीं वेद बिना अधूरी है।

वेद व्यास जी ने महाभारत ३५ हजार श्लोकों में तैयार किया था। राजा भोज के समय महाभारत में मिलावट होते—होते ६० हजार श्लोक हो गये थे, उस समय राजा भोज ने घोपणा की थी कि अब महाभारत में मिलावट करने वाले के हाथ काट दिये जायेंगे।

इस समय महाभारत में एक लाख से ऊपर श्लोक हैं। इससे अनुमान लगाया जा सकता है कि महाभारत में कितना दूध और कितना पानी हैं।

कुरुक्षेत्र के मैदान में योगी राज श्री कृष्ण जी द्वारा दिये गये उपदेश को पुनः सुनने के लिए प्रार्थना की, उस पर श्री कृष्ण जी ने अर्जुन को उत्तर दिया—

न च शक्यं पुनर्वक्तुं अशेषतः धनञ्जयः।
योग युक्तेन तन्मया।।

महाभारत अश्वमेघ पर्व अ०१६

अर्थात्—हे अर्जुन! मैं आज उस ज्ञान को फिर ज्यों का त्यों वर्णन कर सकने में असमर्थ हूँ क्योंकि वह तो मेरे द्वारा योग युक्त होकर कहा गया था।

स्पष्ट है कि श्री कृष्ण जी को वह उपदेश याद नहीं और अर्जुन को भी याद नहीं रहा, इसलिए वह दुबारा सुनना चाहता था। कुरुक्षेत्र के मैदान में रथ के पास श्री कृष्ण और अर्जुन के अतिरिक्त और कोई नहीं था। उपदेश के समय कोई लिपिक, टेप रेकार्डर आदि कुछ नहीं था, और दोनों में से किसी को वह उपदेश याद भी नहीं, तो फिर यह गीता का निर्माण कैसे हो गया? गीता के प्रथम अध्याय में धृतराष्ट्र और संजय का सम्वाद मात्र है। क्या इसे भी श्री कृष्ण जी ने कहा था? इसमें ४७ श्लोक हैं। यह एक प्रश्न चिन्ह है।

मथुरा वृन्दावन मार्ग पर बिरला जी की ओर से बनाये गये विशाल गीता भवन का उद्घाटन करते समय श्रद्धेय डा० सम्पूर्णानन्द जी ने कहा था, गीता की अपेक्षा वेद की रक्षा करो, गीता यर्जुवेद के एक मन्त्र मात्र की व्याख्या है। गीता से वेद नहीं बन सकता, हाँ! वेद से अनेक गीतायें बन सकती हैं।

वर्तमान गीता में ७०० श्लोक हैं, महाभारत की गणना से पता चलता है कि गीता के ७४५ श्लोक होने चाहिए, बाली महाद्वीप में गीता शिला लेखों पर स्थित है उसमें केवल ७० श्लोक हैं। वर्तमान गीता के ७०० श्लोकों को बिना रुके शीघ्रता के साथ पढ़ा जाये तो कम से कम ४, ५ घन्टे का समय तो लग ही सकता है। युद्ध क्षेत्र में क्या दुर्योधन जैसा व्यक्ति ४, ५ घन्टे मौन खड़ा रह सकता था? नहीं! वह तो अर्जुन पर प्रहार करना आरम्भ कर देता। इससे यह भी स्पष्ट सिद्ध है कि अर्जुन को युद्ध के लिए प्रेरित करने का जो उपदेश दिया था वह केवल ७० श्लोंको का ही हो सकता है। यह बात भी सही है कि गीता का निर्माण महाभारत के युद्ध से लगभग १५० वर्ष के पश्चात् वेद व्यास के शिष्य सौती के द्वारा हुआ है।

गीता के इन श्लोकों पर ध्यान दीजिये यह क्या कहते हैं—

बहूनि मे व्यतीतानि जन्मानि तव चार्जुन।
तान्यहं वेद सर्वाणि न त्वं वेत्थ परंतप।।

गीता ४/५

हे अर्जुन! मेरे और तेरे बहुत से जन्म हो चुके हैं, परन्तु हे परंतप: उन सबको तू नहीं जानता मैं जानता हूँ।

परित्राणाय साधूंना विनाशाय च दुष्कृताम्
धर्म संस्थापनार्थाय संभवामि युगे युगे।।

गीता ४/८

साधु, पुरुषों का उद्धार करने के लिए और दूषित कर्म करने वालों का नाश करने के लिए तथा धर्म स्थापन करने के लिये, मैं युग—युग में प्रकट होता हूँ।

विचारणीय प्रश्न है कि श्री यादव जी का कथन है कि ब्रह्मा के पास कृष्ण को बनाने वाली मिट्टी ही समाप्त हो गई और कृष्ण दुबारा नहीं आ सकते। गीता के उक्त श्लोकों में श्री कृष्ण जी स्वयम् कहते हैं कि मेरे तेरे बहुत से जन्म हो चुके हैं, दूषित कर्म करने वालों का नाश करने के लिए तथा धर्म स्थापन करने के लिए बार—बार आता हूँ। इसमें किसकी बात सही मानी जाये गीता की या श्री यादव जी की, इस पर विचार आप स्वयम् ही कर लें। ब्रह्म और ब्रह्मा में अन्तर है, ब्रह्म परमेश्वर को कहते हैं और अग्नि, वायु, आदित्य, अंगिरा इन चार ऋषियों से वेद का ज्ञान प्राप्त कर चारो वेदों के ज्ञाता ब्रह्मा कहलाते हैं। यहाँ पर श्री यादव जी का मन्तव्य ब्रह्म से या ब्रह्मा से, किससे है यह स्पष्ट नहीं हो रहा। हाँ इस्लाम मत के अनुसार यह बात मोहम्मद साहब के लिए तो फिट हो सकती है कि अब दुबारा पैगम्बर नहीं आयेगा। □□

भगवान को किसने अधिष्ठाता बनाया

१९४६ में आर्य वीर दल की शाखा में श्री ओम प्रकाश जी मौ० साहु के निवासी श्री लालमनदास जी के सुपुत्र भी शाखा में जाते थे इनका कण्ठ मधुर है इसी लिए शाखा समाप्ति पर ध्वज गायन यही किया करते थे। सीधे साधे सात्विक जीवन वाले और छल कपट से दूर रहने वाले व्यक्ति थे। अन्नपूर्णा मन्दिर के विशेष प्रेमी, नित्य प्राय: ४ बजे प्रत्येक ऋतु में रामनाम की फेरी लगाया

करते थे। १९८० में कर्फ्यू में भी निर्भय होकर नित्य फेरी लगाते रहे, किसी भी सिपाही ने मना नहीं किया। १९९० में एक दिन दुकान पर मुझसे बोले—अरे भाई वीरेन्द्र नाथ एक बात समझ में नहीं आ रही, मैं तुमसे ही कह रहा हूँ अपने मन की बात, किसी और से कहूँ तो वह कहेगा क्या नास्तिक हो गये हो या पागल? इसलिए तुमसे कह रहा हूँ। तुम मेरा समाधान करोगे। मेरे मन में यह प्रश्न उठ रहा है कि यह परमात्मा जो अधिष्ठाता बना बैठा है, उसे किसने अधिष्ठता बनाया या स्वयम् ही बना बैठा है, दूसरे कितने समय के लिए बना है, तीसरे क्या पूरे संसार के लिए बना है? या किसी क्षेत्र विशेष के लिए। उक्त प्रश्नों को सुनकर मैं चकित रह गया। लगा कि कहीं आज मेरी परीक्षा तो नहीं ली जा रही है?

मैंने कहा—ओम प्रकाशजी! आप तो भगवान के भक्त हैं यह सब जानते ही हैं, क्या आप मेरी परीक्षा ले रहे हैं।

ओम प्रकाश जी हँसकर बोले—नहीं भाई मैं इसे जानना चाहता हूँ मैंने बहुत कुछ पढ़ा है और सुना भी है परन्तु मुझे इस बारे में कुछ नही मिला, तुमने वेद पढ़े हैं मैंने नहीं देखे इसलिए तुमसे जानना चाहता हूँ।

मैंने कहा—आप सभी देवताओं की पूजा, अर्चना, उपासना करते हैं।

ओम प्रकाश जी—हाँ बिल्कुल ठीक है।

मैंने कहा—क्या आपने कभी यह ध्यान दिया कि भगवान शंकर, श्रीराम, श्री कृष्ण, भगवान विष्णु आदि भी किसी की उपासना करते थे?

ओम प्रकाश जी—हाँ सभी करते थे।

मैंने कहा—वह किसकी उपासना करते थे?

ओम प्रकाश जी—(सीधे स्वभाव के व्यक्ति) हम इसे कुछ नहीं जानते, तुम ही बता सकते हो।

मैंने कहा—यह सब उसी परब्रह्मपरमेश्वर की ही उपासना करते थे। जिसने इस समस्त संसार की रचना की, वही सबका पालन हार है, और वही कर्मफल अनुसार अच्छे अथवा बुरे कर्मों का फल भी देता है। वही सबका रखवाला है।

ओम प्रकाश जी—क्या वह भगवान नहीं?

मैंने कहा—भगवान अनेक हो सकते हैं जो समय—समय पर आकर व्यवस्था देते हैं, और दुष्टों का संहार भी करते हैं। परन्तु ईश्वर एक ही है।

ओम प्रकाश जी—भगवान और ईश्वर में क्या अन्तर है?

मैंने कहा—ईश्वर एक है, वह कभी जन्म नहीं लेता। यही भगवान और ईश्वर का अन्तर है।

ओम प्रकाश जी—अब हमारे प्रश्नों का उत्तर दो, वेद क्या कहता है?

मैंने कहा—यजुर्वेद के ४०/८ के मन्त्र में कहा है "परिभूः स्वयंभू" अर्थात् वह स्वयम् ही है न उसका कोई माता, पिता, भाई, बहिन, आदि कुछ नहीं है इसी कारण वह संसार में एक ही है, समस्त संसार के लिये है, और सदैव रहने वाला है।

ओम प्रकाश जी—हम अब तक भ्रम में पड़े हुए थे, तुमने आज असलियत सामने रखी, अब कुछ समझ में आ रहा है। २ जुलाई २००३ को ओम प्रकाश जी दिवंगत हो गये। उनकी सरलता भूलने योग्य नहीं। □□

खाली समय में प्रभु-चिन्तन

अयोध्या में राम मन्दिर निर्माण कार सेवा ६ दिसम्बर १९९२ रविवार के दिन आरम्भ हुई, उसी समय कुछ उन्मादी तत्वों ने विवादास्पद खण्डहर को ढहा दिया। इस खण्डहर को बाबरी मस्जिद भी कहा जाता है। बाबर 'शिया' मुसलमान था इस स्थान पर अजान अथवा नमाज नहीं पढ़ी गई, इस ढाँचे के अन्दर एक चबूतरे पर राम लला की मूर्ती रखी है, जिसकी नित्य पूजा होती है। देहली के शिया ईमामने स्पष्ट कह दिया था कि जहाँ पर ५० वर्ष से कोई नमाज नहीं पढ़ी गई वह मस्जिद कैसे रह सकती है जबके नित्य उसमें पूजा होती है, हमारा उससे कोई वास्ता नहीं, यदि यह स्थान

मन्दिर को दे दिया जाये तो हमें कोई आपत्ति नहीं। इसके विपरीत सुन्नी मुसलमानों ने पूरे देश में वातावरण को अशान्त बना दिया और तुष्टीकरण की नीति अपनाने वाले राजनीतिज्ञों ने इसे भरपूर हवा दी। परिणाम स्वरूप अनेकों स्थानों पर कर्फ्यू लगा। मेरे घर पर २९ नवम्बर १९९२ से सामवेद पारायण छटा यज्ञ था इससे पूर्व चारो वेदों के पारायण यज्ञ हो चुके थे, इस अवसर पर पूज्य श्री स्वामी जीवनानन्द जी सरस्वती यज्ञ कराने आया करते हैं। ६ दिसम्बर की रात्रि से नगर में कर्फ्यू लग गया, लड़की दामाद और उनके तीनों बच्चे घर पर ही थे, दामाद श्री वीरकान्त जी की इच्छा बनी कि मैं भी प्रातः काल आपके साथ दैनिक यज्ञ में बैठा करूँ और वह बैठने लगे, लगभग दस दिन रहे और यज्ञ में अधिक रुचि और आनन्द आने लगा, फल स्वरूप उन्होंने घर जाकर स्वयम् यज्ञ करना आरम्भ कर दिया। इससे पूर्व प्रत्येक अमावस्या और पौर्णमासी को यज्ञ कराने के लिये मैं घर जाता था, अब वह स्वयम् ही करने लगे। दूसरे मैं खाली था, विचार आया कि कुछ बच्चों के लिये कहानियाँ लिख दूँ सो वह भी पूरी हो गई। प्रभु कृपा से कर्फ्यू में यही दो उपलब्धियाँ रहीं। □□

आनुषक्

१९९२ में सार्वदेशिक आर्यवीर दल के प्रधान संचालक श्री बालदिवाकर हंस जी से भेंट हुई, उस समय श्री हंस जी ने कहा—वीरेन्द्र जी आपने विद्वानों के लिये बहुत साहित्य लिखकर प्रकाशित किया है, अब कुछ हल्का साहित्य लिखिये जिसे सामान्य ज्ञान के व्यक्ति और बच्चे रुचि से पढ़ कर वैदिक सिद्धान्तों को समझ सकें। इस बात को लक्षित कर मैंने कुछ उपयोगी कहानियाँ लिखीं और उस पुस्तक का नाम 'आनुषक्' रखा, इसके विमोचन के लिये बुद्धवार २६ जनवरी १९९४ का दिन निश्चित कर वेद संस्थान की ओर से निमन्त्रण पत्र छपा, जिसमें मुख्य अतिथि के रूप में श्री जगत प्रकाश आत्रेय एम.ए., पी एच.डी., डी. लिट्. उपस्थित रहे और उन्हीं के करकमलों द्वारा पुस्तक का विमोचन हुआ, इस कार्यक्रम का

संचालन डा० अजय अनुपम जी ने किया, यज्ञ के पश्चात् कुमारी उपासना ने वेद मन्त्र के द्वारा सरस्वती गान किया, वेद संस्थान के उपाध्यक्ष आचार्य श्री ऋषि पाल जी ने संस्था के कार्य पर प्रकाश डाला, इसमें श्री पुष्पेन्द्र वणवाल जिन्होंने इस पुस्तक की भूमिका लिखी है, श्री राम मोहन जी, श्री ओम प्रकाश जी आर्य आदि ने भी अपने—अपने विचार रखे, हाँ श्री ओम प्रकाश जी आर्य ने कहा कि श्री वीरेन्द्र गुप्त: जी तो हमारे गुरु हैं, सबके अन्त में वेद संस्थान के सचिव श्री अम्बरीश कुमार जी ने सबको धन्यवाद दिया। सभी प्रोफेसर्स, कवि, लेखक और नगर के मूर्धन्य विद्वानों ने 'आनुषक्' कृति को बहुत सराहा। कई पाठकों ने मुझसे आकार कहा—आपकी यह पुस्तक बहुत उपयोगी और शिक्षा प्रद है। इस प्रकार का साहित्य और लिखिये। आपकी शैली और भाषा अति सुन्दर और सरल है। □□

प्रभु से प्रार्थना

मेरी बहिन रजनी जिसका विवाह देहली में ला० गोकरन नाथ जी (आंवला वाले) के सुपुत्र श्री हरिशंकर जी के साथ हुआ था, उनकी कन्या शोभा के लिये सुयोग्य वर की खोज थी। मैं नित्य नियमित रूप से गायत्री जाप, सन्ध्या और यज्ञ करता हूँ। गायत्री जाप के पश्चात् प्रभु से प्रार्थना की—प्रभु जी शोभा के योग्य और उसकी इच्छा के अनुसार देहली में कोई सुयोग्य पात्र बतलाओ और उसे दुकान पर ही सम्पर्क के लिये भेजो। तीन चार दिन के पश्चात् मेरी दुकान पर श्री अम्बरीश कुमार जी आये। आपसे आर्य समाज और आर्य कुमार सभा के नाते एक दीर्घ कालीन परिचय था और दुकान पर यदा—कदा आने की कृपा करते ही रहते थे। उन्होंने कहा—वीरेन्द्र जी! हमारी बहिन जी के लिये कोई लड़का बताइये और भाई के लिये कोई लड़की, मैंने कहा—आपके भाई का नाम क्या है? बताया अनिरूद्ध, क्या करते हैं। देहली में बर्तनों की फैक्ट्री लगा रखी है, मैंने उनसे श्री अनिरुद्ध जी का पता लिया और देहली बहिन को पत्र लिखा, पता भी दे दिया था। चर्चा आगे को चली, आर्य समाज मण्डी

बाँस मुरादाबाद में लड़की को देखने का कार्यक्रम बना, स्वीकृति प्राप्त हुई, ईर्ष्यालुओं ने अनेक प्रकार की बाधायें डालीं परन्तु वे सब असफल ही रहें। जब प्रातः यज्ञ पर प्रार्थना की और उसे प्रभु जी ने स्वीकार कर दुकान पर ही सुयोग्य सुपात्र को भेजा तो ईर्ष्यालुओं की बाधायें क्यों कर सफल हो सकती थी। इसके विपरीत उनके पिता श्री महेन्द्र जी ने मुझसे कहा—अनिरुद्ध आपका भतीजा है और शोभा भाँजी आपको दोनों पक्षों की ओर से पूर्ण समर्थन है आप जो कहेंगे वही होगा। फलस्वरूप विवाह १९८८ में सम्पन्न हुआ और दोनों सुखी हैं। □□

संस्कृति क्या है?

१४ जनवरी १९९३ गुरुवार के दिन आर्य स्त्री समाज की ओर से आर्य समाज मण्डी बाँस मुरादाबाद के भवन में सायं काल ३ बजे से मकर संक्रान्ति का पर्व सामूहिक रूप से मनाया गया, उसका संचालन श्रीमती सुधा जी मन्त्राणी आर्य स्त्री समाज कर रहीं थीं, उसमें आर्य समाज हरथला रेलवे कालोनी के प्रधान जी मुमुक्षु का प्रवचन हुआ, उसके पश्चात् श्री यशपाल जी ने अपने प्रवचन के मध्य कहा—'संस्कृति' की अनेक विद्वानों ने अपने—अपने ढग से व्याख्या की परन्तु कोई ऐसी व्याख्या सामने नहीं आई जिसे सामान्य व्यक्ति भी समझ सके, स्वामी समर्पणानन्द जी महाराज के सन्दर्भ से श्री यशपाल जी ने कहा—स्वामी जी ने संस्कृति की व्याख्या बहुत सरल रूप से की है वे कहते हैं—प्रकृति, संस्कृति और विकृति की संगति से संस्कृति को सुगमता से समझा जा सकता है, जैसे प्रकृति ने गेहूँ पैदा किया, हमने उसे साफ करके पीस कर उसका उत्तम पदार्थ हलवा बनाया यह संस्कृति है, उसे सेवन करने के पश्चात् जो उसका मल बना वह विकृति है। इस प्रकार हर व्यक्ति बड़ी सुगमता से संस्कृति के भावों को समझ सकता है। इसके पश्चात् मुझे (वीरेन्द्रनाथ) आमन्त्रित किया, मैंने कहा—प्रकृति, संस्कृति और विकृति

इन तीनों का कोई सामन्जस्य नहीं, यह बात अपने गले नहीं उतरती, वह संस्कृति नहीं जिससे विकृति पैदा हो, हाँ! यह तो हो सकता है कि प्राकृतिक पदार्थों को संस्कारित कर सेवन करना उसके पश्चात् विकृति अर्थात् मल का उत्पन्न होना स्वभाविक है, यह संगति तो सही लगती है। संस्कृति से विकृति का कोई सम्बन्ध नहीं। संस्कृति का सीधा सम्बन्ध आत्मा से है और सभ्यता का सम्बन्ध आवरण साज सज्जा से है। एक व्यक्ति कार में बैठा जा रहा है, यह उसकी सभ्यता है, और यदि मार्ग में जाते हुए उसकी कार से अथवा किसी और कारण से किसी बाल, वृद्ध, स्त्री आदि को चोट लग जाये तो ऐसी अवस्था में यदि वह कार रोक कर उसे अपनी कार में बैठाकर उसके स्थान पर अथवा चिकित्सा केन्द्र तक पहुँचा देना, यह उस की संस्कृति है और यदि वह वैसे ही निकला चला जाय तो उसकी वह हीन संस्कृति अर्थात् संस्कृति शून्यता है। यह विचार मेरे अपने हैं किसी और के नहीं। संस्कृति का पंचशील 'यम' है अहिंसा, सत्य, अस्तेय, ब्रह्मचर्य, अपरिग्रह इन का सीधा सम्बन्ध आत्मा से है यह सब व्यवहार दूसरों के साथ करने का है इसलिये इस पंचशील को संस्कृति का सूत्र कहते हैं, इसी प्रकार सभ्यता का पंचशील 'नियम' है शौच, सन्तोप, स्वाध्याय, तप, ईश्वर प्रणिधान, इनका सीधा सम्बन्ध अपने से है। इसलिये इस पंचशील को सभ्यता का सूत्र कहते हैं। इसका व्यवहार अपने आपके साथ करने का है। गुरुदेव दयानन्द सरस्वती जी महाराज सत्यार्थप्रकाश के तीसरे समुल्लास में मनु जी के अनुसार लिखते हैं ''यमों के बिना केवल नियमों का सेवन न करे, किन्तु यम—नियम दोनों का सेवन किया करे। जो यमों का सेवन छोड़ के केवल नियमों का सेवन करता है वह उन्नति को नहीं प्राप्त होता किन्तु अधोगति अर्थात् संसार में गिरा रहता है।''

इसलिये संक्रान्ति पर्व और दैनिक पंच महायज्ञों को नित्य करते रहना चाहिये यह जीवन की प्रगति के लिये अति आवश्यक कर्म हैं इनको कभी नहीं भूलना चाहिये। ▢▢

प्लान्चियट

१३ मई १९९३ गुरुवार के दिन सायंकाल ६ बजे दुकान पर, श्री रमेशचन्द्र जी काण्डपाल, श्री अमरनाथ जी, पं० दीनानाथ जी और श्री सुधीर कुमार जी बैठे थे। काण्डपाल जी ने बताया कि मेरा विवाह करने का कोई विचार नहीं था, एक दिन किसी ने एक बच्चे के अंगूठे के नख पर काली स्याही लगा कर बच्चे को दिखाया, उसने बताया अमुक दिन विवाह हो जायगा और मेरा विवाह उसी दिन हो गया। मुझे बड़ा आश्चर्य लगा कि उसने कैसे बता दिया। इसी प्रकार एक बार डिबिया में लगी चमकदार चपड़ा लाख पर बच्चे को दिखाया उसे भी सब कुछ दीखता था और बता देता था। समझ नहीं आया कि यह क्या बात है। मैंने कहा—मेरे पास प्लान्चियट तिपाई है, मैं उससे बात करता हूँ, प्रश्नों का उत्तर भी मिलता है। अधिकांश व्यक्ति इसे आत्मा का आना ही मानते हैं, परन्तु वास्तविकता कुछ और है। श्री राधेलाल जी जिन्हें वकील साहब के नाम से भी जाना जाता है, वह इस प्लान्चियट के अभ्यासी रहे। एक दिन उनके आवास के पास रहने वाली महिला ने आकर कहा—वकील साहब आज अभी तक वह नहीं आये, पता नहीं क्या बात है, जब उन्हें रुकना होता है तो रात का खाना साथ ले जाते थे, आज तो खाना भी नहीं ले गये और लौट कर आने के लिये कह गये थे, मुझे बहुत चिन्ता लगी है कृपा करके कुछ बताइये? वकील साहब उठे, अन्दर कमरे में गये प्लान्चियट का साधन किया, उत्तर मिला आज मेरा रुकने का विचार नहीं था परन्तु अधिक काम होने के कारण रुक गया हूँ प्रातःकाल आ जाऊँगा। यह उत्तर महिला को बता दिया। अगले दिन जब वह आ गये तो उनसे वकील साहब ने कहा—कि कल रात ८ बजे आप क्या कर रहे थे? उन्होंने बताया कि मैं उस समय रोकड़ मिला रहा था। क्या आपको उस समय कुछ बात अनुभव हुई? नहीं! वकील साहब ने प्लान्चियट पर उनकी आत्मा का आवाहन कर प्रश्न का उत्तर लिया था। इससे स्पष्ट सिद्ध होता

है कि आत्मा आदि कुछ नहीं आती। एक बार आर्य समाज मन्दिर मण्डी बाँस मुरादाबाद के रविवारीय साप्ताहिक सत्संग में प्राकृतिक चिकित्सक डा० जगदीश जी बोल रहे थे, उन दिनों नगर में स्टोप देवना की बहुत चर्चा चल रही थी, यह भी वही कार्य करना है जो प्लान्चियट तिपाई करती है। इसको उन्होंने बिलकुल झूँठ और कोरी बकवास ही कहा, जबके यह बात उचित नहीं, दूसरे झूठ और कोरी बकवास कह कर जिज्ञासु की जिज्ञासा को दबाया नहीं जा सकता, जब तक उसके वास्तविक स्वरूप को न बताया जाय।

इसी के साथ एक और घटना जुड़ती है, एक वैश्य बन्धु जिनके नेत्र बहुत कमजोर थे, बहुत कम दीखता था, परन्तु थे बहुत बड़े ज्ञानी। वह १९५० में जाटो गली मुरादाबाद में वैष्णवों के मन्दिर में आकर टिके थे, आर्थिक स्थिति भी बहुत निर्बल थी दूसरों के आश्रय पर ही भोजन मिलता था। मैं भी उनसे मिलने गया, एक दिन उन्होंने एक बड़ी विचित्र बात बताई, साथ में यह नहीं बताया कि यह घटना कहाँ की है और यह भी नहीं बताते थे कि वे कहाँ के रहने वाले हैं। एक मुसलमान वकील उनके पास आया करते थे एक दिन अनायास उनके मुह से निकल पड़ा कि हम आपको स्वर्ग और नर्क दोनों यहीं बैठे-बैठे दिखा सकते हैं। इस पर वकील साहब की बड़ी जिज्ञासा तीव्र हो उठी और कहा मैं यह दोनों देखना चाहता हूँ। उस पर वैश्य बन्धु जी ने बताया—मैंने उससे कहा देखो जहाँ कहीं जाते हैं तो पहले उसके रास्ते में पड़ने वाले सब स्टेशनों को ध्यान में रखना होता है इसलिये आपको पहले दो दिन में यह याद करना होगा कि स्वर्ग में क्या-क्या होता है वकील साहब ने नोट किया कि स्वर्ग में रंग बिरंगे फूल लगे हैं, फब्बारे छूट रहे हैं, अनेक प्रकार के पक्षी चहचहा रहे हैं, बड़ा आनन्द आ रहा है, लोग मस्ती के साथ घूम रहे हैं। दो दिन के पश्चात् वकील साहब आये और कहा—पाठ याद हो गया, तब वैश्य बन्धु ने एक सफेद कागज पर छोटा सा एक काला बिन्दु बनाया और वकील साहब से कहा—इसमें देखो, क्या दीख रहा है; कुछ नहीं! ध्यान करो देखो कि काला पन दूर हो गया और प्रकाश दीखने लगा है, कुछ देर बाद प्रकाश दीखने लगा। एक

द्वारपाल आया और वह स्वर्ग के विशाल द्वार पर ले गया, द्वार खुला, वकील साहब ने देखा स्वर्ग में सब कुछ दीख रहा है, जैसा पाठ में याद किया था, वैश्य बन्धु ने कहा—देखो तुम्हारे पिता यहाँ नहीं होंगे; हाँ नहीं हैं। मन बड़ा प्रसन्न होने लगा कुछ देर बाद वैश्य बन्धु ने उनका ध्यान हटा दिया और कहा—क्या देखा? वकील साहब ने कहा—कुछ कहा नहीं जा सकता, इतना आनन्द आ रहा था। अब नर्क का भी हमें दर्शन कराइये। अब उसका पाठ याद करो, वहाँ पर कोई पीटा जा रहा है, कोई काटा जा रहा है, किसी को साँप काट रहे हैं, किसी को बिच्छु डंक मार रहे हैं, कोई आग में जलाया जा रहा है, चारो ओर चीख पुकार हो रही है। वकील साहब चले गये दो दिन पश्चात् वह फिर आये और उसी प्रकार से उन्हें नर्क के द्वार पर ले जाकर खड़ा कर दिया। सारा भयंकर द्रश्य देख रहे हैं, वैश्य बन्धु ने कहा—देखो यहाँ पर तुम्हारे पिता होंगे, वकील साहब ने चारो ओर देखा तो एक भयंकर जल्लाद उनके पिता को पकड़े खड़ा है, इधर वैश्य बन्धु कह रहे थे। जो मुसलमान बन कर आयेगा वह जूतों से पीटा जायगा। यह कहकर एक हाथ अपनी जंघा पर मारते, वकील साहब देख रहे थे कि उनके पिता पर जूते पड़ रहे हैं। चेहरा पीला पड़ने लगा, वैश्य बन्धु ने एक दम उनका ध्यान हटाया और कहा—क्या बात हैं? वकील साहब चुप रहे, घर पर चले आये, अगले दिन स्त्री बच्चों सहित आये और हिन्दु बन गये। सबने समझाया, नहीं माने और कहा—मैंने अपनी आँखों से सब कुछ देखा है, मैं मुसलमान बना रहकर नहीं मरना चाहता, नहीं तो मैं भी जूतों से पीटा जाऊँगा।

श्री अमर नाथ जी ने कहा—इसमें वास्तविकता क्या है? मैंने कहा—बच्चे का मन कोमल और शीघ्र ही प्रभावित होने वाला होता है इसी कारण जो हम बोलते हैं वही उसे दीखने लगता है, परन्तु जिस प्रश्न को वह नहीं जानता तो उसका उत्तर उसके मन की पवित्र भावना से उठकर आता है और वह बिलकुल सही होता है, और यदि उस प्रश्न का उत्तर सही या गलत जो भी हो उसके मन में बैठा है तो उत्तर में भी वही आयेगा। इसी प्रकार जब द्रढ़ भावना का व्यक्ति

मुसलिम वकील साहब जैसे बड़े पुरुष पर अपनी भावना का प्रभाव डाल देता है तो उसे भी वही दीखता है जो दिखाने वाला चाहता है। श्री राधेलाल जी वकील साहब की घटना से स्पष्ट है कि प्लान्चियट पर आत्मा नहीं आती परन्तु अपनी ही विद्युत शक्ति जो अपने शरीर में है वही काम करती है, उसके उत्तर का भी स्वरूप पूर्व जैसे उत्तर का ही होता है, अर्थात् जिस प्रश्न का उत्तर मन में है तो वही उत्तर मिलेगा और जिस प्रश्न का उत्तर नहीं है तो वह मन से सही उत्तर ही मिलेगा। जिसे मैंने अनेक बार अनुभव किया, मैंने भी प्लान्चियट तिपाई का अभ्यास किया है और अनेक बार उत्तर संतोषजनक रहे और कई बार गलत भी। मेरी पत्नी के कान का टौप्स गिर गया, तिपाई से उत्तर मिला—मिल जायेगा ऊपर छत पर है, प्रात: काल छत पर सारे में देखा नहीं मिला, रात्रि को फिर तिपाई से प्रश्न किया तो भी वही उत्तर मिला जो कल का था परन्तु टौप्स नहीं मिला, तीसरे दिन भी वही उत्तर मिला, मैंने सोचा हो सकता है कि इसका उत्तर मेरे मन में जो बैठ गया है वही उत्तर मिल रहा है। छत पर गमले रखे थे उनको हटा कर पत्नी ने सफाई करी तो देखा वहीं पर तुलसी के गमले के पास टौप्स पड़ा हुआ मिल गया। इस पर अमरनाथ जी की इच्छा हुई कि मैं भी इसका अभ्यांस करुँ, मैंने उन्हें क्रिया बताई और वह अभ्यास करने लगे। ☐☐

रक्षा तो प्रभु करते हैं

नेहा जो आठवें वर्ष में चल रही है, उसे साइकिल चलाना सिखलाने के लिये प्रात:काल जाता हूँ। आज १८/८/९४ गुरुवार के दिन प्रात: मुख्य डाकघर के सामने से होते हुए न्यायालय की ओर निकल गये, अन्य मार्गों पर प्रात: से ही वाहनों की चहल पहल हो जाती है, वहाँ पर कोई चहल पहल न होने के कारण साइकिल चलाने में सुगमता रहती है। नेहा ३—४ चक्कर लगा कर उसी मार्ग से घर वापिस आने लगी, नेहा आगे साइकिल पर सवार होकर चल रही थी मैं पैदल ही पीछे—पीछे आ रहा था, वह जब कुछ आगे

निकल जाती तो रुक जाती और जब मैं पास पहुँच जाता तो फिर चलाने लगती, इस प्रकार वह मुख्य डॉक घर के सामने से होकर आगे निकली, सामने एक छोटा ट्रक खड़ा था वहाँ रुक गई जब मैं पास पहुँचा तो वह ट्रक से बचा कर आगे जाने लगी तो उसी समय साइकिल का हैन्डिल बायें हाथ को घूम गया, बाँये हाथ को एक गहरा और बड़ा नाला है। नेहा ने हैन्डिल को घुमाना चाहा न घुमा सकी, मैं १५ कदम ही पीछे था, मैंने सोचा यह नाले में न गिर जाये, पकड़ने को लपका, न मालूम क्या हुआ कि मैं सड़कपर ही गिर पड़ा, नेहा नाले के पास तक पहुँच गई, उससे साइकिल नहीं रुक रही थी, और मैं गिर पड़ा, आँखों से देख रहा हूँ, परन्तु मुख से कुछ नहीं निकल रहा, उसी समय दो व्यक्ति ट्रक के पास से निकले आगे वाला चला गया पीछे वाले की निगाह नेहा पर गई उसने झट नेहा की साइकिल को पकड़ कर रोका और नेहा नाले में गिरने से बच गई। मैं गिरने के कारण घबरा गया, नेहा गिरने के भय से डर गई। दुर्घटना होते—होते बच गई। मैं उठा, पैर और कूल्हे में दर्द था जैसे—तैसे नेहा के पास तक गया और साइकिल पकड़ कर घर ले आया।

कितनी भयावह और भयंकर अवस्था बन गई। मैं नेहा की रक्षा के लिये, देख भाल के लिये गया, आवश्यकता के समय पर मैं गिर पड़ा और उसकी रक्षा न कर सका, मेरी असमर्थता को देखते हुये उस सहस्त्रों हाथ वाले अर्न्तयामी प्रभु ने दूसरे के हृदय को प्रेरित कर नेहा की रक्षा की। नेहा को बचाते हुये उस व्यक्ति ने कहा मारने वाले से बचाने वाला बहुत बड़ा है। प्रभु जी यदि एक क्षण की भी देर हो जाती तो बहुत बड़ा अनर्थ हो जाता। ☐☐

तीन कामनायें

लगभग बीस वर्ष पूर्व प्रोफेसर सेवाराम जी ने एक घड़ी मुझे दिखाई, जो हौलैण्ड से आई थी। उसकी विशेषता यह थी कि उसमें अंक हिन्दी के थे और चारो ओर गायत्री मन्त्र लिखा हुआ था। मेरे मन में उसी समय यह प्रश्न उठा कि हिन्दी के अंक और गायत्री

मन्त्र से अलंकृत घड़ी हौलैण्ड में बन सकती है, भारत में क्यों नहीं? मैं इस पर लगा रहा और तीन वर्ष के परिश्रम के पश्चात् मैंने उक्त प्रकार की घड़ी तैयार करली और अब तक इस प्रकार की ७०—८० घड़ियाँ घरों की शोभा बढ़ा रही हैं।

मेरा विचार गया दीपावली के अवसर पर लक्ष्मी गणेश के सिक्कों पर। उसके लिये भी प्रयत्न किया। ऋषि दयानन्द सरस्वती जी महाराज का चित्र उसके ऊपर उनका प्रिय मन्त्र। (विश्वानिदेव) और चारो ओर गायत्री मन्त्र इस रूप में सिक्कों को तैयार कराकर आर्य समाज मण्डी बाँस मुरादाबाद के वार्षिकोत्सव पर व्यक्तियों को सम्मानित करने में तथा बच्चों की प्रतियोगिताओं में पदक रूप में देने में इनका प्रयोग किया गया।

एक और इच्छा मन में उठी कि जिस प्रकार राष्ट्रीय पुरुष मर्यादा पुरुषोत्तम श्री रामचन्द्र जी के इतिहास रामचरित मानस का अखण्ड पाठ होता है, उसी प्रकार का हमारे पास भी कोई ग्रन्थ होना चाहिये जो प्रभु चिन्तन से ओत:प्रोत हो, इस भावना से मैंने विचार किया कि यदि ऋषिवर दयानन्द जी महाराज की १०८ मन्त्रों के ग्रन्थ आर्य्याभिविनय का काव्यानुवाद हो जाय तो अति उत्तम रहेगा। मेरे घर पर वर्ष में एक वार ५ दिन के लिये स्वसाधनों से यज्ञ का कार्यक्रम रहता है उसमें पूज्यपाद श्री स्वामी जीवनानन्द सरस्वती जी महाराज आया करते हैं। मैंने अपना विचार उनके सामने रखा और किसी विद्वान् कवि को बताने के लिये कहा—उन्होंने विचार कर सूचित करने को कहा। कुछ समय के पश्चात् मैंने पूज्य स्वामी जी को पत्र लिखा और उत्तर में उन्होंने श्री प्रकाशवीर व्याकुल कवि का सुझाव दिया और कहा वह इस कार्य के लिये एक सुपात्र कवि हैं आप उनको पत्र लिखें। मैंने श्री व्याकुल जी को पत्र लिखा और उन्होंने इसे स्वीकार कर रचना तैयार करके मेरे पास भेज दी। उसे छपवाने की व्यवस्था करी, छपने लगी, और तैयार भी हो गई।

मन में यह इच्छा जागृत हुई कि इस उपयोगी ग्रन्थ को जन—जन के हाथों में नि:शुल्क ही पहुँचाया जाये। मेरे पास स्वयम् का इतना साधन नहीं कि मैं उसे नि:शुल्क प्रकाशित कर सकूँ। मैंने

प्रभु से प्रार्थना की, कि किसी सुपात्र को बताओ जो इस कार्य को पूर्ण करा सके। एक दिन प्रभु जी ने मन में प्रेरणा की कि तुम श्री राधेश्याम जी रस्तौगी, श्याम ज्वैलर्स से सम्पर्क करो। मैं उनकी दुकान पर गया, वह ग्राहकों में घिरे हुऐ थे, अगले दिन भी नहीं मिले तो मैंने प्रभु जी से प्रार्थना की और मन में उत्तर मिला आज जाओ! कार्य बनेगा, मैं उसी समय गया और श्री राधेश्याम जी दुकान पर मिले, पुस्तक सामने रखी, मैंने कहा—इस पुस्तक में आपका चित्र लगना है, आप अपना एक फोटो ब्लाक बनवाने के लिये दे दीजिये, श्री राधेश्याम जी ने कहा—मैं इस योग्य कहाँ, इसमें तो किसी अच्छे योग्य व्यक्ति का चित्र लगना चाहिये। मैंने कहा—आपकी योग्यता और क्षमता को मैं जानता हूँ, तभी मैं प्रभु आज्ञा के अनुसार आपके पास आया हूँ। श्याम जी ने कहा—आपने मेरा मूल्याँकन सही नहीं किया। मैंने कहा—हीरे का मोल दूसरा ही जानता है स्वयम् हीरा नहीं! मैंने कहा—जब मेरे पहली बार पुत्र का जन्म हुआ था तो सास जी ने कहा इसके लिये एक अंगूठी लाल नग की बनवा लो, मैंने अंगूठी बनवाई और नग लगाने के लिये मण्डी बाँस में आर्य समाज के सामने एक दुकान थी श्री राजकुमार मुसद्दीलाल की मैंने मुसद्दीलाल को नग लगाने के लिये अंगूठी दी उन्होंने पुराने नगों में से एक लाल रंग का नग निकाल कर लगाया वह जमा नहीं, उसे फिट कराने के लिये एक दूसरे व्यक्ति के पास ले गये, जब उसने नग रखा तो वह नीचे गिर गया, उसकी चमक देखकर उसने कहा—क्या यह नग ग्राहक का है? मुसद्दीलाल ने कहा नहीं, मैंने निकाला है, उसने कहा—यह तो 'लाल—चुन्नी' है इसे क्यों लगा रहे हो? क्या मुसद्दीलाल की डिबया में रखा 'लाल' अपनी कीमत बता रहा था? नहीं उसे दूसरे ने ही पहचान कर समझा कि यह 'लाल चुन्नी' है। इसी प्रकार आपका मूल्य हमें मालूम है।

दो दिन पश्चात् अपना चित्र दिया ब्लाक बना छपकर पुस्तक में अंकित हो गया। इस पुस्तक का लोकार्पण २६ जनवरी १९९५ को आर्य समाज स्टेशन रोड के भवन में श्री राधेश्याम जी की अध्यक्षता में बड़े उत्साह और उल्लास के साथ सम्पन्न हुआ

सभी ने इस कार्य को पूर्ण कराने के लिए, श्री राधेश्याम जी को बधाई एवं शुभकामनायें दीं।

इस प्रकार मेरी तीनों कामनायें प्रभु कृपा से पूर्ण हुई। □□

आकस्मिक घटना

लगभग १५ दिन पूर्व मैंने रात्रि को सोते समय एक स्वप्न देखा। स्वप्न था—मैं राजोगली स्थित मकान में सो कर उठा और नीचे उतर कर आया तो मैंने देखा मकान का मुख्य द्वार खुला पड़ा है। मैं घबरा गया और मेरे मुख से निकलने लगा "सब कुछ नष्ट हो गया, सब कुछ नष्ट हो गया।" उसी समय आँख खुली, मैंने उठकर घड़ी में देखा तो उस समय १ बजा था। मन में घबराहट और बेचैनी बनी हुई थी, मैंने गायत्री का जाप किया और प्रभु से प्रार्थना की, 'प्रभु जी मेरे ऊपर कोई विपत्ति आने वाली है, उस विपत्ति से आप ही मेरी रक्षा करो, प्रभु जी मेरे ऊपर कोई विपत्ति न आये।'

रविवार ३० जुलाई १९९५ की रात को मैं दुकान बन्द करके घर गया, सबने भोजन किया, तीजों के कारण से पुत्री इन्दिरा और उसके तीनों बच्चे घर पर ही थे, रात्रि को दुकान बन्द करके श्री वीरकान्त जी भी घर पर आ गये थे १०, ४५ पर वे अपने घर पर जाने लगे, मैंने नेहा से कहा कुण्डी लगा लेना, वह भूल गई, कुछ देर पश्चात् मैं उठा तो देखा मुख्य द्वार की कुण्डी खुली है। मैंने कहा कुण्डी नहीं लगाई? नेहा चुप हो गई। उसके दस मिनट के पश्चात् ही मेरी दुकान के पड़ोसी विपिन शर्मा ने द्वार खटखटाया, मैंने कहा कौन? बाहर से आवाज आई विपिन, उसी समय मामा जी कहता हुआ पुष्पांक भी आ गया, मैंने द्वारा खोला तो विपिन ने कहा कि आज दुकान के ताले क्यों खुले हैं? मैं सन्न रह गया, उसी समय झोले में देखा तो उसमें चाबियाँ थीं, मैंने चाबियाँ निकाल कर विपिन को दीं और कहा आप ताले लगा कर चाबियाँ घर ले जाना मैं प्रातः जब दुकान पर आऊँगा तो ले लूँगा। उसी समय नेहा ने कहा लो, मेरे ऊपर डाँट लगा रहे थे, अपने आप दुकान के ताले खुले छोड़ आये?

रात्रि को सोते समय गायत्री का जाप किया और प्रभु जी का धन्यवाद किया कि आपने १५ दिन पूर्व विपत्ति आने का आभास कराया और इस विपत्ति से विपिन शर्मा को भेज कर मेरी रक्षा की। आप कितने दयालु हैं, आपके रक्षा करने के कितने साधन हैं, इसे कोई नहीं जान सकता।

प्रात: काल दुकान पर आया और विचार किया कि ऐसा क्यों हुआ। ध्यान आया चाबियाँ उठाकर शटर बन्द करके विपिन की दुकान से दूध की बाल्टी लेकर चला आया, ताले लगाना भूल गया। दुकान बन्द करते समय विपिन के लड़के ने देखा दुकान के ताले खुले हैं। वह स्कूटर से मेरे घर पर आया—मेरा घर अब गंज में है उसने यह घर देखा नहीं था, रात हो चुकी थी गली में भी कोई नहीं था जो किसी से मालूम करना, इस कारण—उसे घर न मिला, वह लौटकर अपने घर गया और विपिन से कहा, तो विपिन तत्काल मेरे घर पर आये। कितना उपकार है विपिन शर्मा का मेरे ऊपर जो अपने घर पर आराम से खाट पर लेटे थे। उठकर आये और मेरी क्षति होने से बचा ली। □□

व्यंग्यात्मक प्रश्न

आर्य समाज मण्डी बाँस मुरादाबाद के वार्षिकोत्सव पर समाज के सदस्य नगर में दुकान—दुकान पर जाकर चन्दा करते थे, उनके साथ, मैं भी जाया करता था। एक दिन बर्तन बाजार में चन्दा करते हुये 'हरकरन दास रामरतन' की दुकान पर गये, उस समय वहाँ पर बैठे थे भगत जी प्रहलाद नारायण खन्ना, उनसे मैंने आर्य समाज के वार्षिकोत्सव के लिये चन्दा देने को कहा। उन्होंने उत्तर दिया आप हमसे ही चन्दा लेकर मन्च से हमें ही गालियाँ देते हैं। मैंने कहा—हम किसी को गाली नहीं देते। इस पर भगत जी बोले आप सनातन धर्म की आलोचना करते हैं। मैंने कहा—हम किसी की आलोचना नहीं करते परन्तु सबको सत्य बात से अवगत कराते हैं। इस पर तिलमिला कर चन्दा देने से मना कर दिया।

जीलाल स्ट्रीट पर स्थित जैन मन्दिर में श्री ब्रजमोहन जी के सहयोग से १९७० से १९८८ तक मैं (वीरेन्द्र नाथ) और श्री रमेश चन्द्र जी काण्डपाल (पी.एच.डी.योग) मंगलवार के दिन सायंकाल को योग का कार्यक्रम कराया करते थे, उसमें आसन, प्राणायाम, प्रवचन, शंका समाधान और अन्त में ध्यान का कार्यक्रम कराया जाता था। एक दिन काण्डपाल जी ने भगत जी प्रहलाद नारायण खन्ना से कहा—कि आप भी योग के कार्यक्रम में आया करें। इस पर भगत जी ने उत्तर दिया—शास्त्रों में लिखा है कि यदि पागल हाथी सामने आ जाय और बचने का कोई साधन न हो और यदि वहाँ पर जैन मन्दिर हो तो ऐसी अवस्था में प्राण रक्षा के लिये जैन मन्दिर में शरण न ले भले ही पागल हाथी के द्वारा प्राणान्त क्यों न हो जाय, तो मैं जैन मन्दिर में कैसे आ सकता हूँ।

एक दिन बद्री बाबू की दुकान पर हिन्द क्लाथ वाले लल्लू जी और भगत जी प्रहलाद नारायण खन्ना बैठे थे मैं उधर को निकला जा रहा था, बद्री बाबू ने मुझे देखकर आवाज दी, मैं उनकी दुकान पर चला गया, उस समय देश की राजनीति पर चर्चा हो रही थी। उसी बीच व्यंग्य करते हुए भगत जी प्रहलाद नारायण खन्ना मुझसे कहने लगे—महाशय जी! क्या आप यह बता सकते हैं कि अब तक कितने आर्य समाजियों की पत्नियों ने देवर से गर्भ धारण किया है? मेरा ध्यान विवाह संस्कार में (देवरीकामा) पर गया मैंने सोचा कि भगत जी का व्यंग्य यहाँ पर है। मैंने उत्तर दिया—भगत जी! किसी आर्य समाजी की पत्नी ने देवर से गर्भ धारण कराया या न कराया परन्तु आपने रखैल के अवश्य गर्भ धारण कर दिया। कहकर मैं चला आया। रात्रि को जब दुकान बन्द करके घर को जा रहा था तो बद्री बाबू और लल्लू जी भी दुकान बन्द करके जा रहे थे, उसी समय बद्री बाबू बोले वीरेन्द्र जी! इतनी कठोर बात नहीं कहनी चाहिये थी। इस पर मैं कुछ कहता उससे पहले ही लल्लू जी बोले, क्यों नहीं कहनी चाहिये थी? क्यों ऐसा बेहूदा प्रश्न किया? जैसा प्रश्न था वैसा ही उत्तर दिया गया। वीरेन्द्र जी ने सही उत्तर दिया। □□

स्वामी विज्ञानानन्द

श्री राम प्रसाद जी बसों वालों ने अपने गृह पर सामवेद पारायण यज्ञ का आयोजन रखा था। उसमें स्वामी विज्ञानानन्दजी आये थे, उन्होंने ही यज्ञ कराया था। उस कार्यक्रम में मैं भी गया था। वहाँ पर मैंने 'कामनाओं की पूर्ती कैसे' पुस्तक सब को दी थी, उसकी एक प्रति स्वामी विज्ञानानन्द जी के हाथ में भी पहुँची। उसके पश्चात् प्रो० सेवाराम जी ने आर्य समाज हरथला रेलवे कालोनी में पूज्य स्वामी विज्ञानानन्द जी से चतुर्वेद पारायण यज्ञ कराया था। उसी बीच स्वामी जी ने अपने एक ब्रह्मचारी को मेरे पास भेजा और कहलाया कि स्वामी जी आपसे मिलना चाहते हैं। मैं अगले ही दिन आर्य समाज हरथला रेलवे कालोनी गया। स्वामी जी यज्ञ करा रहे थे, यज्ञ के पश्चात् स्वामी जी महाराज ने कुछ कहना आरम्भ किया, वह बोले, योग में दो प्रकार की समाधियों की चर्चा है। मैं ध्यान से सुनने लगा, सोचा स्वामी जी का प्रवचन योग के विषय पर होने जा रहा है। स्वामी जी ने कहा—एक संप्रज्ञात समाधि, दूसरी असंप्रज्ञात समाधि इसमें एक से इह लोक की सिद्धि होती है, और दूसरे से परलोक की। इन दोनों ही प्रकार की साधनाओं में रत, आपके ही नगर वासी साधक श्री वीरेन्द्र जी यहाँ उपस्थित हैं।

मैं उनसे प्रार्थना करता हूँ कि वे मन्च पर आकर आज की सभा का शुभारम्भ अपने प्रवन्चन से करें।

मैं चकित रह गया, स्तब्ध रह गया। यह कितने पारखी हैं, विलक्षण हैं, विज्ञान युक्त हैं, योगिक समाधि से युक्त उपमा देकर मुझ जैसे साधारण व्यक्ति को स्वामी जी ने इतना अपनत्व और सम्मान दिया। यद्यपि यह मेरी व स्वामी विज्ञानानन्द जी की पहली भेंट थी। स्वामी जी की स्नेहपूर्ण सरलता से मैं बहुत प्रभावित हुआ।

मैं मन्च पर गया सबकी दृष्टि मेरे ऊपर लगी मैंने कुछ कहा लगभग ३० मिनट बोला। समाप्ति पर सबने कहा आप कहाँ रहते हैं?

पूज्य स्वामी जी महाराज ने प्रसन्न होकर अपने हस्ताक्षरों से युक्त एक पुस्तक अध्यात्म—सुधा और एक पुस्तक ब्रह्म—विज्ञान भेंट में दी।□□

अहम मेरा चूर-चूर हो गया

मैं बचपन से ही गायत्री जाप, प्राणायाम, आसन, व्यायाम, लाठी, तलवार, बल्लम आदि शारीरिक और आत्मिक स्वस्थ्यता के लिये करता ही रहता हूँ। श्री रमेश चन्द्र काण्डपाल जी मुझसे एक वर्ष बड़े थे। इनका परिचय मुझसे रघुनन्दन शर्मा, 'शर्मा फोटोग्राफर' की दुकान से हुआ था। हम दोनों ने मिलकर जीलाल स्ट्रीट पर स्थित जैन मन्दिर में श्री ब्रजमोहन जी के आग्रह पर प्रत्येक मंगलवार को सायंकाल के समय आसन प्राणायाम और प्रवचन का कार्यक्रम निरन्तर १८ वर्ष तक चलाते रहे। उसमें नगर के अनेक व्यक्तियों ने आकर अपना स्वास्थ्य लाभ प्राप्त किया। उसी में ही श्री भगवान दत्त तिवारी जी भी आते थे, उनसे मेरा अच्छा परिचय था।

मैं अपने स्वभाव के अनुसार अपनी नई पुस्तक सब को देता ही रहता था। एक सज्जन अमरोहा गेट के बाजार में अथवा कभी कभी दुकान के सामने से जाते हुए मिल जाया करते थे, तो मैं उन्हें नई प्रकाशित पुस्तक दे दिया करता था। जब मेरा अभिनन्दन का कार्यक्रम बना तो उस समय सबको एक छपा पत्रक भेजा गया था।

एक दिन सायंकाल के समय मेरी दुकान पर ज्योति गुरु के पुत्र श्रीओम मिश्रा बैठे थे, बराबर वाली बिजली की दुकान पर एक सज्जन कुछ सामान लेने के लिये चढ़े तो मैंने श्रीओम मिश्रा से कहा—यह कौन सज्जन हैं? इस पर मिश्रा जी ने आश्चर्य के साथ कहा—क्या आप इन्हें नहीं जानते? मैंने कहा नहीं! इसी बीच वह सज्जन मेरी दुकान के पास आये और उसी समय श्री ओममिश्रा ने कहा—यह हैं रघुनन्दन इन्टर कालेज के प्रधानाचार्य श्री कैलाश दत्त तिवारी। मैंने मिश्रा जी से कहा—एक पत्रक पर आप इनका नाम लिख कर इनको दें। और मैंने श्री कैलाशदत्त तिवारी जी से कहा—आप एक अपना चित्र और लेख देने की कृपा करें।

बहुत समय के पश्चात् मुझे यह जानकारी मिली कि श्री कैलाश दत्त तिवारी जी श्री भगवान दत्त तिवारी जी के ही सुयोग्य

पुत्र हैं। और वह अपने लिये चर्खे से सूत काता करते थे इसी प्रकार जयनारायण खन्ना जी भी अपने लिये सूत चर्खे से काता करते हैं।

पुस्तक लोकार्पण के अवसर पर श्री कैलाश दत्त तिवारी प्रधानाचार्य जी ने उद्‌बोधन करते हुये कहा—

प्राय: प्रतिदिन नगर के राजमार्ग पर दूर से देखते ही हाथ जोड़ कर नमस्कार करने वाले श्री वीरेन्द्र जी विनम्रता की साक्षात् प्रतिमूर्ति हैं। जाड़ों में विद्यालय जाते समय एवं गर्मियों में विद्यालय से आते समय वीरेन्द्र जी से साक्षात्कार होता था। जब कभी उनकी दुकान के सामने से निकला तो उनकी नवीनतम कृति प्रसाद रूप में प्राप्त हो जाती है, अत्याधिक विनम्रता से प्रति भेंट करते हैं। एक दिन मैंने पूछा—कि इस लेखन एवं प्रकाशन में होने वाला व्यय कैसे वहन करते हैं, तो केवल इतना ही कहा—सहयोग से सब हो जाता है। उपस्थित एक सज्जन के माध्यम से मेरा परिचय पूछा, तो उस समय मस्तक और अधिक श्रद्धा से नत हुआ। अहम् मेरा—चूर—चूर हो गया, तब तक मैं इस भ्रम में था कि अपनी कृति को भेंट देने के पीछे कोई स्वार्थ अवश्य होगा। लेकिन इसका प्रश्न ही क्या, जबके श्री वीरेन्द्र गुप्त: जी को मेरे पद और नाम के विषय में भी कोई ज्ञान नहीं था।

गुप्त: जी द्वारा रचित पुस्तकें परिवार के हर सदस्य के लिये अत्याधिक उपयोगी सहज एवं सुगम्य हैं। प्रात: स्मरणीय श्री स्वामी दयानन्द सरस्वती जी महाराज के सपनों को साकार करने का जैसे गुप्त: जी ने बीड़ा उठा लिया है। आपकी लेखनी आर्य परिवार जनों को सदैव आलोकित करती रहेगी। मेरा ऐसा मानना है। ❑❑

शंका समाधान

१९९४ ई० में आर्य समाज मण्डी बाँस मुरादाबाद के वार्षिकोत्सव को सफल बनाने के लिये साप्ताहिक सत्संग में मन्त्री जी ने निवेदन किया और अधिकाधिक धन देने के लिये प्रार्थना की, उसी समय श्री बलवीर सिंह जी ने अपने नाम से २१/— की रसीद

काटने को कहा, इस पर मन्त्री जी ने कहा—महंगाई को देखते हुए यह बहुत कम हैं। इस पर श्री बलवीर सिंह जी ने कहा—आप मेरे नाम से २१/— की रसीद काटें और एक रसीद मेरे पुत्र श्री ब्रजेन्द्र सिंह के नाम से ५१/— की काट दें। उसी समय एक सज्जन ने कहा—एक रूपया ऊपर लगा कर देने की प्रथा पौराणिक है। इस पर कुछ चर्चा भी होने लगी परन्तु समाधान कुछ नहीं निकला। श्री बलवीर सिंह जी ने इसकी चर्चा मेरी दुकान पर आकर मुझसे करी और कहा—मैं इस विषय पर कई से चर्चा कर चुका हूँ परन्तु मेरी सन्तुष्टि नहीं हुई। उन्होंने कहा—आप इस विषय पर कुछ प्रकाश डालिये।

मैंने कहा—हमारी संस्कृति संसार की और संस्कृतियों से भिन्न है। संसार की सभी संस्कृतियाँ यह मानती हैं कि ९ से आगे अंक नहीं। वह जो भी अनुबन्ध करते हैं वह ९ अथवा ९९ वर्ष के ही होते हैं। वे अन्तिम अंक को ही अन्त मानते हैं। हमारी संस्कृति विकासोन्मुख है वह सदैव विकास की ओर जाती है, और विकास का मार्ग खुला रखती है।

वास्तव में अंक ९ ही हैं इसके आगे १ पर शून्य लगाकर पूर्णता को पहुँचा देते हैं। हम अपनी संस्कृति के अनुसार ९९ नहीं और आगे एक शून्य लगाकर १०० भी नहीं, हम मानते हैं १०१ अर्थात् १ अंक आगे लगा कर हम चाहते हैं कि हमारे विकास का मार्ग आगे खुला रहे। इस प्रकार अंक के आगे १ का होना पौराणिक पद्धति नहीं, यह तो विकासोनमुख वैदिक संस्कृति का ही प्रतीक है।

श्री बलवीर सिंह जी ने प्रसन्न होकर कहा—आपके इस प्रकार समाधान करने से मेरी सारी शंका दूर हो गई। □□

साहित्य का प्रभाव होता है

'जन्मदिवस' पुस्तक छपकर तैयार हो गई। इसके विमोचन का कार्यक्रम आर्य स्त्री समाज मण्डी बाँस मुरादाबाद ने अपने शनिवार के साप्ताहिक सत्संग में २४ फरवरी १९९६ को रखा। उससे एक दिन पूर्व ही हंसराज चौपड़ा और महावीर सिंह मुमुक्षु ने महिलाओं को धमकाया और कहा यह पुस्तक वीरेन्द्र नाथ की है, इसका विमोचन आर्य समाज में नहीं होगा। महिलाओं के सामने संकट उपस्थित हो गया और वह मेरे पास आई, मैंने व्यवस्था की और आर्य समाज भवन के सामने ही माथुर वैश्य भवन में कार्यक्रम का आयोजन अत्यन्त सफलता के साथ सम्पन्न हो गया। श्री राम किशन जी मुनीम के सुपुत्र श्री राजेन्द्र कुमार जी ने इस अवसर पर अपने विचार प्रकट करते हुये कहा—हमें यह गर्व है कि माथुर वैश्य समाज ने संसार को एक प्रखर और कुशाग्र बुद्धि लेखक के रूप में श्री वीरेन्द्र गुप्त: जी को दिया है।

एक पत्र फरीदाबाद से श्री राजेन्द्रप्रसाद जी आर्य का मिला, उन्होंने 'करवा चौथ' के ऊपर एक पुस्तक तैयार करने के लिये आग्रह किया। पुस्तक लिखकर तैयार हो गई। श्री राजेन्द्र कुमार जी की प्रेरणा से 'करवा चौथ पति पूजा पर्व' पुस्तक श्री लाला केदार नाथ जी के दानी सुपुत्र श्री कामेश्वर नाथ जी के सात्विक धन से १९९६ में प्रकाशित की गई। इसका दूसरा संस्करण श्री जयप्रकाश जी सर्राफ के द्वारा २००१ में प्रकाशित हुआ। इस पुस्तक का सर्वत्र स्वागत हुआ और महिला वर्ग ने इसे ध्यान पूर्वक पढ़ा और व्यवहार में आचरण भी किया।

पुस्तक में एक स्थान पर लिखा ''शरद पूर्णिमा के पश्चात् कार्तिक कृष्ण चतुर्थी के दिन प्रात:काल उठकर सर्व प्रथम पतिदेव के चरण स्पर्श करके हाथ जोड़कर अभिवादन नमस्ते करनी चाहिये।''

२९ अक्टूबर मंगलवार के दिन करवा चौथ थी। मैं धर्म पत्नी सहित नित्य प्रात: काल यज्ञ करता हूँ। इस दिन मैंने देखा जब यज्ञ करके मैं उठा तो मेरी धर्म पत्नी श्रीमती राजेश्वरी देवी ने मेरे चरण स्पर्श किये। जीवन में पहली बार इस कार्य को देख कर मन में अति प्रसन्नता हुई।

'करवा चौथ' पुस्तक की एक प्रति किसी ने अपने पास के परिवार में दी। वहाँ उसने अपना चमत्कार दिखाया। उन्होंने बताया उस परिवार की एक विवाहित पुत्री अपने पति से लड़कर घर पर चली आई थी। जब उसने 'करवा चौथ' पुस्तक में पति—पत्नी के कर्तव्य और आचरण को पढ़ा तो वह चकित हो उठी, और अगले ही दिन पति के घर चली गई। इस प्रकार इस 'करवा चौथ' पुस्तक ने एक उजड़ते परिवार को फिर से बसा दिया। ☐☐

नारायण

साहू नरोत्तम नारायण जी हड्डी मील वाले नगर की प्रसिद्ध विभूति थे, उनका किस्तों का भी काम था। मेरे पास से बहियाँ जाया करती थीं। यह सब कार्य अब श्री नरोत्तम नारायण जी के सुयोग्य युवराज श्री राजेन्द्र नारायण जी देख रहे हैं। श्री राजेन्द्र नारायण जी साईं भक्त हैं, मुरादाबाद में साईं मन्दिर बना है, वे भी इसके प्रबन्धक हैं, साईं मन्दिर के नीचे एक स्थान पर मस्जिद भी बनी है। कहा जाता है कि हर जगह हर स्थान पर जहाँ भी कहीं साईं मन्दिर है वहाँ पर मन्दिर के नीचे मस्जिद भी होती है। यह बड़े आश्चर्य की बात है कि १९४७ में विभाजन के पश्चात् आश्रय हीन २ मुसलिम बच्चे पंजाब से आये, जो भारतवर्ष में बहुत ही ऊँचे स्थान तक पहुँचे। एक हैं साईं बाबा, जो आज तक हिन्दू न बने, परन्तु उनको हिन्दू ही पूजते हैं मुसलमान उनको कोई मान्यता नहीं देते। भविष्य में यह भय दीख रहा है कि भारतवर्ष में हर साईं मन्दिर अयोध्या के राममन्दिर के स्थान पर बाबरी मस्जिद का रूप न ले ले। दूसरे हैं गुजरात में स्थित श्री स्वामी सम्पति जी महाराज, जो स्वामी

ओमानन्द जी के शिष्य हैं, और इस समय समस्त भारत में वेदान्त, मीमांसा और योग दर्शन के प्रकाण्ड पंडित हैं। आर्य जगत में इनका स्थान सर्वोपरि है।

श्री राजेन्द्र नारायण जी से बहियों के विषय में मिलने गया था, वहीं पर कुछ अन्य चर्चा होने लगी। श्री राजेन्द्र नारायण जी ने कहा—सब जगह कर्म को ही प्रधान माना है, गीता भी कर्म प्रधान ग्रन्थ है। मैंने कहा—मथुरा और वृन्दावन के बीच में बिरला जी ने एक गीता भवन बनबाया था, उसका उद्घाटन करते समय उत्तर प्रदेश के मुख्य मन्त्री डा. सम्पूर्णानन्द जी ने कहा—यदि गीता की रक्षा करना चाहते हो तो वेद की रक्षा करो। वेद के रहते हुये अनेक गीताओं का निर्माण हो सकता है। गीता केवल यर्जुवेद के एक मन्त्र की व्याख्या मात्र ही है।

कुर्वन्ने वेह कर्माणि जिजीविषेच्छतं समा:।
एवं त्वयि नान्यथेतोऽस्ति न कर्म लिप्यते नरे।।

यजुर्वेद ४०/२

इस लोक में अपने कर्त्तव्य कर्म करते हुए ही सौ वर्ष जीने की इच्छा करना चाहिये। यही तेरे लिये एक मार्ग है, इससे दूसरा कोई मार्ग नहीं। कर्त्तव्य कर्म करने से मनुष्य में दोष नहीं होता। इस जगत में परम पुरुषार्थ करते हुये ही मनुष्य को दीर्घ जीवन प्राप्त करने की इच्छा करनी चाहिये। पुरुषार्थ मय जीवन व्यतीत करना ही मनुष्य का परम धर्म है। कर्त्तव्य कर्म करने से ही सब दोष दूर हो जाते हैं। और मनुष्य निर्दोष होकर उत्तमता को प्राप्त करता है। भर्तहरि ने भी कहा है—

हम देवताओं को नमन करें। किन्तु वह भी कठोर विधि के हाथ में हैं। तो विधि की वन्दना करनी चाहिये, किन्तु विधि भी हमारे नियत कर्म के अनुसार फल देती है। यदि फल कर्मों के अधीन है तो फिर क्या देवताओं से क्या विधि से प्रयोजन, इसलिये हम इन कर्मों को ही नमन करते हैं जिन पर विधि का कोई प्रभाव नहीं है, अर्थात् कर्म स्वतन्त्र है। इसी प्रकार रामचरित मानस में भी आता है।

'कर्म प्रधान विश्व रचिराखा' इस प्रकार सर्वत्र कर्म ही प्रधान है।

अभिवादन शीलस्य नित्य वृद्धोपसेविना।
चत्वारि तस्य वर्धन्ते आर्युविद्या यशोबलम्।।

मनु

संसार में कोई भी ऐसा कर्म नहीं, जिसके करने से बिना माँगे चार चीजें 'आयु, विद्या, यश और बल' प्राप्त हो सके। केवल एक नित्य वृद्ध माता—पिता की सेवा और उनको नित्य अभिवादन करने से मिलती हैं।

जब हम निराकार सर्वशक्तिमान परमेश्वर को त्याग कर केवल मानव अथवा मानव प्रतिमा पाषाण जड़ पूजा में ही आस्था और विश्वास रखते हैं, तो हम अपने माता—पिता को क्यों नहीं पूजते? जिन्होंने हमें तन दिया, वैभव दिया, और अपना सिंहासन भी दिया। नरों में जो उत्तम है, ख्यातिवान है, परोपकारी है, सौम्य है, शान्त है वह नरोत्तम है और जब उनके शीश पर नारायण का वरद हस्त रखा है, तो उस 'नरोत्तम नारायण' जी की उपेक्षा क्यों? क्या उनका मन्दिर नहीं बनवाया जा सकता?

अपने वैभव को छोड़ के,
औरन पग पूजन जाय।। क्यों?

□□

परिवर्तन

श्री सुरेन्द्र कुमार जी व्यापारी होते हुये भी एक अच्छे कवि भी हैं, आपका उपनाम 'सुकुमार' है। मैं अपने स्वभाव के अनुसार जिस प्रकार सबको अपना साहित्य अवलोकनार्थ देता हूँ उसी प्रकार सुकुमार जी को भी देता था। मेरी हर पुस्तक में वेद की चर्चा अवश्य होती है। वेद ईश्वरीय ज्ञान है, जो आदि सृष्टि मे ही मानव को प्राप्त हुआ है। मानव जीवन की प्रत्येक समस्या, शंका, व्यवहार, आदि सबका समाधान वेद से ही सही रूप में होता है। इसी कारण मैं वेद को ही सर्वोपरि मानता हूँ।

एक दिन सुकुमार जी ने मुझसे एक प्रश्न किया। आप वेद की ही बात क्यों करते हैं, वेद तो बहुत बाद के हैं, उनसे पहले अजन्ता—अलोरा की गुफायें हैं?

मैंने कहा—क्या आप बता सकते हैं कि अजन्ता—अलोरा की गुफायें महाभारत के बाद की हैं या पहली?

सुकुमार जी—महाभारत के बाद की हैं।

मैंने कहा—और वेद?

सुकुमार जी—अभी के बताये जाते हैं।

मैंने कहा—वेद हैं आदि सृष्टि से। आप अपनी इस भ्रन्ति का सुधार कर लीजिये।

सुकुमार जी—क्या यह सत्य है?

मैंने कहा—बिलकुल सत्य है।

इसके पश्चात् सुकुमार जी में कुछ परिवर्तन आया और शनैः—शनैः बात को समझते रहे।

कुछ काल के पश्चात् विचारों में और परिवर्तन आया। मेंर अभिनन्दन ग्रन्थ के लिये एक कविता और एक लेख भेजा जो मुझे भेंट किये गये अभिनन्दन ग्रन्थ में प्रकाशित हुये। उसके पश्चात् 'जन्म दिवस' पुस्तक के वेद मन्त्रों के अर्थों का काव्यानुवाद भी श्री सुकुमार जी ने ही किया था।

२७ अक्टूबर १९९६ को 'करवा चौथ पति पूजा पर्व' पुस्तक के लोकार्पण समारोह के कार्यक्रम में भी उपस्थित होकर सब के प्रवचन सुने। ३० अक्टूबर १९९६ को श्री सुकुमार जी मेरी दुकान पर आये और कहने लगे—मैंने पढ़ा है कि बिना गुरु के साधना अधूरी है।

मैंने कहा—ऐसी कोई बात नहीं। सब का गुरु परमात्मा ही है।

सुकुमार जी—यह ठीक है, परन्तु मैं आपको गुरु बनाना चाहता हूँ।

मैंने कहा—मैं! इस योग्य कहाँ?

सुकुमार जी—नहीं! मैंने आपको अच्छी प्रकार समझ लिया है, आपको यह कार्य करना ही है।

विवश होकर मंगलवार ५ नवम्बर १९९६ को विधि
ावत यज्ञोपवीत और गायत्री मन्त्र की दीक्षा का कार्य सम्पन्न
किया। □□

स्याही की एक बूँद

श्री नन्द किशोर जी किराने का व्यापार करते थे। बड़े पुत्र श्री रामभरोसे लाल जी ने व्यापार में सहयोग किया। और दूसरे पुत्र श्री जगदीश चन्द्र जी, अपने ससुर लाला श्री भगवान जी की बर्तनों की दुकान पर बैठने लगे, सभी व्यापारिक गुणों के प्राप्त हो जाने के पश्चात् स्वयम् अपना बर्तन व्यवसाय करने लगे और आज बहुत बड़े उद्योगपतियों की पंक्ति में अपना स्थान बना लिया है। श्री राम भरोसे लाल जी के चार पुत्रों में से दो सर्विस में और दो दुकान पर लगे रहे। दुकान पुरानी बनी हुई थी, ठीक कराने का विचार बना, श्री राघवेन्द्र जी ने मुझसे कहा—हम दुकान बनवाना चाहते हैं परन्तु पिता जी बहुत घबरा रहे हैं कि कैसे काम पूरा होगा? जरा आप उन्हें समझा कर राजी करलें। मैंने श्री रामभरोसे लाल जी को समझाया और सहमति मिल जाने के पश्चात् दीपावली के अगले दिन से दुकान के निर्माण का कार्य आरम्भ हो गया। चारो ओर की दीवारें उठ गई। दिसम्बर मास के अन्त में लिन्टर पड़ने की सब तैयारी हो चुकी है, ठण्ड बहुत तेज हो गई। रात्रि में लिन्टर पड़ना है, इतनी तेज ठण्ड में रात भर कैसे काम होगा? इसी चिन्ता में श्री बृजेन्द्र जी बेचैन थे। मैं दुकान बन्द कर रहा था, मैंने बृजेन्द्र जी से कहा—क्या परेशानी है? कहने लगे—रात को लिन्टर पड़ना है, ऐसी ठण्ड में कैसे देखभाल होगी? मैंने कहा—क्यों चिन्ता कर रहे हो, जाओ घर से लिहाफ लेकर आओ। मेरी दुकान का आधा शटर बन्द करके लिहाफ ओढ़ कर बैठो। मैं दुकान की चाबी देकर घर को चला गया। और लिन्टर का काम पूरा हो गया। अगले दिन जब मैं दुकान पर आया तो कई व्यक्तियों ने कहा—कि आपने यह बहुत बड़ी गलती की, कि दुकान दूसरे के हाथों में दे दी? मैंने कहा—किसी के काम आना कोई

गलती नहीं होती। एक मास के पश्चात् दूसरा लिन्टर पड़ा तो भी मैंने दुकान की चावी श्री बृजेन्द्र जी को दे दी और उनका काम आसानी से पूरा हो गया।

भारतीय अर्थ व्यवस्था की धुरी 'गऊ' की दुर्दशा और उसकी करुण पुकार पर गुरुदेव दयानन्द सरस्वती जी महाराज ने पूर्ण ध्यान केन्द्रित कर 'गोकरुणा निधि' की रचना की। इस लघु कलेवर ग्रन्थ का काव्यानुवाद डा० अजय अनुपम जी ने किया। इस उपयोगी ग्रन्थ का निःशुल्क वितरण करने के उद्देश्य से, प्रकाशन सहयोग हेतु श्री रामभरोसे लाल जी के पुत्र श्री राघवेन्द्र जी से चर्चा की, उनकी सहमति नहीं बनी।

प्रकाशन हेतु सहयोग के लिये श्री शंकर दत्त पाँडे जी से सम्पर्क किया और उनकी पूर्ण सहमति होने पर पुस्तक छपने लगी। मुख्य पृष्ठ के अन्दर के पृष्ठ पर श्री शंकर दत्त पाँडे जी ने जो लिख कर दिया, वही छाप दिया। पुस्तक में लगाने को रंगीन चित्र दिया। मैंने कहा—यह बहुत महँगा पड़ेगा, यदि आप कहें तो काला सफेद ही छाप दें? इस पर पाँडे जी ने कहा—महँगा पड़ेगा तो क्या हुआ, रंगीन ही छपेगा। चित्र की भी पूर्ण सहमति मिल जाने के पश्चात् पुस्तक १९९८ ई० में छपकर तैयार हो गई। परन्तु लागत व्यय ९५००/— रूपये में से एक भी पैसा आज तक प्राप्त नहीं हुआ।

श्री शंकर दत्त पाँडे जी अक्सर कहा करते थे ''किसी के चरित्र का रहस्योद्घाटन करने के लिये स्याही की एक बूँद ही काफी है। वास्तव में यह बात सत्य है। चरित्र के रहस्योद्घाटन के लिये स्याही की एक बूँद ही पर्याप्त होती है। न चाहते हुये भी मुझे श्री शंकर दत्त पाँडे जी के इस चारित्रिक रहस्योद्घाटन करने के लिये विवश होकर कलम की स्याही की एक बूँद का प्रयोग करना ही पड़ रहा है।

महाभारत में यक्ष और युधिष्ठिर के सम्वाद की चर्चा आती है। उसमें यक्ष ने ३० वाँ प्रश्न किया ''अक्षय नरक किम्प पुरुष को मिलना है'' युधिष्ठिर ने उत्तर दिया ''जो पुरुष माँगने वाले को स्वय कहकर 'ना ही' कर देता है, वह अक्षय नरक में जाता है।'' अर्थात् जिस पुरुष ने सर्व हितार्थ साहित्य प्रकाशन को सहयोग देने के लिये

कहा हो और सहमति देने के पश्चात् वह साहित्य प्रकाशित हो जाने के पश्चात् पैसा न दे अथवा ना ही करा दे तो क्या परिणाम होगा आप स्वयं ही विचार लें। ❑❑

भयंकर दण्ड

१९९८ में जून मास की २३ तारीख को मैं नित्य की भाँति दुकान बन्द करके घर को जा रहा था। गंज बाजार में किनारे–किनारे चला जा रहा था, नीम प्याऊ के पास सामने से एक स्कूटर सवार आया और उसने मेरी दाहिनी टाँग के घुटने में जोर से टक्कर मार दी, मैं वहीं पर गिर पड़ा, पास के दो दुकान–दारों ने मुझे उठाया और आधा घन्टा वहीं बैठा रहा। चोट बहुत जोर से लगी थी इस कारण से आँखों के सामने अन्धेरा छा गया था, रिक्शा करके घर पहुँचा। परमात्मा की यह कृपा रही की हड्डी में कोई चोट नहीं आई केवल मासपेशियों में ही चोट थी। दो मास हो गये परन्तु दर्द ठीक नहीं हुआ, उठने बैठने में भी कठनाई हो रही है। दशहरा पास आ रहा है, बैठने में कठनाई है, गत्ते बनाने का काम कैसे होगा, यही रात को लेट–लेटे सोच रहा था। २२ वर्ष पूर्व से ही पुत्र वियोग का संकट झेल रहा हूँ, अबकी बार कैसे कार्य होगा? यही सोचते–सोचते आँखों से आँसू बहने लगे। रात्रि को स्वप्न में भी यही द्रश्य बना रहा। प्रात: काल उठा, यज्ञ से निबटा, फिर वही विचार सामने आकर खड़ा हो गया।

१९४६ में आर्यवीर दल का शिक्षण शिविर शाहजहाँपुर में दशहरे की छुट्टियों में लगा था। मैं भी उसमें चला गया। दशहरे से एक दिन पूर्व शिविर सम्पाप्त हुआ और मैं रात्रि तक मुरादाबाद चला आया। उस समय मुझे किसी भी प्रकार का कोई आभास नहीं हुआ कि तुम्हारे शिविर में जाने से पिता श्री को कितनी कठिनाइयों का सामना करना पड़ा होगा। छोटे भाई राजेन्द्र नाथ की आयु उस समय लगभग ९ वर्ष की थी, वह दुकान पर क्या हाथ बटा सकता था, दूसरे अब तो दशहरा और अप्रैल दोनों पर ही बही खाते बदले जाते

हैं, परन्तु उस समय तो केवल दशहरे पर ही बदले जाते थे। मैंने शिविर में जाकर पिता श्री के सामने जो संकट खड़ा कर दिया था उसका अनुभव मुझे आज हो रहा है, कि मैंने उस समय पिता श्री को बेसहारा छोड़कर उनको आत्मिक आघात पहुँचाकर जो कष्ट दिया था, क्या प्रभु जी ने उसी अनुचित कर्म का फल देने के लिये ही कहीं २२ वर्ष पूर्व से ही शेष जीवन के लिये मुझे इस संसार में बिलकुल बेसहारा बनाकर छोड़ दिया? इसमें वास्तविकता क्या है मैं इसे नहीं जानता परन्तु आज मेरा मन यही कह रहा है। परमात्मा की न्याय व्यवस्था में किसी का भी कोई चारा नहीं। उसके सहस्त्रों प्रकार हैं कर्म फल देने के। ☐☐

प्रदेश से बाहर सम्मान

एक पत्र श्री हरिमोहन सिंह कोठिया, संयोजक अभिनन्दन समिति आगरा से आया, ग्वालियर में २७ वें अखिल भारतीय माथुर वैश्य महासभा के राष्ट्रीय सम्मेलन में सम्मानित करने के लिये विशिष्ट विभूतियों के नाम, परिचय, चित्र और पता आदि भेजने का आग्रह किया गया था। श्री राममुकुट गुप्ता शाखा सभा के प्रधान एवं नगर मण्डल के प्रधान तथा श्री राजेन्द्र कुमार जी मन्त्री (सुपुत्र श्री रामकिशन जी मुनीम) दोनों में इस पत्रक पर चर्चा हुई और वह दोनों मेरी दुकान पर आये, अपना परिचय चित्र और पता ग्वालियर भेजने के लिये देने को कहा। मेरा १९९६ जनवरी में नागरिक अभिनन्दन हुआ था, उस समय एक अभिनन्दन ग्रन्थ 'अभिनन्दनीय व्यक्तित्व' के नाम से प्रकाशित हुआ था, उसमें मेरा परिचय छपा था, वह मैंने श्री राममुकुट जी गुप्ता एवं श्री राजेन्द्र कुमार जी को दिया। और मैंने कहा—हमारे नगर में दो और साहित्यकार हैं, उनके नाम भी भेजने की कृपा करें। वे हैं श्री जयनारायण जी सुमन और श्री सुरेन्द्र कुमार जी सुकुमार। मेरे इस सुझाव को उन्होंने स्वीकार किया और तीनों के नाम परिचय तथा चित्र आदि भेज दिये गये।

कन्च में भी चमक होती है, जब उस पर सूर्य की किरणें पड़ती हैं तो वह भी चमकने लगता है। नगर शाखा सभा ने तो मुरादाबाद महानगर से तीन कन्च के टुकड़े मात्र ही भेजे थे। पारखी की नजर बहुत तेज होती है। यदि पारखी जौहरी भी हो तो उसकी तीव्र दृष्टि से कोई ओझल नहीं हो सकेगा। हरिमोहन सिंह कोठिया पारखी हैं, जौहरी हैं, वे साहित्यकार हैं, कवि हैं, लेखक हैं, और प्रकाशक भी हैं। उनकी गिद्ध दृष्टि बहुत तेज है। मुरादाबाद से भेजे कन्च के टुकड़ों को देश भर से आये नगों के बीच रख दिया। सब की चमक निराली थी, सबको देखा, परखा, विचार किया और उनमें से एक कन्च के टुकड़े को डायमण्ड कटर से तैयार कर शनिवार ६ मार्च १९९९ के दिन ग्वालियर में अखिल भारतीय माथुर वैश्य महासभा के २७ वें राष्ट्रीय सम्मेलन रूपी मुद्रिका में जड़कर सबके सामने प्रस्तुत कर मुरादाबाद महानगर के स्वाभिमान को उच्च शिखर पर (वीरेन्द्र गुप्त:) आसीन कर गौरव पूर्ण गरिमा में चार चाँद लगा दिये। महानगर मुरादाबाद के इस गौरव को सम्मान पूर्वक मंच पर ले जाकर बैठाया गया। महासभा के वर्तमान अध्यक्ष श्री राम लक्ष्मण गुप्ता जी द्वारा माल्यार्पण कर शाल उढ़ाया गया और "समाज शिरोमणी" (साहित्य) की उपाधि से अलंकृत किया। विजय कुमार जी ने इस अवसर के कई चित्र भी खींचे। श्री हरिमोहन सिंह कोठिया जी ने सम्मान पत्र पढ़ा, उसमें ३१ पुस्तकों के प्रकाशित हो जाने की बात कही गई है, परन्तु तब तक ३८ पुस्तकें प्रकाशित हो चुकी थीं।

कार्यक्रम की समाप्ति पर मैं मन्च से उठकर चलने लगा। उसी समय श्री कोठिया जी भी कुछ चर्चा करते हुए आगे बढ़े और उसी समय पूर्व महासभा अध्यक्ष श्री रामसेवक गुप्ता जी कानपुर निवासी भी आ गये, उन्होंने कहा—कोठिया जी आपने परिचय नहीं कराया, इस पर कोठिया जी ने कहा—मैंने अभी अभी परिचय पढ़कर सुनाया था। श्री राम सेवक जी गुप्ता ने कहा—नहीं! आपने व्यक्तिगत परिचय कहाँ कराया? इस पर सब को हँसी आई और उन्होंने मुझसे हाथ मिलाया और पुस्तकें भी चाहीं। इस द्रश्य को देखकर सभी आत्मविभोर हो गये। वास्तव में यह सम्मान महानगर

मुरादाबाद के समस्त माथुर वैश्य समाज का ही सम्मान है। इसके पश्चात् आगामी सत्र में श्री सुरेन्द्र कुमार जी फिरोजाबाद निवासी अध्यक्ष पद पर आसीन हुए। इस समय श्री एस.सी. पोगरिया जयपुर निवासी अध्यक्ष पद पर आसीन हैं। ❑❑

उद्गम् का स्वरूप

इस सन्दर्भ के साथ माथुर वैश्यों के उद्गम् के स्वरूप की चर्चा करना उचित लग रहा है।

मर्यादा पुरुषोत्तम श्री राम चन्द्र जी के राज्य काल में महर्षि कुरु के पुत्र, अष्टाँग योग में प्रवीण परमयोगी योगेश्वर श्री च्यवन ऋषि का आश्रम मथुरा प्रदेश के चौसय्या ग्राम में था, उनकी गृह स्वामिनी राजा शयात्री की सुपुत्री श्रीमती सुकन्याँ १२ पुत्रों सहित निवास करते थे। १२ पुत्रों के नाम ही हमारे १२ गोत्र हैं। इन सबके ७२ पुत्र हमारे उपगोत्र अर्थात् खेड़े या अल्ल सहित ८४ गोत्र माने जाते हैं।

जातियों की पहचान, स्थान के नाम से जानी जाती है। हमारा उद्गम स्थान मथुरा आँचल में स्थित चौसय्या ग्राम का होने के कारण हमारी पहचान चौसय्या वैश्य के नाम से थी जिसका अपभ्रन्श होकर चौसैनी वैश्य बन गया। चौसैनी का अर्थ चौथी श्रेणी से लगाया जाने लगा। श्रेणी आयु से बनती है। हमारा उद्गम वैवस्वत मनवन्तर की २४ वीं चतुर्युगी के त्रेता के अन्त का है। इस प्रकार हमारी प्रथम श्रेणी है। औरंगजेब के द्वारा मथुरा में विपलव मचाने के पश्चात् वहाँ से वैश्यों का पलायन हो गया, और उस समय हमारी पहचान मथुरा वैश्य के नाम से बनी जो आज माथुर वैश्य के रूप में उपस्थित है। मैंने 'माथुर वैश्यों का उद्गम' के नाम से प्रस्तुत पुस्तक में विस्तार से प्रकाश डाला है।

प्रदेश से बाहर सुदूर अन्य प्रदेश में सम्मान का होना एक महत्वपूर्ण अवसर है। मैं इसे जीवन का अमूल्य क्षण मानता हूँ। इसका श्रेय श्री राममुकुट जी गुप्ता, श्री राजेन्द्र कुमार जी एवं

श्री विजय कुमार जी को है। इन तीनों ने ही मेरा नाम भेजा और उसकी पुष्टि हो जाने पर ग्वालियर साथ चलने के लिये तीनों ने सहमति दी तभी मैं जा सका। अकेले जाना मेरे बस का नहीं था। इस महत्वपूर्ण सम्मान से सम्मानित कराने में इन तीनों की मेरे प्रति सद्भावना का ही योग है। □□

जिज्ञासा

मेरी एक जिज्ञासा—वैदिक सम्पत्ति की रचना कब की है?

उत्तर—वैदिक सम्पत्ति की रचना वैषाख शुक्ल पूर्णिमा सम्वत् १९८७ की है।

जिज्ञासु—इन ७५ वर्षों में इस भूल का निराकरण किसी ने भी नहीं किया, केवल आपने ही इस भ्रम को दूर करने के लिये सम्वत् २०६१ में अपनी कलम उठाकर इसके सत्य स्वरूप को प्रस्तुत किया। मैंने यह सारा विषय 'ईश महिमा' पुस्तक में इस प्रकार पढ़ा है।

'वैदिक सम्पत्ति' के प्रणेता श्री पं० रघुनन्दन शर्मा साहित्य भूषण अक्षर विज्ञान, सम्पादक लिखते हैं—"जिस प्रकार स्वायम्भुव मनु के समय नक्षत्रिक जगत् तैयार हुआ उसी तरह दूसरे स्वारोचिष मनु के समय में पृथ्वी तैयार हुई। तीसरे मनु के समय में पृथ्वी से चन्द्रमा जुदा हुआ। चौथे मनु में समुद्र से भूमि निकली। पाँचवे मनु में वनस्पति हुई। छटवें मनु में पशु हुए और सातवें वैवस्वत मनु में मनुष्यों का जन्म हुआ।"

पृथ्वी से चन्द्रमा का पृथक होना आधुनिक वैज्ञानिकों का मत है। वेद के अनुसार सूर्य और चन्द्रमा एक साथ ही बने हैं। जब चौथे मनु में भूमि समुद्र से निकली थी तो फिर इन चारो मनुओं की उत्पत्ति भूमि के अभाव में कहाँ पर हुई? यह भी एक प्रश्न बनता है। १४ मनवन्तर की एक सृष्टि होती है, श्री रघुनन्दन शर्मा जी के अनुसार ६ मनवन्तर पूर्व निर्माण के और इतना ही समय समाप्ति का, इस प्रकार १२ मनवन्तर समाप्त हो जाते हैं, केवल २ मनवन्तर

ही मानव उपयोग के लिये क्यों रखे गये? यह समझ नहीं आ रहा। मानव गिनती कर सकता है, पशु पक्षी नहीं। मानव गिनती जोड़कर आगे बढ़ा सकता है, पशु पक्षी नहीं। मानव रोजनामचा बना सकता है पशु पक्षी नही। स्वायम्भुव मनु से वैवस्वत मनु के प्रारम्भ होते समय तक की गणना किस प्रकार से हुई। १ हजार चतुर्युगियों में से मानव उपयोग के लिये ९९४ चतुर्युगिया मिली हैं, शेष ६ चुतुर्युगियाँ ही सन्धि काल की हैं, १२ मनवन्तर नहीं। यह अटल सत्य है कि स्वायम्भुव मनु काल से ही मानव उपस्थित है।

हर मनवन्तर के प्रारम्भ में मनु का जन्म होता है वह छिन्न भिन्न हुई व्यवस्था को सुचारू बनाकर शुद्ध व्यवहार की स्थापना करते हैं। मानव को छोड़कर शेष आकृतियाँ अनुशासन में रहती हैं, अपनी अपनी मर्यादाओं का पालन करती हैं, और कभी उनका उल्लंघन भी नहीं करतीं, अतएव अव्यवस्थित होने का प्रश्न ही नहीं उठता। मानव कर्म प्रधान योनि है, वह अंकुश रहित होने पर निरंकुश होकर व्यवस्था को छिन्न भिन्न करने लगता है। उसी को व्यवस्थित करने के लिये मनु का आगमन होता है। प्रश्न उठता है ६ मनुओं ने किसको व्यवस्था में बाँध कर रखा? पण्डित जी के कथनानुसार ६ मनुओं का जन्म निरर्थक ही हो गया? ◻◻

प्रेम प्रकाश बंसल

श्री प्रेम प्रकाश बंसल जी लालमन दास के छोटे सुपुत्र, श्री ओमप्रकाश जी के छोटे भाई और डा. अजय अनुपम जी के चचिया ससुर हैं। राम चरित मानस के अधिकारी विद्वान् हैं। कभी—कभी मेरी दुकान पर आ जाया करते हैं। और चर्चा, शंका समाधान आदि होता रहता है। एक दिन श्री प्रेम प्रकाश जी ने कहा—वीरेन्द्र जी हम आपको सदैव 'नमस्कार' करते हैं और आप उत्तर में 'नमस्ते' कहते हैं, ऐसा क्यों? और इसमें क्या भेद है, मैं जानना चाहता हूँ।

मैंने समाधान करते हुए कहा—बंसल जी इन दोनों में बहुत बड़ा अन्तर है।

बंसल जी—वह क्या?

समाधान—नमस्कार संस्कृत भाषा का शब्द है इस का सन्धि विच्छेद होता है 'नम: कार:' जो मिलकर नमस्कार बन जाता है। इस का अर्थ है नमन करना।

बंसल जी—हाँ! यह बात ठीक है परन्तु इसमें कोई दोष तो नहीं?

समाधान—इसमें दोष नहीं अपूर्णता है।

बंसल जी—और नमस्ते में?

समाधान—नमस्ते भी संस्कृत भाषा का शब्द है इस का सन्धिविच्छेद होता है। 'नम: ते' जो मिलकर नमस्ते बनता है, इसका अर्थ है 'नम:' नमन करता हूँ 'ते' तुझ को।

बंसल जी—इन दोनों में अन्तर तो कुछ नहीं दीखता?

समाधान—दोनों में बहुत बड़ा अन्तर है, नमस्कार का अर्थ है नमन करना और नमस्ते का अर्थ है नमन है तुझको। यदि आप नमस्कार को ही बोलना चाहते हैं तो आपको कहना होगा कि 'आपको नमस्कार है' तब वाक्य पूरा होगा।

बंसल जी—राम—राम क्या है।

समाधान—यह अपने इष्टदेव का जय घोष है, अभिवादन नहीं। राम—राम, जयसिया राम, राधेश्याम, जय शंकर की आदि आदि यह सब अपने—अपने इष्ट देव के जय घोष ही हैं। मैंने कई ग्रन्थों में देखा है कि वहाँ पर 'नम:' 'नमन' या 'नमस्ते' शब्दों का ही प्रयोग हुआ है 'नमस्कार' का कही प्रयोग नहीं। अभिवादन का अर्थ है किसी का सत्कार, स्वागत, आदर, सम्मान आदि करना होता है। इस उद्देश्य की पूर्ति 'नमस्कार' अथवा इष्टदेव के जय घोष आदि से नहीं होती। इसकी पूर्ति केवल 'नमस्ते' से ही होती है।

प्रेम प्रकाश जी—अब बसन्त पंचमी आने वाली है ठण्ड कम हो जायगी और ऋतु भी बसन्त की आ जायगी।

समाधान—बसन्त पंचमी से बसन्त ऋतु नहीं आती।

प्रेम प्रकाश जी—क्यों?

समाधान—यह बसन्त पंचमी बसन्त ऋतु का प्रारम्भ नहीं है। बसन्त ऋतु वेद के अनुसार (मधु माधव वसन्तौ) चैत्र बैषाख यह दोनों मास बसन्त ऋतु के होते हैं।

प्रेमप्रकाश जी—यह बसन्त पंचमी क्या है और क्यों मनाई जाती है?

समाधान—यह बासन्ती महोत्सव है।

प्रेम प्रकाश जी—इसका क्या प्रयोजन है?

समाधान—यह पर्व माघ सुदी पंचमी के दिन होता है। इसके ४० दिन पश्चात् होलिकोत्सव अर्थात् नवान्नेष्टि यज्ञ होता है। इस दिन से गुरुकुलों के ब्रह्मचारी पीत वस्त्र धारण कर निकल पड़ते हैं। घर—घर जाकर घी, सामग्री, समिधा आदि का संग्रह करते हैं।

प्रेम प्रकाश जी—आपने यह नई बात बताई, मुझे अब से पहले यह रहस्य नहीं मालूम था। हम तो यही समझते थे कि अब बसन्त ऋतु का आरम्भ हो गया। पीत रंग ही क्यों चुना गया?

समाधान—आप जंगलों में जाकर देखिये की इस समय जो फसल तैयार खड़ी है, उसके ऊपर दूर तक पीले रंग के फूल ही खिले हैं, ऐसा लगता है कि प्रकृति ने बसन्ती रंग की चदरिया ओढ़ रखी हो। यह पीला रंग प्रकृति की देन है। प्रसन्नता और उल्लास की उमंगों से भरा है।

इस प्रकार बसन्त पंचमी, बासन्ती महोत्सव का पर्व है, बसन्त ऋतु नहीं। बसन्त ऋतु में पतझड़ के पश्चात् नई हरियाली खिलने लगती है, सो आप देखें, इस समय पतझड़ नहीं होगा। पतझड़ के पश्चात् नई हरियाली तो बसन्त ऋतु में ही आती है।

इसी दिन स्यालकोट में वीर हकीकतराय का भी बलिदान हुआ था।

प्रेम प्रकाश जी—क्या? होली, प्रहलाद की बुआ होलिका के समय से ही चलती चली आ रही है?

समाधान—नहीं! यह पर्व आदि सृष्टि से ही होता आ रहा है। इसका वैज्ञानिक स्वरूप इस प्रकार से है। शिशिर ऋतु की समाप्ति के पश्चात् जब बसन्त ऋतु आती है, इस समय पर अनेक प्रकार की ऋतु जन्य व्याधियाँ जन्म लेने लगती हैं। शीत के कारण जो अनेक प्रकार के जन्तु छिपे पड़े रहते हैं वे भूँखे सिंह के समान उभर कर भयंकर उत्पात मचाने लगते हैं, इसी से वायु प्रदूषण भी

बनने लगता है। इस प्रदूषण से बचने के लिये कोई भी वैज्ञानिक प्रक्रिया आज तक हमारे सामने नहीं आई, जो एक ही रात में समूचे भूखण्ड को प्रदूषण रहित कर सके। इस वैज्ञानिक प्रक्रिया को हमारे मनीपियों ने हमें प्रदान किया है। ये है फालगुन पौर्णमासी की रात्रि में विराट यज्ञों का आयोजन। जिसे नवान्नेष्टि यज्ञ अथवा इस समय चना, बूँट, होला की फसल आती है इसी होले के कारण होलिकोत्सव भी कहते हैं। यह विराट यज्ञ कुमारी अन्तरीप से चलकर हिमालय की चोटी तक हर स्थान—स्थान पर होता हुआ चला जाता है। इस प्रकार सम्पूर्ण भारतवर्ष के भू भाग का सारा प्रदूषण समाप्त होकर वातावरण शुद्ध हो जाता है और ऋतु जन्य व्याधियों से मुक्ति मिल जाती है।

विराट यज्ञ के प्रचण्ड ताप के कारण उसमें घी और सामग्री की आहुतियाँ देना दुष्कर हो जाता है। उसी के लिये (इक्षाकु) गन्ने में (स्रुवा) चमचा बाँध कर उससे यज्ञ में आहुतियाँ देते हैं। गन्ना न जलता है, न गरम होता है और यह तपा हुआ गन्ना औषधि रूप हो जाता है। इसका एक एक पोरु अमृत समान रोग निवारक बन जाता है। नये अन्न के आने के उपलक्ष में यह पर्व यज्ञ के रूप में होता है अर्थात् पहले हम नये अन्न को अग्नि को अर्पण कर के, पश्चात् अपने उपयोग में लाते हैं। यह पर्व आदि सृष्टि से ही चलता चला आ रहा है। बीच के काल में भक्त प्रहलाद की बुआ होलिका की भी घटना इससे जुड़ गई। इस पर्व का एक छिपा हुआ नाम और भी है। वह है (स्वपच स्पर्शिनी) अर्थात् इस पर्व पर स्वपच से गले मिलना भी है।

नये भवन में पहला पर्व होली के मनाने का सब निषेध करते हैं, जबके ज्योतिष शास्त्र अथवा पंचाँग में ऐसा कोई संकेत नहीं हैं। स्पष्ट है सभी होली के पर्व को, होलिका की चिता ही मानते हैं, इसी कारण नये भवन में प्रवेश करके पहला पर्व चिता पूजन का नहीं करना चाहते। जबके यह पर्व नवान्नेष्टि यज्ञ का है।

इस दिन आम के मौल को पीस कर उसका सारे शरीर पर उबटन करने से पूरे वर्ष शरीर मच्छर आदि विशाक्त जन्तुओं के भय से मुक्त रहता है। ☐☐

महानता

आर्य समाज मण्डी बाँस मुरादाबाद के मन्त्री श्री विन्ध्यवासनी प्रसाद जी हिन्दी नही लिख पाते थे, इस कारण उनकी सब लिखा–पढ़ी का कार्य मैं ही करता था। पहले साप्ताहिक सत्संग नीचे होता था, भवन के पुन: जीर्णोद्धार के अन्तर्गत नीचे छोटी–छोटी ६ दुकानें निकाली गईं। और सत्संग का कार्यक्रम ऊपर हाल में होने लगा। दुकानें कुछ किराये पर उठीं, कुछ खाली रहीं। आय का कोई विशेष अन्तर नहीं पड़ा।

सन् १९५० में श्री भोला दत्त पंत जी ने हमारे पिता श्री भूकन सरन जी से कहा–हरी डाक्टरी पढ़ कर आ गया है। उसके लिये कोई स्थान दिलाओ। मैंने कहा–आर्य समाज की नीचे की दुकानों को हटा कर यदि एक हाल बना दिया जाये तो क्या आपका कार्य हो जायगा? श्री भोला दत्त पंत जी ने कहा–हाँ यह ठीक स्थान रहेगा, इसकी बात करो। हाल बनकर तैयार हो गया और डा० हरिशंकर पत जी चिकित्सा करने लगे।

कई वर्षों के पश्चात् जब चौ० वीर सिंह जी कोषाध्यक्ष बने तो उन्होंने डा० हरिशंकर पंत जी को किराया बढ़ाने का नोटिस दिया। उसका डा० साहब ने उत्तर देकर किराया बढ़ाने से मना कर दिया, उत्तर सही था, वैधानिक था, इस कारण डा०साहब से किराया बढ़ाने की बात यहीं समाप्त हो गई। एक वर्ष के पश्चात् मास्टर रामनिवास जी ने मुझ से कहा कि डाक्टर साहब से किराया कैसे बढ़े? मैंने कहा–उनसे मिला जाय। मैं और मास्टर रामनिवास जी डाक्टर साहब से जाकर मिले, डाक्टर साहब ने कहा–मैं वीर सिंह जी के नोटिस का उत्तर दे चुका हूँ। मैंने कहा–डाक्टर साहब अब आपके पास मैं आया हूँ, इस पर डाक्टर साहब हँसे और कहा–किराया बढ़ जायगा। डाक्टर साहब का धन्यवाद करके मैं और मास्टर रामनिवास जी चले आये। रास्ते में मास्टर साहब ने कहा–बात अधूरी रही, पता नहीं क्या बढ़ाकर भेजें। मैंने कहा–आप धैर्य रखिये, आप जो चाहते हैं वही

होगा। अगले दिन डा० हरिशंकर पंत जी ने तीन मास का किराया ड्योढ़ा करके मेरी दुकान पर भेज दिया। मैंने एक स्लिप लिखकर डाक्टर साहब का धन्यवाद किया, और निवेदन किया कि आपने मेरा सम्मान रखते हुए किराया ड्योढ़ा करके अपनी उदारता का पूर्ण परिचय दिया, एक छोटी सी प्रार्थना और थी कि यदि १०प्रतिशत हाउस टैक्ट और बढ़ाकर देने की कृपा करें तो बहुत अच्छा होगा। डाक्टर साहब ने वह भी उसी समय भेज दिया। इस पर श्री बिन्दाप्रसाद जी, मास्टर रामनिवास जी और वीर सिंह जी आदि सब प्रसन्न हो गये और कहा—डाक्टर साहब आपका बहुत सम्मान करते हैं। मैंने कहा—बचपने में शाम को नित्य मैं, डाक्टर साहब, जगदीश, राधेश्याम आदि चोर सिपाही का खेल खेलते थे।

मेरी एक पुस्तक 'पुत्र प्राप्ति का साधन' जिसका अंग्रेजी में श्री दुर्गादत्त त्रिपाठी जी ने रूपान्तर किया था, इस पुस्तक का नाम 'हाऊ टू बिगैट ए सन्' का प्रिफेस (प्राक्कथन) डा. हरिशंकर पंत जी ने लिखकर दिया था। मैंने उसे पुस्तक में प्रकाशित किया।

५० वर्ष तक निरन्तर डा. हरिशंकर पंत जी नगर वासियों को रोग मुक्त करते रहे। नगर में प्रचलित था कि रोगी का आधा रोग तो डाक्टर साहब की मुस्कान से ही ठीक हो जाता है। आयु बढ़ने लगी शरीर शिथिल होने लगा, डाक्टर साहब ने चिकित्सा केन्द्र पर भी आना कम कर दिया और अधिकतर घर पर ही रोगियों को देख रहे हैं। विचार बना डाक्टर साहब से हाल खाली कराने की बात की जाय। कई बार प्रयत्न किया परन्तु सफलता नहीं मिली। मुझसे श्री रघुवीर सरन जी और ओमप्रकाश आर्य जी ने कहा—अब डाक्टर साहब ने चिकित्सालय में बैठना बन्द कर दिया है, उनके स्थान पर कहीं कोई और न बैठने लगे, इस कारण से उनके पास चलकर बात करनी है। मैंने कहा—जब आप चलना चाहें चल सकते हैं, मैं हर समय आपके साथ चलने को तैयार हूँ। एक दिन कार्यक्रम बना—प्रधान श्री सतीशचन्द्र मदान, श्री रघुवीर सरन जी श्री ओमप्रकाश जी आर्य और मैं (वीरेन्द्रनाथ) डाक्टर साहब से मिलने घर पर गये। डाक्टर साहब ने सबका स्वागत किया और बिना किसी

इच्छा के, उन्मुक्त भाव से प्रसन्नता पूर्वक चाबियाँ मुझे देते हुए कहा—"लो वीरेन्द्र तुमसे ही यह चाबियाँ लीं थी और अब ५० वर्ष की सेवा के पश्चात् तुमको ही वापिस दे रहा हूँ" कहकर—मेरे हाथ में चाबियाँ देदीं।

डा० हरिशंकर पंत जी की कितनी उदारता है, कि उन्होंने बिना किसी लोभ के चाबियाँ मुझे दे दीं। जबके उनके पास अरविन्द आदि कई व्यक्ति गये, परन्तु डाक्टर साहब ने कहा—"नहीं, मैं ऐसा नहीं करुँगा जिसकी चाबियाँ हैं उसी को ही दूँगा"। यह उनकी कितनी महानता है। व्यक्ति विद्या या धन से नहीं उदारता से ही महान बनता है। □□

दो समाधान

अनेक व्यक्तियों ने अपनी धारणा बना रखी है कि अथर्ववेद में जादू, टोना, तन्त्र विद्या का भण्डार है, यह धारणा निर्मूल है, निराधार है। मेरे पास अनेक व्यक्तियों ने आकर अथर्ववेद के मन्त्रों को देखा, परन्तु उन्हें कहीं कुछ नहीं मिला।

कौशिक सूत्रों के विनियोगों ने ही योरोपयिन विद्वानों और सबसे प्रथम सायण के अनुसार अन्य विद्वानों और सर्वसाधारण जनता के मध्य में यह अत्यन्त गहरा भ्रम उत्पन्न कर दिया है कि अथर्ववेद में 'जादू टोना' बहुत अधिक भरा पड़ा है। परन्तु हमें अत्यन्त आश्चर्य है कि हमने सम्पूर्ण अथर्ववेद में ऐसा कोई भी स्थल नहीं देखा, जहाँ जादू—टोना प्रतीत होता हो।

कौशिक ने 'मेधाजनक' कर्म बहुत से गिनाये हैं। वे इनके द्वारा "ये त्रिपप्तः" आदि प्रथम सूक्त के चार मन्त्रों के जाप से ग्राम सम्पत्ति की इच्छा से, समस्त सम्पत्ति चाहने वाले, युद्ध में शत्रु के हाथियों को भगा देने के लिये, पुष्टि कर्म, तेज प्राप्ति, पुत्र प्राप्ति आदि सभी कार्य इस सूक्त के जाप से सफल हो जाना मानते हैं। जबके इस सूक्त के चारो मन्त्रों में कोई भी उक्त कार्यों का उल्लेख नहीं है। इस सूक्त में बल प्रार्थना, ज्ञान प्रार्थना, और विद्या वृद्धि की प्रार्थना की गई है। इस प्रकार अथर्ववेद में 'जादू टोना' का कोई स्थान

नहीं। जबके अथर्ववेद में गृहस्थ, शाला निर्माण, कृषि, व्यापार, विज्ञान, आयुर्वेद, राजनीति, राष्ट्रपालन, सदाचार और परमेश्वर की उपासना आदि के विषय सम्बन्धी ज्ञान उपलब्ध हैं।

इस विषय को देखने के लिये श्री अशोक शर्मा जी मुझसे अथर्ववेद पढ़ने के लिये ले गये। उन्हें भी कुछ प्राप्त नहीं हुआ।

रत्नों के धारण करने के बारे में भी बहुत बड़ी भ्रान्ति है। अधिकतर यही माना जाता है कि रत्न धारण करने से सारे संकट दूर हो जाते हैं। इस विषय में श्री अशोक शर्मा जी से चर्चा हुई और श्री रामदास जी की दुकान पर श्री निहाल सिंह जी से भी वार्ता हुई। मेरा अपना मानना है कि रत्नों के धारण करने से संकट दूर हो सकें, यह न्याय के विपरीत है। संकट किसी न किसी कर्म का फल ही होता है, वह रत्न धारण करने से दूर नहीं होता। यह अवश्य है कि रत्न धारण करने से मन को यह धैर्य होता है कि मेरे पास भी कुछ है। वास्तव में रत्नों के धारण से नहीं, सेवन से पूर्ण लाभ होता है। आयुर्वेद में सभी रत्नों की भस्म अथवा पिष्टी तैयार करके सेवन करने का संकेत है। इनके सेवन से शरीर के सभी रोग नष्ट होते हैं।

मैं यहाँ पर रत्नों के गुणों की सक्षिप्त रूप से चर्चा करके भ्रम को दूर करना चाहता हूँ।

१— (रसकामधेनु, रसमार्तण्ड)

वज्रं तु सर्वामयपर्वतेषु वज्रोपमं मौक्तिकमग्निवृद्धिम्।
श्री पद्मरागोऽगिंषु पद्मरागमगें तनोत्येव विशेषतस्तु।।

वज्र (हीरा) सब रोगरूपी पर्वतों को नष्ट करने में वज्र के समान कार्य करता है।.

हीरा भस्म, देह के भीतर होने वाले पूयक्षत, अबुर्द, कर्कस्फोट (कैन्सर) पिलपिला, ग्रन्थीदार, चारो ओर फैलने वाला आदि कैन्सर गुल्म आदि पर सफलता सहित कार्य करती है।

इसका एक विशेष प्रयोग जो अत्यन्त महत्वपूर्ण है उसे यहाँ अंकित करना आवश्यक है —

हीरा भस्म १ रत्ती, सुवर्ण भस्म, मुक्तापिष्टी और अभ्रक भस्म २—२ माशा मिला कर ४८ पुड़ियाँ बनालें। प्रतिदिन प्रातः १

पुड़िया मलाई मिश्री के साथ देने से कर्कस्फोट (कैन्सर) आदि की ग्रन्थियाँ गलकर नष्ट हो जाती हैं। हीरा भस्म के अभाव में वैक्रान्त भस्म ली जा सकती है।

कचनार गूगल—का प्रयोग भी अति उपकारी है—इसके सेवन से कण्ठमाला, अपची, अबुर्द, कर्कस्फोट (कैन्सर) ग्रन्थी, ब्रण, गुल्म, कुष्ट, भगन्दर आदि उग्र रोगों में अति लाभदायक है। इसका सेवन त्रिफला क्वाथ अथवा खदिरारिष्ट के साथ ३—४ मास तक प्रयोग करने से रोग नष्ट हो जाता है।

२— मुक्ता—मोती अग्नि को प्रदीप्त करता है। हृदय के लिये उपकारी है।

३— पद्मराग इसे माणिक्य, लाल, चुन्नी आदि नामों से भी जाना जाता है, यह देह को माणिक्य के रंग के समान तेजस्वी बना देता है।

४— शुक्रनील अर्थात् नीलम, इसका रंग नीला तथा जामनी होता है। यह रस बन्धक है, नेत्र रोगों को दूर करके दृष्टि को तेज बनाता है।

५— गारुत्मत तार्क्ष्य अर्थात् पन्ना, यह हरे रंग का होता है। यह सब प्रकार के विषों को नष्ट करता है एवं सब रोगों में रसायन गुण दर्शाता है। जारित पारद के योग से युक्त पन्ना भस्म समाधि—सिद्धि प्रदान करता है। योगदर्शन के कैवल्य पाद के प्रथम सूत्र में आता है:—

जन्मौषधिमन्त्रतपः समाधिजाः सिद्धयः।।

जन्म, औषधि, मन्त्र, तप और समाधि से उत्पन्न होने वाली पाँच प्रकार की सिद्धियाँ होती है।

६— वैदूर्य अर्थात् पुखराज, इसका रंग सफेद, पीला और हलका आसमानी होता है। यह शुक्रवर्धक और अग्नि दीपक है। पुष्पराग कृत्रिम विष, सह स्थावर और जंगम विषको भी दूर करता है।

७— गोमेद, इसका रंग लाल में श्यामता मिश्रित होता है, यह कान्तिप्रद, बल और साहस शक्ति प्रद है। कफपित्तध्न, क्षय और पाण्डू रोग का नाशक, दीपन, पाचक, त्वचा—पौष्टिक, बुद्धि वर्धक है।

८— विद्रुम अर्थात् मूँगा, प्रवाल, यह पुष्टि, कान्ति, बल और वीर्य वृद्धि करता है तथा कफ, वात और पित्त तीनों को जीतने

वाला है। रक्त विकार, क्षत—क्षय, और नेत्र रोग आदि का नाशक है।

९— राजावर्त—इसे लार्जवर्ध भी कहते है, की भस्म अनिद्रा, अरुचि, नेत्र लाली, दाह, बेचैनी आदि लक्षणों का शमन करती हैं।

१०— वैक्रान्त की भस्म यक्षमा, वृद्धावस्था की निर्वलता, पाण्डू, अर्श, श्वास, कास, मुखरोग आदि को दूर करती है।

११— स्फटिक मणि, इसका रंग सफेद चमकदार और हल्का नीला होता है, इसकी भस्म, ज्वर, दाह, रक्त—पित्त, रक्त—वमन, विप प्रकोप और रक्त—स्राव को रोकने के लिये उपयोगी है।

१२— फिरोजा—इसका रंग नाम के अनुसार फिरोजी हलका होता है। इसकी भस्म रक्त शोधक, विषघ्न, चर्मरोग नाशक और रक्त दबाव अर्थात् हाई ब्लडप्रेशर नाशक है। उन्माद, जीर्ण, वातरोग, विस्फोटक, व्रण और विष नाशक है।

१३— अकीक, इसका रंग हल्का, गहरा, लाली अथवा पीतवर्ण मिथित होता है। इसकी भस्म शीतवीर्य, ह्रदय की सब प्रकार की निर्बलता, उष्णता, मस्तिक की उष्णता, नेत्र रोग, रक्त प्रदर आदि को दूर करता है।

अकीक भस्म गर्भावस्था में बच्चे के सभी अंगों को परिपूर्ण करने में उत्तम रसायन का कार्य करती है।

लोह (पक्का)—को तपाकर दूध में बुझाकर सेवन करने से रक्त अल्पता दूर होती है।

सुवर्ण — को तपाकर दूध में बुझाकर प्रयोग करने से ह्रदय रोग और रक्त चाप उच्च अथवा नीचे का दोनों में समान लाभ देता है। सुवर्ण एक ऐसी धातु है जो कभी नष्ट नहीं होती। सुवर्ण भस्म को तेज अग्नि लगाने पर पुन: जीवित होकर सुवर्ण बन जाती है।

सर्वाणि रत्नानि च दीपनानि रसेन्द्रयुक्तान्यमृतोपमानि।
यो यस्य वर्णः, खलु दृश्यते हि तादृग् विधं तस्य वपुर्विधत्तो।।

सब रत्न अग्नि प्रदीपक हैं एवं पारद युक्त या जारित परद होने पर अमृत तुल्य फलप्रद होते हैं।

ऋग्वेद के प्रथम मन्त्र के अन्तिम पद में आता है, ''रत्न धातमम्'' समस्त रत्न भण्डार परमात्मा ने सृष्टि के आरम्भ से ही प्रदान किये है।

जारित पारद—शुद्ध गंधक, शुद्ध पारद की समान मात्रा में तैयार कजली को, जारित पारद कहते हैं।

शिलाजीत—देह को निरोग और सुदृढ़ बनाने के लिये शिलाजीत सर्वोत्तम रसायन है।

रसोपरस — सूतेन्द्र रत्न — लोहेषु ये गुणाः।
वसन्ति ते शिलाधातौ जरा—मृत्यु—जिर्गपया।।

सब प्रकार के जीर्ण दुःखदायी रोग, मेदोवृद्धि और मधुमेह के लिये शिलाजीत को अति हित कर माना है। इसके अतिरिक्त चोट लगने पर, शिलाजीत का लेप भी किया जाता है। शिलाजीत के सेवन से अकाल मृत्यु का भय दूर होता है और आयु की वृद्धि होती है। यह बाल, युवा, वृद्ध, स्त्री, पुरुष, गर्भवती, प्रसूता सबके लिये लाभदायक है।

१० ग्राम शिलाजीत, ५० ग्राम, काली मिर्च, ५० ग्राम बादाम की मींग, १०० ग्राम देसी घी, २०० ग्राम शहद। शिलाजीत और काली मिर्च बारीक कूट लें फिर बादाम की मींग कूट कर मिला लें। देसी घी और शहद को मिलाकर उसमें ऊपर का चूर्ण मिला कर रख लें। नित्य ५ ग्राम लेने से अति उत्तम है। बादाम की मींग अमरीकन न हो।

सोऽयमायुर्वेदः शाश्वतो निर्दिश्यते
अनादित्वात्स्वभावसंसिद्ध लक्षणात्वाद्भा
वस्वभावनित्य त्वाच्च।।२४।।

चरक संहिता

आयुर्वेद शाश्वत है निरन्तर है इसका कभी क्षय नहीं होता। अनादि होने से और स्वभाव संसिद्ध लक्षण होने से और पदार्थों के नित्य स्वभाव होने से आयुर्वेद शाश्वत है। पाँचों तत्व (आकाश, वायु, अग्नि, जल, पृथ्वी) और उनकी तन्मात्रायें (शब्द, स्पर्श, रूप, रस, गन्ध) आदि हैं, उसी में ही आयुर्वेद भी समाहित हैं।

वैज्ञानिक उपलब्धियों में हर १०—१५ वर्ष के पश्चात् परिवर्तन होता रहता है, परन्तु आयुर्वेद के प्रतिपादित सिद्धान्तों में कभी परिवर्तन नहीं होता। □□

महन्त कृष्णानन्द

आर्य समाज मण्डी बाँस, मुरादाबाद का वार्षिकोत्सव दीपावली पर होता है, १९३१ के वार्षिकोत्सव पर प्रथम दिन कोई भी विद्वान् न आ सका, प्रात: कालीन सभा जैसे तैसे पूर्ण हुई, रात्रि की सभा को सफल बनाने के लिये किसरौल गंगा मन्दिर के महन्त कृष्णानन्द जी से तत्कालीन प्रधान जी मिले और उनसे रात्रि की सभा में उपदेश करने को कहा, महन्त कृष्णानन्द जी ने इसे स्वीकार किया और न्याय दर्शन पर ढाई घन्टे बराबर बोलते रहे।

गुरुकुल महाविद्यालय के स्नातक आयुर्वेदाचार्य श्री वैद्य आत्म स्वरूप जी से भी इस प्रसंग में चर्चा हुई। उन्होंने बताया, महन्त कृष्णानन्द जी गुरुकुल महाविद्यालय में १९१० से १९२४ तक न्याय दर्शन के अध्यापक रहे, उन्होंने कहा मैंने भी गुरुकुल में १९२० में प्रवेश किया था। मुरादाबाद के साहू श्याम सुन्दर जी ने गुरुकुल महाविद्यालय को इतना धन दिया था जिसके व्याज से प्रति वर्ष कक्षा दस और स्नात्कोत्तर परीक्षा में प्रथम उत्तीर्ण छात्र को एक—एक स्वर्ण पदक दिया जा सके, वह दोनों पदक मुझ (वैद्य आत्मस्वरूप) को प्राप्त हुये थे, जो आज तक मेरे पास सुरक्षित रखे हैं। श्री वैद्य जी ने बताया महन्त जी के पढ़ाने और समझाने का प्रकार बड़ा ही विचित्र था। एक बार कुछ छात्रों के साथ घूमने निकले, खेत के पास पहुँच कर खरबूजे खरीद कर सबको खिलाये पश्चात् छिलके और बीज गंगा में बहाने को छात्रों से कहा, छात्र छिलके और बीज गंगा में बहा आये। सब छात्रों को बैठाकर महन्त जी ने कहा—बच्चों तुम यह सिद्ध करो कि तुमने खरबूजे खाये हैं। इस प्रकार क्रियात्मक रूप से तर्क करने और उसका समाधान खोजने का बुद्धि में सामर्थ्य उत्पन्न होता है। १९२४ में गुरुकुल छोड़ कर महन्त कृष्णानन्द जी मुरादाबाद गंगा मन्दिर के महन्त बन गये थे।

श्री रमेश चन्द्र जी काण्डपाल (पी०एच०डी० योग) जो नगर मुरादाबाद में योग के एक अधिकारी विद्वान् माने जाते हैं। आपसे भी महन्त जी के विषय में चर्चा होने लगी उन्होंने बताया १९३३ में श्री गिरधर शर्मा महामहोपाध्याय जयपुर निवासी, सनातन धर्म सभा मुरादाबाद के कार्यक्रम में आये थे। सनातन धर्म सभा की ओर से इनके सम्मान में श्री गोपाल दत्त पंथ साहित्याचार्य (राजकीय माध्यमिक विद्यालय के अध्यापक) ने संस्कृत भाषा में एक सम्मान पत्र छापा था। महन्त कृष्णानन्द जी ने कहा 'सनातन धर्म' शब्द नहीं बनता, यह शब्द ही गलत है। सनातन धर्म में समास नहीं हो सकता, क्योंकि उसमें सामर्थ नहीं है। इस प्रकार 'सनातन' धर्म का विशेषण नहीं हो सकता। जैसे 'सनातन' तो सदा से रहने वाला है परन्तु 'धर्म' परिस्थिति जन्य होता है। इस विषय पर महन्त जी ने आर्य समाज की ओर से पं० गिरधर शर्मा जी को शास्त्रार्थ के लिये चुनौती दी, इस पर गिरधर शर्मा ने कहा आप न्यायिक हैं मैं आपसे शास्त्रार्थ करने में समर्थ नहीं।

इसके पश्चात् काशी में महन्त कृष्णानन्द जी से इसी विषय पर जोरदार शास्त्रार्थ हुआ, काशी का कोई भी विद्वान् पण्डित उन्हें परास्त नहीं कर सका। इस प्रतिभा से कुण्ठित और प्रतिशोधात्मक ज्वाला से दग्ध होकर काशी के पण्डितों ने महन्त कृष्णानन्द जी को रात्रि के समय दूध में विष देकर सदा—सदा के लिये काशी में ही सुला दिया। ☐☐

युक्ति युक्त समाधान

शंकर दूध भण्डार के स्वामी श्री दयाशंकर जी वास्तव में दयावान हैं, सबको दान देते ही रहते हैं। वे मेरे पास ४—६ मास में मिलने आ जाने की विशेष कृपा अवश्य करते हैं। एक बार श्री दयाशंकर जी ने एक पत्रिका में छपे लेख के बारे में चर्चा की। उसमें लिखा था कि गंगा तट पर एक विशाल भण्डारा हो रहा था, उसमें घी समाप्त हो गया, बाबा जी से कहा—घी समाप्त हो गया? बाबा जी

ने कहा—घी के दो पीपे आ रहे हैं। सहायक—महाराज उसके आने में बहुत देर हो जायगी। बाबा जी ने कहा—तुम दो पीपे गंगा जल लेकर कढ़ाओं में डाल दो, जब दो पीपे घी आ जाये तो उसे गंगा में बहाकर उसे वापिस कर देना। श्री दयाशंकर जी ने कहा—क्या यह सम्भव है?

मैंने कहा—लाला जी! यह घटना ही कपोल—कल्पित है। गर्म घी में पानी पड़ने से, एक दम आग लग सकती है, चारो ओर पानी की छींटें जाने से सबको हानि भी हो सकती है, इसमें कोई सत्यता नहीं दीखती। यदि बाबा जी के कहने से गंगा जल घी बन जाता है तो घी ही क्यों मंगवाया गया? गंगा जल से ही सारा काम हो सकता था। यह तो केवल अकल के अंधों को मूर्ख बनाने मात्र की ही बात है।

मैं आपको इसी प्रकार की एक सत्य घटना बताता हूँ। एक मौलाना का महात्मा अमर स्वामी जी महाराज से शास्त्रार्थ हो रहा था। वह हर बात पर परास्त होता गया। अन्त में उसने चिढ़कर कहा—स्वामी जी यदि आपका वेद सच्चा है तो आप उसे हाथ में लेकर आग में कूद पड़ो और मैं कुरान हाथ में लेकर आग में कूदता हूँ। पता लग जायगा कौन सच्चा है। अमर स्वामी जी ने कहा—मौलाना पहले आग में आप कूदें। मेरा वेद कहता है, अग्नि में जलाने की सामर्थ है, वह झूठी नहीं हो सकती वह तो सबको जला ही देगी, यदि कुरान में ऐसी कोई आयत हो तो दिखाओ कि आग अपना धर्म छोड़कर शीतल हो जाती है, तो आप आग में कूद कर दिखाओ। इस युक्ति के प्रहार को सुनकर मौलाना चुपचाप खिसक लिये और चारो ओर से तालियों की गड़गड़ाहट होने लगी।

इसी प्रकार कुछ कहते हैं, राम का नाम लेकर या खुदा का नाम लेकर सात मंजिल से कूद पड़ो पता चल जायगा कौन सच्चा, और कौन झूठा है। दोनों ही मर जायेंगे, कोई नहीं बचेगा। प्रकृति जड़ है, गलती करने पर वह किसी को क्षमा नहीं करती। चाहे वह किसी

भी देवी—देवता या पैंगम्बर का नाम अथवा उसका ग्रन्थ हाथ में लेकर ही क्यों न कूदें।

श्री दयाशंकर जी प्रसन्न होकर कहने लगे—वीरेन्द्र जी! आपने युक्ति युक्त रूप से मेरी जिज्ञासा का समाधान कर दिया। □□

मोक्ष प्राप्ति में कोई प्रतीक्षा नहीं

ब्रह्मचारी सत्यव्रत आर्य का सुन्दर नगर रायपुर छत्तीसगढ़ से एक पत्र आया—वेद उद्गीत पुस्तक प्राप्त करने के लिये। मैंने पुस्तक भेज दी। उसे पढ़कर मेरी अन्य सभी पुस्तकों को पढ़ने की इच्छा से मुझे पत्र लिखा और मैंने जो पुस्तकें मेरे पास उपलब्ध थीं वह सब भेज दीं। उसके पश्चात् ब्रह्मचारी सत्यव्रत आर्य जी का एक पत्र २८/६/२००३ को और मिला। उसमें कई शंकाओं का समाधान करने के लिये लिखा था। यह शंकाऐं योग परिणति के विषय में थीं। उनका समाधान उसी पुस्तक में है। उत्तर दे दिया। उसी से सम्बन्धित कुछ और प्रश्न भी थे वे इस प्रकार से हैं।

१— क्या मुक्ति सृष्टि के आदि में ही सम्भव है?

२— क्या मुक्ति केवल चार को ही मिलती है?

३— क्या मुक्ति का अधिकारी पाँचवाँ व्यक्ति नहीं होता?

४— क्या पाँचवें व्यक्ति की मुक्ति अगली सृष्टि के आदि तक रुकी रहती है?

व्यवहार में देखने में आना है कि प्राइमरी में बच्चों की बहुत भीड़ होती है। वह जैसे जैसे आगे बढ़ते जाते हैं, वैसे—वैसे भीड़ कम होती जाती है। शिक्षा के अन्तिम छोर तक पहुँचते—पहुँचते दो—चार ही छात्र शेष रह जाते हैं। इसी प्रकार मोक्ष मार्ग के पथिक भी केवल चार ही रह जाते हैं।

यह सत्य है कि मुक्ति सृष्टि के आदि में ही होती है। इन चारो प्रश्नों के पीछे एक मुख्य शंका यह बनी हुई है कि इतने लम्बे अन्तराल के पश्चात् ही केवल चार को ही मुक्ति मिलेगी। वास्तव में इस योग्यता तक पहुँचते—पहुँचते केवल चार ही पथिक शेष रह जाते हैं।

यह चन्द्रमा केवल हमारे भूमण्डल को ही प्रकाश नहीं देता परन्तु २७ और भूमण्डलों को अर्थात् हमारे भूमण्डल सहित २८ भूमण्डलों को प्रकाश देता है। इसे एक चन्द्र परिवार कहा जाता है। इसी प्रकार यह सूर्य ऐसे ऐसे सहस्त्रों चन्द्र परिवारों को प्रकाश देता है। इसे एक सूर्य परिवार कहा जाता है।

आकाश में आकाश गंगा है, यह सूर्य रेखा है, इसमें करोड़ों सूर्य परिवार हैं। क्या वह निरर्थक ही पड़े हैं? नहीं ऐसा नहीं है। परमात्मा की इस सृष्टि में कोई भी वस्तु निरर्थक नहीं होती। वैज्ञानिकों का कहना है कि आकाश में इस प्रकार की सहस्त्रौं आकाश गंगा हैं। यहाँ तो केवल अनुमान ही लगाया जा सकता है, कि संसार में कितने भूमण्डल हो सकते हैं कोई निश्चित बात नहीं कहीं जा सकती। मेरे अपने स्वयं के विचार से कम से कम अनुमानता ६२ नील २० खर्ब ८० अर्व के आस पास भूमण्डल माने जा सकते हैं। इस प्रकार नित्य ही एक अथवा दो नई सृष्टि का निर्माण होता ही होगा और इसी प्रकार नित्य ही एक अथवा दो सृष्टि की प्रलय भी होती ही होगी। इस प्रकार मोक्ष—गामी पथिक को कोई प्रतीक्षा नहीं करनी पड़ती। हम कह सकते हैं कि जब उसका ज्ञान पूर्ण हो जाता होगा तो उसे नई सृष्टि की रचना में परीक्षा हेतु भेज दिया जाता होगा।

इसी प्रकार यदि नित्य दो नई सृष्टियों का निर्माण होता होगा तो लगभग प्रति वर्ष २९२० महापुरुपार्थी दिव्य विभूतियों को मोक्ष की प्राप्ति का अनुमान तो लगाया ही जा सकता है।

इस प्रकार सिद्ध हो जाता है कि मोक्ष प्राप्ति में कोई प्रतीक्षा नहीं करनी पड़ती। समय आने पर मोक्ष प्राप्त हो ही जाती है। अन्य भूमण्डलीय ग्रहों में भी मानव उपस्थिति है। ऐसा तो अब विज्ञान भी मानने लगा है। ☐☐

जड़ पूजा

पंजाब नैशनल बैंक में वरिष्ठ प्रबन्धक के पद से, सेवा निवृत श्री राममुकुट गुप्ता जी, सात्विक वृत्ति के सरल स्वभाव और स्वाध्याय शील व्यक्तित्व के स्वामी हैं। आप वेद में रुचि रखते हैं, यदा कदा शंकाओं का समाधान भी कर लेते हैं। आपने मेरे सामने एक प्रश्न रखा कि जड़ पूजा क्या है?

समाधान — जड़ पूजा या जड़ उपासना यह दोनों एक ही हैं।

प्रश्न — इसको स्पष्ट करें, यह क्या है?

समाधान — पाषाण अर्थात् पत्थर की प्रतिमा आदि, सीमेन्ट गारे आदि से बनाई गई मूर्त्ति अथवा मिट्टी आदि से बनी मूर्त्ति आदि, काष्ट अर्थात् लकड़ी अथवा सुवर्ण, चाँदी, ताम्र लोह आदि धातु की बनी मूर्त्ति, वृक्ष, ग्रन्थ, समाधि अथवा कब्र आदि यह सब जड़ पूजा में ही आते हैं।

प्रश्न — इससे क्या कुछ हानि होती है?

समाधान — हाँ! हानि होती है।

प्रश्न — क्या?

समाधान — जब व्यक्ति को जड़ पूजा से कोई शान्ति, समाधान, आदि कुछ प्राप्त नहीं हो पाता तो वह नास्तिक बन जाता है।

प्रश्न — क्या इसका कोई शास्त्रीय प्रमाण है?

समाधान — अनेक शास्त्रीय प्रमाण हैं, उनमें से कुछ आपके सामने प्रस्तुत करता हूँ।

मन्त्र जाप के विषय में भविष्य पुराण उत्तर ०/१२२/९ में आता है —

वृथा जाप्यमवैदिकम्।

अवैदिक मन्त्रों का जाप करना निरर्थक है।

परमेश्वर का तिरस्कार करना बहुत भयंकर होता है। इस विषय में हम आपके सामने श्रीमद्भागवत—महापुराण गीता प्रेस गोरखपुर से प्रकाशित तेरहवाँ संस्करण से उद्धृत करते हैं।

अहं सर्वेषु भूतेषु भूतात्मावस्थित: सदा।
तमवज्ञाय मां मर्त्यः कुरुतेऽर्चाविडम्बनम्।।

भागवत स्कन्ध ३ अ०२९ श्लोक २१

मैं आत्मा रुप से सदा सभी जीवों में स्थित हूँ, इस लिये जो लोग मुझ सर्वभूतस्थित परमात्मा का अनादर करके केवल प्रतिमा में ही मेरा पूजन करते हैं, उनकी पूजा स्वाँग मात्र है। अर्थात् व्यर्थ है।

यो मां सर्वेषुभूतेषु सन्तमात्मानमीश्वरम्।
हित्वार्चा भजते मौढ्याद्भस्यन्येव जुहोति सः।।

भागवत ३/२९/२२

मैं सबका आत्मा, परमेश्वर! सभी भूतों में स्थित हूँ, ऐसी दशा में जो मोहवश मेरी उपेक्षा करके प्रतिमा के पूजन में ही लगा रहता है, वह तो मानो भस्म में ही हवन करता है।

नह्यम्मयानि तीर्थानि न देवा मृच्छिलामयाः।
ते पुनन्त्युरुकालेन दर्शनादेव साधवः।।

भागवत १०/८४/११

केवल जलमय तीर्थ ही तीर्थ नहीं कहलाते और केवल मिट्टी या पत्थर की प्रतिमायें ही देवता नही होतीं। सन्त पुरुष ही वास्तव में तीर्थ और देवता हैं।

पाखण्डी लोग इस श्लोक का अर्ध भाग ही को पढ़कर अर्थ करते हैं "सन्त पुरुष ही वास्तव में तीर्थ और देवता हैं" कहकर अपने को पुजवाते हैं।

यस्यात्मबुद्धिः कुणपे त्रिधातु के स्वधीः कलत्रादिषु भौम इज्यधीः।
यत्तीर्थबुद्धिः सलिलेन कर्हिचिज्जनेष्वभिज्ञेषु स एव गोखरः।।

भागवत १०/८४/१३

महात्माओं और सभासदों! जो मनुष्य वात, पित्त और कफ इन तीनों धातुओं से बने हुए शव—तुल्य शरीर को ही आत्मा अपना 'मैं' स्त्री—पुत्र आदि को ही अपना और मिट्टी, पत्थर, काष्ट आदि पार्थिव विकारों को ही इष्टदेव मानता है तथा जो केवल जल को ही

तीर्थ समझता है—ज्ञानी महापुरुषों को नहीं, वह मनुष्य होने पर भी पशुओं में भी नीच गधा ही है।

भागवत महापुराण ने भी परमेश्वर के अतिरिक्त अन्य सभी उपास्यों का त्याग करके केवल एक परमेश्वर की ही उपासना करने पर बल दिया है।

वेदान्तदर्शन के प्रवर्तक महर्षि वेद व्यास जी महाराज, का इसमें स्पष्ट निर्देश है—

न प्रतीके न हि सः।।

वेदान्त दर्शन ४/१/४

मूर्त्ति आदि जड़ पदार्थ में परमात्म बुद्धि न करे, क्योंकि मूर्त्ति परमात्मा नहीं है।

न तस्य प्रतिमा अस्ति।।

यजुर्वेद ३२/३

उसकी कोई प्रतिमा नहीं।

प्रतिमा किसी आकार की होती है, आकार शरीर का होता है। जिसका कोई आकार नहीं, जिसका कोई शरीर नहीं तो उसकी प्रतिमा कैसे बन सकती है। परमात्मा आकार रहित निराकार है, शरीर रहित अजन्मा है। इस प्रकार परमात्मा की कभी कोई प्रतिमा मूर्ति आदि नहीं हो सकती।

प्रश्न—गायत्री माता की पूजा करना तो सही है?

समाधान—नहीं। गायत्री माता की कोई मूर्ति नहीं, और न गायत्री माता है।,

प्रश्न—शान्तिकुञ्ज वालों ने तो गायत्री माता की मूर्ति बनाई है?

समाधान—गायत्री एक मन्त्र है, जो ऋग्वेद, यजुर्वेद, सामवेद में आता है और अथर्ववेद में उसकी महिमा का वर्णन है। इस मन्त्र का अर्थ है "वह सविता देव परमात्मा, सबका पालन करने वाला है, जो वरण करने योग्य है, वह परमात्मा हमारी बुद्धि को सन्मार्ग पर लगाये।" इसके अर्थ में अथवा मन्त्र के किसी भी शब्द में स्त्री लिंग सूचक कोई शब्द नहीं। तो फिर यह माता कैसे बन गई। यह कल्पना की ही उड़ान है। वेद का हर मन्त्र छन्द में है। गायत्री भी एक छन्द

है। जिसमें २४ अक्षर होते हैं। वेद में सहस्त्रों गायत्री छन्द हैं। अथर्ववेद महिमा के अनुसार जिस गायत्री छन्द के अन्त में 'प्रचोदयात्' पद आता है वही द्रजों के भजने योग्य है।

प्रश्न—इसी अथर्ववेद महिमा मन्त्र में गायत्री को वेद माता भी कहा है। क्यों?

समाधान—प्रथम वेद ऋग्वेद है उसका पहला मन्त्र, वर्णमाला के पहले अक्षर (अ) से ही प्रारम्भ होता है।

अग्नि मीळे पुरोहितं यज्ञस्य देव मृत्विजम्।
होतारं रत्नधातमम्।।

यह मन्त्र भी गायत्री छन्द में है। वेद का प्रारम्भ गायत्री छन्द से हुआ है इसी कारण गायत्री छन्द को अथर्ववेद महिमा में वेदमाता कहा है।

प्रश्न—क्या गायत्री की पूजा और जाप निरर्थक है?

समाधान—गायत्री माता की मूर्त्ति बनाकर उसकी पूजा करनी निरर्थक है। गायत्री मन्त्र का जाप करना उसके अर्थों पर विचार करना, और अपने व्यवहार और आचरण में लाना अत्यन्त लाभदायक है। मैंने इसे गायत्री साधन पुस्तक में विस्तार से लिखा है।

प्रश्न—फिर उपासना किसकी, की जाय?

समाधान—वेदान्त दर्शन में आता है।

आत्मेति तूपगच्छन्ति ग्राहयन्ति च।।

वेदान्त दर्शन ४/१/३

उपासना का विषय सर्वव्यापक परमात्मा है। ज्ञानी और ध्यानी उसे प्राप्त करते और दूसरों को प्राप्त कराते हैं।

आसीनः सम्भवात्।।

वेदान्त दर्शन ४/१/७

शान्ति से आसन लगाकर उपासना करनी चाहिये, क्योंकि बैठकर ही उपासना करना ठीक—ठीक संभव है।

ध्यानाच्च।।

वेदान्त दर्शन ४/१/८

ध्यान से भी यही निश्चय होता है कि उपासना बैठकर ही करनी चाहिये। (ध्यान से उपासना होती है और ध्यान आसन की अपेक्षा रखता है, और आसन बैठकर ही लगता है।)

महाभारत वनपर्व अध्याय ३१३ में यक्ष और युधिष्ठिर का सम्वाद है, उसमें यक्ष के प्रश्न ९ का उत्तर इस प्रकार युधिष्ठिर ने दिया—

मत्स्य: सुप्तो न निमिषत्यण्डं जातं न चो पति।
अश्मनो हृदयं नास्ति नदी वेगेन वर्धते।।

मछली सोने पर भी आँख नहीं मूँदती, अण्डा उत्पन्न होकर भी चेष्टा नहीं करता, पत्थर में हृदय नहीं होता और नदी वेग से बहती है।

"पत्थर की प्रतिमा आदि कोई भी रूप हो, उसमें हृदय नहीं है, अर्थात् पाषाण प्रतिमा आदि पर हम पुष्प, अक्षत अर्थात् चावल, रोली आदि से सम्मानित अर्थात् पूजन करें तो वह प्रसन्न नहीं होता और न करें तो वह क्रोधित भी नहीं होता।"

प्रश्न ११ के उत्तर में कहा—"अविनाशी नित्यधर्म ही सनातन धर्म है।" प्रश्न १६ के उत्तर में—"वेदोक्त धर्म नित्य फलवाला है।" प्रश्न २६ के उत्तर में कहा—"अपने आदि वेदोक्त ध र्म में स्थिर रहना ही स्थिरता है।"

आपके इन सब प्रमाणों से सिद्ध होता है कि पाषाण, प्रतिमा आदि किसी भी प्रकार की जड़ पूजा में कोई सारता अथवा सार्थकता आदि कुछ नहीं दीखती।

एक और प्रत्यक्ष स्वरूप—हम देखते हैं, प्रत्येक व्यक्ति के शयन कक्ष में अपने इष्ट देव, माता, पिता, गुरु आदि के चित्र लगे रहते हैं। वहुतों के यहाँ इष्ट देव की प्रतिमा भी एक आले में सजाकर स्थापित होती है और वहाँ पर एक छोटा सा बल्ब भी जलता रहता है। शयन समय पर किसी भी समय वासना के जागृत होने पर, सहवास की इच्छा होने लगती है, तो हम उस अवसर पर ८—१० मास के अबोध बालक के सो जाने की प्रतीक्षा करते हैं, जो अभी कुछ जानता भी नहीं। उसके सो जाने के पश्चात् हम सहवास में लिप्त हो जाते हैं।

शयनागार में इष्ट देव की प्रतिमा रखी है, उसके आगे वल्ब भी जल रहा हैं, इष्ट देव, माता, पिता, गुरु आदि के चित्र भी लगे हैं, परन्तु इन सबके होने पर हमें सहवास में कोई संकोच नहीं लगता। प्रश्न उठता है, क्यों? मन्तव्य स्पष्ट है कि वह सब जड़ हैं, यह हमारे सहवास के कृत्य को नहीं देख रहे, हाँ! जो चेतन है, अबोध है, जो अभी कुछ नहीं जानता है, वह हमारे कृत्य को न देखे, उसे सुला दिया।

इस स्वरूप से भी जड़ पूजा का मूल्यॉकन कर सकते हैं।

स्वामी विवेकानन्द की उक्ति दी जाती है, एक सेठ जो मूर्ति पूजा को नहीं मानता था, उस सेठ से विवेकानन्द ने कहा—यह जो आपके पिता जी का चित्र लगा है, उसे उतार कर लाओ, और उस पर 'थूक दो' सेठ ने मना कर दिया। विवेकानन्द ने कहा—यही मूर्ति पूजा का मूल्यॉकन है। इससे स्वत: स्पष्ट होता है कि चित्र मूर्ति आदि ''हेत्वा भाव है''। हेतु से तो कुछ कहा भी जा सकता है, भाव रूप मूर्ति, चित्र आदि से क्या कहना। क्यों अनादर किया जाय? क्योंकि वह सबका सम्मान करता है। सम्मान करने का अर्थ पूजना नहीं होता। हाँ जिस कमरे में पिता का और विवेकानन्द का चित्र लगा है, उस कमरे में सहवास के समय कुछ भी संकोच नहीं करेगा। इन दोनों का अर्थ आप लगा लें, क्या है?

रामकृष्ण मिशन द्वारा प्रकाशित स्वामी विवेकानन्द के प्रमाणित जीवन चरित्र में स्पष्ट लिखा है कि—अन्तिम दिनों में स्वामी विवेकानन्द ने कहा था—''मेरी इच्छा यह थी कि एक तो ऐसा मन्दिर हो जहाँ मूर्तियाँ न हों''।

अन्त समय के इन उद्‌गारों में स्वामी विवेकानन्द ने अपने पूर्व के पाषाण—पूजा समर्थक विचारों का सर्वथा स्वयं ही खण्डन कर दिया। चाटुकारों ने स्वामी जी के अन्तिम विचारों को त्याग कर 'बैलूरमठ' में भी मूर्तियाँ रख दीं।

स्वामी विवेकानन्द जी का पूर्व नाम नरेन्द्र था। जिस समय गुरुदेव महर्षि दयानन्द सरस्वती जी महाराज कलकत्ता गये थे। एक रात नरेन्द्र ने ऋषिवर का पीछा किया, कि वह क्या—क्या करते हैं।

नरेन्द्र ने देखा—प्रात:काल ऋषिवर उठे शौच को गये, व्यायाम किया, स्नान करके कुटिया में आये और ध्यान मग्न समाधि में बैठ गये। अभी चारो ओर अन्धकार ही अन्धकार था। नरेन्द्र ने कुटिया में झाँककर देखा, तो वह भौंचक्का सा रह गया, उस अंधेरी कुटिया में देखा, योगेश्वर दयानन्द का शरीर ताँम्बे के समान चमक रहा है। नरेन्द्र ने इस बात की चर्चा अपने गुरु रामकृष्ण जी से की, रामकृष्ण जी के मुख से सहसा निकला, अखण्ड ब्रह्मचारी और योगी का शरीर ऐसे ही चमकता है। इस उत्तर को सुनकर नरेन्द्र के मुख से भी सहसा निकल पड़ा कि मैं उनका शिष्य बनूँगा। नरेन्द्र के इस उत्तर को सुनकर रामकृष्ण के पैरों तले की जमीन खिसक गई, और मन ही मन सोचा कि यह कहीं मेरे हाथ से न निकल जाये। इस विचार के आते ही रामकृष्ण ने नरेन्द्र को उन दिनों ऐसा व्यस्त रखा कि उसे एक मिनट का समय नहीं मिला जो ऋषिवर से जाकर मिल सके। नरेन्द्र को बहुत समय तक इसका पश्चाताप् रहा कि मैं उस महान योगी से क्यों नहीं मिला? ◻◻

भारत चन्द्र

श्री भारत चन्द्र गुप्ता जी नित्य प्रात: काल शुद्ध वायु सेवन के लिये घूमने जाते हैं। वह घर से जाते समय किसी से नहीं बोलते, मन ही मन गायत्री मन्त्र का जाप करते रहते हैं। लौटते समय कुछ चर्चायें होने लगती हैं। स्वाध्याय प्रेमी हैं। पाश्चात्य दार्शनिक यह मानते हैं कि जीवात्मा और परमात्मा कुछ नहीं है, केवल प्रकृति ही है। दो वस्तुओं के मिलने से तीसरी वस्तु का निर्माण हो जाता है। एक दार्शनिक ने तो यहाँ तक कह दिया कि अब परमात्मा की मौत हो गई, वह बेकार चीज था। कई दिनों से इन बातों पर मनन चिन्तन चल रहा था। इसी बीच एक प्रसंग और सामने आया कि भैंस का गोबर और दही मिलाने से उसमें बिच्छू पैदा होने लगते हैं। ऐसा क्यों हो जाता है? भारत चन्द्र गुप्ता जी ने श्री चिम्मन लाल निझावन जी से भी प्रात: काल लौटते समय यह चर्चा की। निझावन जी ने कहा—इस

विषय में हम कुछ नहीं जानते। इस पर गुप्ता जी ने कहा—आप तो हरथला आर्य समाज के प्रधान रहे हैं। इस शंका का समाधान आप नहीं करेंगे तो और कौन करेगा? निझावन जी ने कहा—आप किसी विद्वान् से मिलिये। गुप्ता जी ने कहा—किससे! निझावन जी इस पर भी मौन रहे।

२६ अप्रैल २००३ शनिवार के दिन श्री भारत चन्द्र जी गुप्ता मेरी दुकान पर आये और उक्त सारी चर्चा मेरे सामने रखी और कहा—यह हमारी समझ से बाहर की बात हो रही है, आप ही इसका समाधान करें। मैंने कहा—निझावन जी एक सरल स्वभाव और आस्तिक व्यक्ति हैं। उनका इतना स्वाध्याय नहीं जो आपकी शंका का समाधान करते। गुप्ता जी ने कहा—आप ही समाधान करें कि गोबर और दही मिलकर बिच्छू कैसे पैदा हो जाते हैं, और उनमें जीव कहाँ से आ जाता है?

समाधान—यह बात सही है कि दो जड़ वस्तुओं के मिलाने से तीसरी जड़ वस्तु का निर्माण हो जाता है, जैसे चूना और हल्दी को मिलाने से तीसरी वस्तु 'रोली' बन जाती है। इसी प्रकार भैंस का गोबर और दही मिलाने मे बिच्छू बन जाते हैं।

गुप्ता जी—रोली तो जड़ रही, परन्तु चेतन बिच्छू कैसे बन गया, उसमें जीव कहाँ से आ गया?

समाधान—पहली बात तो यह है कि, दो जड़ वस्तुऐं अपने आप नहीं मिलतीं उन्हें तीसरा चेतन जीव ही मिलाता है, जैसे गोबर और दही पास—पास पड़े हों तो बिच्छू नहीं बनेगा वह दोनों आपस में स्वयं नहीं मिल सकते, उन्हें मिलाने वाला तीसरा चेतन का होना अनिवार्य है, तभी बिच्छू बनेगा अन्यथा नहीं। इसी प्रकार पाँचों तत्व जड़ हैं, वे स्वयं आपस में नहीं मिल सकते, उन्हें मिलाने वाली चेतन सत्ता चाहिये, और वह चेतन सत्ता है परमेश्वर। बिना उसकी सत्ता को स्वीकार किये प्रकृति एक पग भी आगे नहीं बढ़ सकती। उस सत्तावान परमेश्वर की परम सत्ता को नकारना एक मूर्खता की ही बात है।

गुप्ता जी—आपकी यह बात बिलकुल सही है, परन्तु वहाँ जीव कहाँ से आ जाता है?

समाधान—दही! वास्तव में सफेद रंग के बारीक—बारीक कीटों का एक समूह ही है। आप दही को 'खुर्दवीन' से देखेंगे तो आपको पता चलेगा कि छोटे—छोटे सहस्रों कीट ही हैं। वही कीट गोबर के अन्य सहयोगी कीटों से मिलकर बिच्छू रूप ही बन जाते हैं। इसीलिये वेद ने सन्तति वृद्धि में रजः—वीर्य की चर्चा नहीं की है। मोर मोरनी की रति न होने का उदाहरण उपस्थित है।

वेद की व्यवस्था सार्वभौम होती है, सब के लिये समान होती है, कहीं कोई अन्तर नहीं होता। इसी कारण वेद ने रजः—वीर्य के स्थान पर "योषः वृषः" का प्रयोग किया है।

गुप्ता जी—यह "योषः वृषः" क्या चीज है, हमने तो अब से पहले यह शब्द ही नहीं सुना था?

समाधान—'योषः' अर्थात् जल तत्व 'वृषः' अर्थात् पृथ्वी तत्व। इसका मन्तव्य यह है कि जल तत्व और पृथ्वी तत्व के मिलन से सृष्टि की रचना होती है। जहाँ—जहाँ जब—जब यह दोनों तत्व मिलते हैं, सृष्टि की रचना होने लगती है। जिस प्रकार वर्षा ऋतु में किसी पोखर आदि स्थान पर जब जल जमा हो जाता है तो वहीं मच्छर उत्पन्न होने लगते हैं।

बाइबल उत्पत्ति प्रकरण १/२ में आता है, "परमेश्वर का आत्मा जल के ऊपर मण्डराता था।"

इसी प्रकार पुराणों में भी आता है कि "क्षीर सागर में भगवान विष्णु शेष नाग की शय्या पर विराजमान हैं।"

पाराशर गृह सूत्र १/६/३ में अंजलि ग्रहण करने पर वर ने कहा "द्यौरहं पृथिवी त्वं" अर्थात् वर ने कहा—मैं द्यौ अर्थात् जल से परिपूर्ण आकाश हूँ और तू पृथिवी गर्भ धारण करने वाली है।

दोनों सन्दर्भ आंशिक संकेत देते हैं और तीसरा सन्दर्भ स्पष्ट संकेत दे रहा है कि "योषः" जल तत्व के साथ ही गगन मण्डल से जीव जल के ही द्वारा भूमि पर आता है।

श्री चिम्मन लाल निझावन जी ने अपने ज़ीवन की एक घटना सुनाई, उसे हम यहाँ प्रस्तुत करते हैं। जिला बिजनौर में सिसौना रेलवे स्टेशन की स्थापना ११ नवम्बर १९५२ को हुई थी। उस स्टेशन पर पहली नियुक्ति श्री चिम्मन लाल निझावन की हुई थी। पति–पत्नि और तीनों बच्चे वहीं पर रहते और हम सब रात्रि को वहीं शयन करते थे। उस स्टेशन पर अभी बिजली नहीं लगी थी, केवल लैम्प के प्रकाश में ही सारा काम होता था। निझावन जी ने कहा–३१ जौलाई १९५७ की रात्रि को मैं चारपाई पर सो रहा था, बराबर में पत्नी भी दूसरी चारपाई पर सो रही थीं, पास में एक मेज पर लैम्प रखा था, उसकी बत्ती नीची थी। मुझे ऐसा लगा कि सोते–सोते किसी ने मेरे कन्धे को जोर से हिलाते हुये कहा–आपकी चारपाई पर सर्प है। मैं घबरा गया, मेरे अन्दर इतना भी साहस नहीं था कि मैं लैम्प की बत्ती को ऊँचा कर दूँ। पत्नी की आँख खुली उसने लैम्प की बत्ती को तेज किया, मैंने देखा मेरी खाट पर सर्प था, मैं बहुत घबरा गया और गायत्री मन्त्र का जाप करने लगा। जाग हो गई दूसरे कर्मचारी भी आ गये सर्प खाट से उतर कर भागने लगा, अन्य दो कर्मचारियों ने सर्प को मार दिया, सर्प लगभग दो तीन फुट लम्बा था।

निझावन जी ने इस घटना की चर्चा हरथला रेलवे कालोनी आर्य समाज के सत्संग में भी की। इस पर महावीर सिंह मुमुक्षु ने कहा–ऐसे चमत्कार असत्य ही होते हैं, मैं इसे नहीं मानता। जब सत्य निष्ठ श्री निझावन जी ने मुझे यह घटना सुनाई तो मैंने कहा–यह चमत्कार नहीं! यह तो उस सर्वरक्षक परमात्मा का सर्वव्यापक रूप से निर्देश ही है।

जो गायत्री का जाप करता है तो उसमें निकली तरंगे सारे शरीर में धनञ्जय प्राण के समान व्यापक होकर फैल जाती हैं और वही तरंगे रक्षात्मक रूप भी धारण कर लेती हैं। □□

पाप क्या है?

जिला फरोखाबाद में स्थित कायमगंज में हमारे मौसा श्री लक्ष्मी नारायण जी आर्य रहते हैं, उनके कनिष्ठ पुत्र श्री शिव शंकर जी मुझसे छोटे हैं, परन्तु उन्होंने वानप्रस्थ लेकर मुझे पीछे छोड़ दिया, अब वह शंकर मुनि के नाम से पहचाने जाते हैं। वह कभी--कभी मुरादाबाद आकर मुझसे अपनी शंकाओं का निवारण करते रहते हैं। इस बार उन्होंने कहा--"पाप क्या है?" इसे विस्तार से समझाइये।

मैंने कहा--मेरे विचार से पाप तीन प्रकार का प्रमुख है।

शंकर मुनि--वह कौन--कौन से हैं।

उत्तर-- १ पर स्त्री गमन, २--पापार्जित धन का संग्रह ३--मांसाहार

शंकर मुनि--इन्हें पाप समझना हम मानवों की ही तो मान्यता है? क्या कोई शास्त्रीय मान्यता भी है।

उत्तर --

परदारान्न गच्छेच्च मनसापि कथञ्चन।
किमु वाचास्थिबन्धोऽसि नास्ति तेष व्यवायिनाम।।

विष्णु पुराण ३/११/१२३

पर स्त्री से तो वाणी से क्या मन से भी प्रसंग न करे क्योंकि उससे मैथुन करने वालों को अस्थि बन्धन भी नहीं होता अर्थात् उन्हें अस्थि शून्य कीटादि होना पड़ता है। यही अवस्था स्त्री की होती है।

विष्णु पुराण में मन, वचन और कर्म तीनों से परस्त्री गमन का निषेध किया है।

न ही दृशमनायुष्य लोके किञ्चन विद्यते।
यादृशं पुरुषस्येह परदारोपसेवनम्।।

मनु ४/१३४

इस प्रकार का आयुक्षय करने वाला संसार में कोई कर्म नहीं है (जैसा मनुष्य की आयु घटाने वाला) दूसरे की स्त्री का सेवन अथवा स्त्री के लिये दूसरे पुरुष का सेवन है।

मनु जी महाराज ने भी इस पाप कर्म का निषेध किया है।

शंकरमुनि—इस से बचने का क्या रूप है?

उत्तर—

मातृवत्परदारांश्च परद्रव्याणि लोष्ठवत्।
आत्मवत्सर्व भूतानि यः पश्यति सा पश्यति।।

चाणक्य नीति १२/१३

दूसरों की स्त्रियों को माता के समान, दूसरे के धन को लोह अथवा मिट्टी के समान और अपने समान सब प्राणियों को देखता हैं। वही ठीक देखता है।

चाणक्य ने अपने इस सूत्र में, स्त्री, धन और व्यवहार तीनों की विवेचना की है।

शंकर मुनि—पापार्जित धन से क्या अभिप्राय है?

उत्तर — व्यापार में जैसा माल दिखाये वैसा ही दें, नाप, तोल, गिनती, रेट का जोड़ घटाना आदि में कोई हेर फेर न हो, असली के स्थान पर नकली वस्तु का न देना, अपने उत्तर दायित्व को समझना। यदि आप अध्यापक हैं, तो कक्षा में विद्यार्थियों को पूरा कोर्स पढ़ाना, यह इच्छा न करना कि वह मुझ से ट्यूशन पढ़े, कक्षा की जो फीस लें उसकी पूरी रसीद देना आदि सभी कार्य ऐसे हैं जो ध्यान पूर्वक करना चाहिये। इसके विपरीत करना अर्थात् अर्थ प्राप्ति के लोभ में आकर हर जगह पर बेईमानी की सोचना पाप कर्म है। उसके द्वारां जो धन प्राप्त किया है वह पापार्जित धन ही है। ऐसे अर्जित धन से पोषित सन्तान माता पिता के रक्त की प्यासी तक बन जाती है।

अन्यायोपार्जितं द्रव्यं दशवर्षाणि तिष्ठति।
प्राप्ते चैंकादशे वर्षे समूलं च विनश्यति।।

चाणक्य १५/६

अनीति से अर्जित धन दस वर्ष पर्यन्त ठहरता है, और ग्यारहवें वर्ष के प्राप्त होने पर मूल सहित नष्ट हो जाता है। अर्थात् अन्याय का धन थोड़े ही दिन रहता है।

बिना श्रम किये कुछ भी खाना महापाप है। बिना श्रम अथवा बिना मूल्य की मिली खीर से अपने श्रम का रुखा—सूखा टुकड़ा अति श्रेष्ठ है।

किसी भी कार्यालय में कार्यरत रहते हुये, यदि वह बीमारी आदि के बहाने से अवकाश लेकर समाज के उत्सवों में जाकर भरपूर दक्षिणा प्राप्त करता है, तो यह पाप है। अथवा पेशंन प्राप्त करते हुये भी, उत्सवों में जाकर समाज के पैसे को लेकर शोषण करता है तो यह भी पाप है। ऐसा करने वाले जरा विचार करें, क्या वह अपने आपको, समाज को अथवा परमात्मा को धोखा तो नहीं दे रहे? जीवन में सब कुछ पैसा ही नहीं होता है।

२००५ का प्रत्यक्ष फल—अन्तराष्ट्रीय संस्था से जुड़ा व्यक्ति, संस्था की दुकानों की पगड़ी रूप से प्राप्त सात लाख रूपये हजम कर जाता है, दूसरा भागीदार जब आपत्ति करता है तो कहता है कि मैंने खा लिया, मुझे भी अपने बच्चे पालने हैं। एक लड़का वकील है, दूसंरा भी कुछ कर रहा है, दोनों के लिये पक्के मकान बना दिये।
परिणाम निकला दोनों ने माता—पिता को अपने पास से हटा दिया। संस्था के भवन में आकर शरण ली और कह दिया कि अब मैंने शेष जीवन संस्था को दान कर दिया। छलकपट की बात हर जगह उपस्थित है और पापार्जित धन से पोषित सन्तान के व्यवहार का उदाहरण भी। धर्म के मर्म को नहीं जाना।

एक कहावत आती है ''धन गया कुछ नहीं गया, स्वास्थ्य गया कुछ गया, चरित्र गया सब कुछ गया'' इसी सन्दर्भ को महाभारत में कहा हैं।

वृत्तं यत्नेन संरक्षेत् वित्तमायाति याति च।
अक्षीणो वित्ततः क्षीणं, वृत्ततस्तु हतो हतः।।

चरित्र को यत्न से रक्षित करना चाहिये, द्रव्य आता है और जाता है। धन से रहित व्यक्ति क्षीण नहीं होता, चरित्र से हीन व्यक्ति नष्ट हो जाता है।

शंकर मुनि—मांसाहार से आपका क्या मतलब है? क्या मांसाहार उचित नहीं?

उत्तर—मांसाहार उचित ही नहीं परन्तु अनावश्यक भोज्य पदार्थ है।

शंकर मुनि—क्या यह हानिकारक है?

उत्तर—मांसाहार, बिना हत्या के प्राप्त नहीं होता। मांसाहार हेतु किसी की हत्या करना महा पाप है। मांसाहार से वासना बढ़ती है, वासना पूर्ति से पाप बढ़ता है, पाप के बढ़ने से चरित्र का हनन होता है। और जब चरित्र का ही हनन हो गया तो सर्वनाश हो जाता है।

अनागो—हत्या वै भीमा।। (अर्थवेद)

निरापराधी की हत्या बहुत भयंकर होती है।

पुष्यति न देवासः कवत्नवे।। (ऋग्वेद)

देव दुष्कर्मियों की सहायता नहीं करते।

नाधर्मश्चरितो लोके सद्यः फलति गौरिव।
शनैरावर्त्तमानस्तु कर्त्तुर्मूलानि कृन्तति।। (मनु)

किया हुआ अधर्म निष्फल कभी नहीं होता परन्तु जिस समय अधर्म करता है उसी समय फल भी नहीं होता। इसी लिये अज्ञानी लोग अधर्म से नहीं डरते। तथापि निश्चय जानो कि वह अधर्माचरण धीरे—धीरे तुम्हारे सुख के मूलों को काटता चला जाता है।

शंकर मुनि—आपने तो सभी बातों को स्पष्ट कर दिया आपका अध्ययन बहुत है। हमने आज तक इतनी बातों को किसी से सुना तक नहीं जो आपने बताई। वास्तव में यह तीनों कर्म घोर पाप कर्म हैं, इनका त्याग करना ही अच्छा है। ☐☐

सात्विक आय

मुरादाबाद इन्टर कालेज के उप–प्रधानाचार्य श्री रामकुमार जी अत्यन्त सीधे, सौम्य, अनुशासित और सरल स्वभाव के अध्यापक रहे हैं। वह विद्यार्थियां और अपने बच्चों को संस्कार वान बनाने की दिशा में सदैव सजग रहे हैं। आपके तीन पुत्र और एक पुत्री है। सबके विवाह हो चुके हैं। उनका एक पुत्र प्रदीप कुमार, अध्यापक–ट्रेनिंग कालेज चाँदपुर में पुस्तकालय अध्यक्ष के स्थान पर कार्यरत है, नित्य नैहटौर से चाँदपुर आना जाना होता है। प्रदीप कुमार ने नैहटौर में अपना आवास बना लिया है, उसके उद्‌घाटन में श्री राम कुमार जी नैहटौर गये। भोज के समय थाना इन्चार्ज नैहटौर ने आकर श्री राम कुमार जी से सादर नमस्ते की और कहा–मैं आपके दर्शनार्थ आया हूँ। राम कुमार जी ने कहा–मैंने आपको नहीं पहचाना? पास में खड़े प्रदीप कुमार ने कहा पिता जी! यह नैहटौर के थाना इन्चार्ज हैं। श्री राम कुमार जी ने प्रसन्न होते हुये कहा–किस उपलक्ष्य में आपने मुझे इतना सम्मान दिया। इन्चार्ज महोदय ने कहा–मैं आपके पुत्र से बहुत प्रभावित हूँ, यह मेरी बच्ची को पढ़ाते हैं, उन्होंने मुझसे एक बड़ी विचित्र बात कही।

रामकुमार जी–क्या कहा था? कोई अनुचित बात तो नहीं कही?

थाना इन्चार्ज महोदय ने कहा–आपके पुत्र ने कहा मैं पढ़ा सकता हूँ परन्तु एक शर्त है कि आप मुझे पढ़ाई का पारिश्रमिक अपने सात्विक वेतन में से ही देंगे, नहीं तो मैं नहीं पढ़ा सकूँगा! मैं इस शर्त को सुनकर दंग रह गया? उसे स्वीकार कर सोचने लगा, जिस पिता ने इतने ऊँचे आदर्श को प्राप्त करने की शिक्षा दी होगी, वह कितने महान होंगे? इसी भावना के वशीभूत होकर आपके दर्शनों की कामना को लिये बहुत समय से प्रतीक्षा कर रहा था, सो आज यह सौभाग्य मुझे प्राप्त हो गया।

इन्चार्ज द्वारा अपने पुत्र की इस भावना को सुनकर श्री राम कुमार जी मन ही मन अति प्रसन्न हो रहे थे, और अपनी दी गई शिक्षा की सफलता को सार्थक सिद्ध होते देख रहे थे। □□

शान्ति की कामना

द्यौः शान्तिरन्तरिक्षं ७ शान्तिः पृथिवी शान्तिरापः
शान्ति रोषधयः शान्तिः। वनस्पतयः शान्तिर्विश्वेदेवः।
शान्तिर्ब्रह्म शान्तिः सर्व ७ शान्तिशान्तिरेव
शान्तिः सा मा शान्तिरेधि।।

यजुर्वेद ३६/१७

१. द्यौ, २. अन्तरिक्ष, ३. पृथिवी, ४. आपः—जल, ५. औषध्य, वनस्पत्यः, ७. विश्वेदेवः, ८. ब्रह्म, ९. सम्पूर्ण वस्तुओं से शान्ति ही शान्ति मुझको प्राप्त होवे।

इस मन्त्र में कई शंकायें उपस्थित हो जाती हैं। जैसे 'द्यौ' 'अन्तरिक्ष' यह दोनों शब्द एक साथ क्यों आये, दूसरे 'ब्रह्म शान्ति' अन्त में क्यों? यह तो सबसे पहले होनी चाहिये।

वेद के मन्त्रों में कोई भी शब्द पर्यायवाची नहीं होता, हर शब्द का अलग ही अर्थ होता है, यहाँ पर भी द्यौ और अन्तरिक्ष एक अर्थ वाची नहीं, अलग—अलग अर्थ वाची हैं। 'द्यौ, का अर्थ समस्त ब्रह्माण्ड के हैं, जिसमें न्यूनतम ६२ नील, २० खर्ब, ८० अर्ब के लगभग भूमण्डलों के होने का अनुमान लगाया जा सकता है, और उन सबमें मानव जीवन की उपस्थिति है। इसकी चर्चा मैंने 'ईश महिमा' पुस्तक के 'मोक्ष प्राप्ति में कोई प्रतीक्षा नहीं' प्रकरण में विस्तार से दी है। प्रश्न उठता है कि यह गणना किस प्रकार से निकाली गई। एक सृष्टि की आयु ४ अर्ब ३२ करोड़ वर्ष की है। यह एक ब्रह्म दिन कहलाता है, इतने ही समय की ब्रह्म रात्रि होती है, इन दोनों को मिला कर ३६० से गुणा करके उसके दिन बन जाते हैं, उसका दुगना कर देने पर यह गणना निकाली है। यह सब मेरा

अपना अनुमान मात्र है। इसी को 'द्यौ' लोक कहा जाता है। अपने भूमण्डल के गुरुत्वाकर्षण के बाहर के क्षेत्र को 'द्यौ' कहा जाता है, और गुरुत्वाकर्षण के अन्दर के क्षेत्र को 'अन्तरिक्ष' कहा जाता है। इसी कारण से वेद मन्त्र में दोनों को पृथक—पृथक दर्शाया है।

यस्य भूमिः प्रमान्तरिक्षमुतोदरम्।
दिवं यश्चक्रे मूर्धानं तस्मै ज्येष्ठाय ब्रह्मणे नमः।।

अथर्ववेद १०/७/३२

"भूमि जिसकी चरण वत् है और अन्तरिक्ष उदर है। जो द्यौलोक को अपने शिर के समान बनाये है, उस सर्वश्रेष्ठ ब्रह्म को मेरा नमन है।" इस मन्त्र में भी 'द्यौ' और 'अन्तरिक्ष' को पृथक पृथक माना है। इसके पश्चात् पृथिवी, जल, औषधि—जड़ी बूटियाँ, वनस्पति, अन्नादि, विश्वेदेव, अर्थात् 'देवता' ८ वसु, १० प्राण, ११ रुद्र, १२ आदित्य, १ प्रजापति, १ इन्द्र, यह सब ३३ कोटि अर्थात् ३३ प्रकार के जड़ देवता होते हैं। दूसरा अर्थ है समस्त विद्वान् जन। अन्त में 'ब्रह्म' शब्द आया है, इसका स्पष्ट अभिप्राय है कि पूर्व के सब पदार्थ विद्वान् जनों के अतिरिक्त सब जड़ हैं। जड़ पदार्थों में विवेक और स्वयं की गति नहीं होती, वह दिव्य शक्ति के अधीनस्त कार्य कर सकते हैं, स्वयं कुछ नहीं कर सकते। 'ब्रह्म' का अर्थ है—परमेश्वर और वेद का ज्ञान। अर्थात् बिना परमेश्वर की आज्ञा के यह जड़ पदार्थ हमें शान्ति नहीं दे सकते, और कुपित होने पर बचने का उपाय वेद से प्राप्त हो जाता है। इसी कारण 'ब्रह्मशान्ति' का प्रयोग अन्त में आया है। एक वर्ग का मानना है शान्ति नहीं क्रान्ति की आवश्यकता है, परन्तु क्रान्ति सदैव नहीं रहती। क्रान्ति भी शान्ति की प्राप्ति के लिये ही होती है। इस प्रकार सम्पूर्ण वस्तुओं से शान्ति ही शान्ति मुझको प्राप्त हो।

आर्य समाज स्टेशन रोड के साप्ताहिक सत्संग में श्री यशपाल आर्य बन्धु जी ने शान्ति पाठ के मन्त्र पर बोलते हुए कहा—क्या ब्रह्म से भी ब्रह्म शान्ति की प्रार्थना करनी होगी? इस पर श्री राममोहन जी ने कहा—बन्धु जी बोलने से पहले कुछ पढ़ कर

आया करो। यहीं पर ब्रह्म का अर्थ विद्वान् से है। विद्वान् के दो स्वरूप हैं १—साक्षर, २—सरस। नीति कार का कथन है—

साक्षरा विपरीताश्चेत राक्षसा एव केवलम्।
सरसो विपरीतश्चेत सर स्वत्वम् न मुञ्चति।।

साक्षर विपरीत मति होने पर केवल राक्षस हो जाता है, सरस व्यक्ति विपरीत मति हो जाता है तो भी सरसता को नहीं छोड़ता।

यदि विद्यावान् व्यक्ति के पास आचरण और चरित्र का अंकुश नहीं है तो वह केवल साक्षर ही नहीं रहता, वह विपरीत मति होने पर राक्षस बन जाता है, आचारवान अर्थात् सरस व्यक्ति किसी भी कारण से विपरीत मति हो जाता है तो भी वह अपनी सरसता अर्थात् आचरण का त्याग नहीं करता।

अन्धन्तमः प्र विशान्ति यैऽविद्यामुपासते।
ततो भूयऽइवते तमोयऽउ विद्याया रताः।।

यजुर्वेद ४०/१२

जो लोग अविद्या अर्थात् आत्मा से भिन्न पदार्थों को नित्य, पवित्र, सुख और आत्मा करके जानते हैं, उसी प्रकार मिथ्या ज्ञान में मग्न रहते हैं, वे गहरे अन्धकार में प्रवेश करते हैं, वे बड़े अज्ञान में रहते हैं, और जो भी विद्या अर्थात् केवल शास्त्राभ्यास में ही लगे रहते हैं, वे उससे भी अधिक अज्ञानान्धकार में कष्ट पाते हैं। अर्थात् जो आचार हीन हैं।

नगर के दो विद्वान् यह मानते हैं कि गुरुदेव दयानन्द जी महाराज ने विद्वान् के आदर की ही चर्चा की है, चरित्रवान की नहीं। वह सत्यार्थ प्रकाश के स्वमन्तव्यामन्तव्य प्रकाश को ध्यान से पढ़ें। वे लिखते हैं—अन्याय कारी बलवान से भी न डरे और धर्मात्मा (अर्थात् आचारवान, चरित्रवान) निर्बल से भी डरता रहे। इतना ही नहीं किन्तु अपने सर्व सामर्थ्य से धर्मात्माओं का चाहे वे महा अनाथ, निर्बल और गुणरहित क्यों न हों—उनकी रक्षा, उन्नति, प्रिया चरण और

अधर्मी चाहे चक्रवर्ती सनाथ महाबलवान् और गुणवान् भी हो तथापि उसका नाश, अवनति और अप्रिया चरण सदा किया करे अर्थात् जहाँ तक हो सके वहाँ तक अन्यायकारियों के बल की हानि और न्याय कारियों के बल की उन्नति सर्वथा किया करे।

मैंने चरित्रवानता का प्रमाण प्रस्तुत किया है आप स्वयम् ही विचार ले, ऋषिवर चरित्रवान के लिये क्या कहते हैं। उन दोनों विद्वानों में से एक लंगोटे का कच्चा और दूसरा हाथ का कच्चा प्रसिद्ध है। क्या बहुरुपिये, रूप बदल कर मुक्ति प्राप्त कर सकते हैं? महर्षि कपिल मुनी कहते हैं 'ऋते ज्ञानान मुक्ति' जो ऋत है, आचार है, चरित्र है, वही शाश्वत है, उसी से मुक्ति मिलेगी। रूप बदल लेने से नहीं। प्रतिमा उपासक 'देव' स्थान के कपाट बन्द करके निर्भय हो जाते हैं, कि हमारे भगवान अब कुछ नहीं देख रहे। निराकार परमेश्वर के उपासक भी यही समझते हैं कि जब वह है ही नहीं तो हमारे कर्मों को कौन और कैसे देख सकता है, निर्भय होकर हर प्रकार के पाप कर्म करते हैं। धन का अधिक संग्रह करके लक्ष्मी पति बनना चाहते हैं, जबके लक्ष्मी भगवान विष्णु की पत्नी है। □□

मार्जन

ब्रह्म यज्ञ में मार्जन मन्त्र आता है —

ओं भूः पुनातु शिरसि। ओं भुवः पुनातु नेत्रयो।
ओं स्वः पुनातु कण्ठे। ओं महः पुनतु हृदये।
ओं जनः पुनातु नाभ्याम्। ओं तपः पुनातु पादयोः।
ओं सत्यं पुनातु पुनः शिरसि। ओं खं ब्रह्म पुनातु सर्वत्र।।

इस मन्त्र में श्री जयपाल सिंह जी आर्य ने अपनी शंका व्यक्त की, जब शिरसि शब्द प्रथम में आ गया तो, पादयो के पश्चात् एक दम पुनः शिरसि क्यों?

'भूः' का अर्थ है 'जो सब जगत के जीवन का आधार, प्राण से भी प्रिय और स्वयम्भू परमेश्वर है, उससे जो हमारे शरीर में शीर्श

है अर्थात् सबसे ऊपर है, ज्ञानेन्द्रियों का केन्द्र है, उसको सुरक्षित और ज्ञान युक्त बनाये रखने की प्रार्थना है। नेत्र, कण्ठ, हृदय, नाभि, पाद के पश्चात् पुन: शीर्श के मार्जन की बात कही है। प्रश्न उठता है कि पाद पर आने के पश्चात् पुन: एक दम शीश पर क्यों पहुँचा गया।

पैरों के तलवे पर देसी घी मलने से नेत्र और शीश में तत्काल तरी पहुँचती है। पैर के अंगूठे में चोट लगने से उसका प्रभाव नेत्रों पर होता है। आखों में लाली बन जाने पर दोनों पैरों के अंगूठों के नखों पर अकउऐ (आक) के दूध की एक—एक बूँद लगाने से आँखों की लाली कटने लगती है। इस प्रकार पैरों का और शीश का एक निकटता का सम्बन्ध है। शरीर में पाद सबसे नीचे का भाग है और शीश सबसे ऊपर का। दोनों का शरीर की क्रिया पर एक साथ प्रभाव होता है। दूसरे अन्त में 'सत्य पुनातु पुन: शिरसि' पाठ है जिसका अर्थ बनता है, प्रभु जी अब मैं अन्त में सत्य की स्थापना के लिये पुन: शीश का मार्जन करता हूँ। शीश के सत्य निष्ठ होने से ही अन्य सभी इन्द्रियाँ सत्य निष्ठ बनी रहें।

शरीर में उत्तरी ध्रुव शीश है और दक्षिणी ध्रुव पाद हैं।

इस मन्त्र पाठ में पुनरुक्ति नहीं, दोनों पाठों का मन्तव्य पृथक—पृथक है। □□

अन्धकार और अज्ञान

सम्भल निवासी, बीजों के थोक व्यापारी श्री हरिओम गुप्ता जी ने एक जिज्ञासा सामने रखी कि अंधकार और अज्ञान की क्या विवेचना है।

अंधकार और अज्ञान सर्वत्र और सर्वकालिक होता है। इसको कोई देता नहीं, यह सदैव उपस्थित रहते हैं। प्रकाश के उत्पन्न होते ही अंधकार, और ज्ञान के उपस्थित होने पर अज्ञान कपूर की तरह समाप्त हो जाता है। प्रकाश का सम्बन्ध नेत्रों से है और ज्ञान का सम्बन्ध विद्या से है। नेत्रों को प्रकाश मिलता है 'सूर्य' से और

ज्ञान की प्राप्ति होती है 'वेद' विद्या से। सूर्य के हटते ही अंधकार छाने लगता है और वेद विद्या के विलुप्त होते ही अज्ञानता छाने लगती है। रात्रि के घोर अंधियारें में सूर्य का प्रतीक दीपक प्रकाश देकर अंधियारे को दूर करता है, वेद विद्या के लुप्त हो जाने पर अज्ञान रूपी काली घटाओं के अंधियारे को दूर करने के लिये वेद विद्या के प्रतीक दर्शन और उपनिषद्, ज्ञानोदय कर उस अज्ञान की काली घटा से मुक्ति दिलाते हैं।

अज्ञानता दो प्रकार की होती है। १—अल्पज्ञता जिसका स्वरूप बालक में देखने को मिलता है। 'ज्ञान और प्रयत्न' जीवात्मा के स्वाभाविक गुण हैं, इसी कारण बालक हर समय ज्ञान की प्राप्ति के लिये प्रयत्नशील बना रहता है, हर वस्तु का ज्ञान चाहता है और उसके लिये प्रयत्न करता ही रहता है। २—'मिथ्या ज्ञान' ज्ञान तो है परन्तु वह मिथ्या है। जैसे—रस्सी में सर्प का, सीप में चाँदी का, रेत की लहरों में जल का स्वरूप देखना मिथ्या ज्ञान होता है। इसी प्रकार शरीर को ही आत्मा मान लेना भी मिथ्या ज्ञान है।

शरीर के प्रत्येक कार्य को ईश्वराधीन मान लेना अर्थात् यह मानना कि बिना ईश्वर की इच्छा के पत्ता तक नहीं हिलता, यह घोर मिथ्या ज्ञान की कल्पना है, ईश्वर में इच्छा होतीं ही नहीं। सांख्य दर्शन ६/६४ में कहा है—जीव की कार्य सिद्धि अहंकार रूप कर्त्ता अर्थात् स्वकर्म के अधीन होती है, ईश्वराधीन नहीं। ऐसा कोई प्रमाण उपलब्ध नहीं होता कि जीव ईश्वर के अधीन कार्य करता है। इसी प्रकार अंधकार के विषय में प्रस्तुत है कि सृष्टि का उपादान कारण अव्यक्त रूप में था तो उसे 'सत्य' नहीं कहा जा सकता था, क्योंकि वह नेत्रों से नहीं दीख रहा था, (अलक्ष्मम् प्रमेयम्) था। 'असत्य' इसलिये नहीं कहा जा सकता कि अभाव से भाव नहीं होता और कारण रूप में वह सब विद्यमान था। क्या आच्छादित था, तो उसका आच्छादन क्या था? वह कौन था? क्या कुछ गहन गम्भीर रूप में था? अर्थात् कुछ था अवश्य। अर्थात् सूर्य के अभाव में सब ओर अंधकार ही अंधकार था। ☐☐

दर्शन केसरी

स्व. पं० गोपाल शास्त्री दर्शन केसरी, सभापति, पण्डित सभा काशी, लिखते हैं—

केवल यज्ञ परक मात्र अर्थ करने वाले भाष्यकारों के भाष्य पढ़ने वालों को वेद के प्रति कितनी अनास्था हो जाती है। इसके दो उदाहरण मुझे ज्ञात हैं। स्वर्गीय बाबू शिव प्रसाद जी गुप्ता (काशी) वेद पर बड़ी आस्था रखते थे। उन्होंने बड़ी श्रद्धा के साथ सायण भाष्य का किसी विद्वान् से आदि से अन्त तक पाठ कराया और स्वयं भी वहाँ नित्य नियमत: बैठकर सुनते रहे। उसी अवसर पर एक रोज मैं (गोपालशास्त्री) वहाँ गया तो उन्होंने हाथ जोड़ कर हँसते हुये मुझसे कहा कि शास्त्री जी महाराज पहले ही अच्छा था, कि मैंने वेद का अर्थ नहीं सुना था, जबसे मैंने साचणाचार्य का वेदार्थ सुना है तब से तो मेरी वेद पर अनास्था हो गई है। इस पर कुछ मन्त्रों के अर्थ दर्शन केसरी ने सुनाये, उसे सुनकर शिव प्रसाद गुप्ता जी चौंक उठे और कहा—यह किसका भाष्य है। इस पर पण्डित जी ने कहा—यह भाष्य उस ऋषि का है जिसका नाम यह लोग नहीं लेना चाहते वे हैं महर्षि दयानन्द। इस वेदार्थ को सुनकर शिवप्रसाद गुप्ता जी की वेद के प्रति पुन: आस्था जागृत हो गई और अपनी भूल स्वीकार की। दूसरा उदाहरण हमारे स्वर्गीय गुरु महामहोपाध्याय पूज्यपाद श्री पं० अन्नदाचरण तर्क चूड़ामणि जी महाराज हैं। उन्होंने एक बार दर्शन पढ़ते समय प्रसंगत: कह दिया था कि वेद के संहिता भाग में क्या रखा है? इन्द्र की स्तुति और वरुण की स्तुति ही तो भरी पड़ी है। हाँ सार तो उपनिषद् की श्रुतियों में है, जिस पर वेद व्यास ने विचार किया है।

सायणाचार्य और महिधराचार्य के भाष्य के अध्ययन का यही फल निकलता है। सायणाचार्य ने जहाँ वेदार्थ करके जगत् का उपकार किया है वहाँ उन्होंने केवल यज परक मात्र अर्थ करके बड़ा भारी अनिष्ट भी किया है। महिधराचार्य का वेदार्थ अत्यन्त अनगरत है। सायणाचार्य से नौ सौ वर्ष पूर्व आचार्य श्री स्कन्द स्वामी वेद

भाष्य कार हो चुके हैं। सभी मन्त्रों का तीनों प्रक्रियाओं में आध्यात्मिक, आधिदैविक, आधियाज्ञिक अर्थ होता है। यह यास्क मुनि का सिद्धान्त है। निरुक्तकार यास्क मुनि वेद के मन्त्रों के तीन प्रकार के अर्थ मानते हैं। (इसके प्रमाण उपलब्ध हैं।)

अन्त में मुझे इतना ही कहना है कि मेरे इस संक्षिप्त विवेचन से पाठक यह तो समझ ही जायेंगे कि वेद का अर्थ यज्ञ परक ही नहीं है। किन्तु वेद का एक अर्थ यज्ञ परक भी है। परन्तु आज स्वतन्त्र भारत में संसार को वेद के आध्यात्मिक, आधिदैविक (वैज्ञानिक) अर्थ की अधिक आवश्यकता है। यज्ञ करते हुये भी वेद के आध्यात्मिक तथा आधिदैविक अर्थात् वैज्ञानिक अथवा विज्ञान परक अर्थों द्वारा जगत् के सामने वेदों कि महत्ता का प्रकाशन कर केवल यज्ञ परक अर्थ की भ्रान्ति को मिटाना तथा भौतिकवाद के ही गति में मरने वाले पश्चिमी देशों की आँखों को आध्यात्मिक सदुपदेश की ज्ञान शलाका से अंजित कर अपने भारतीय आर्यों की जगद्गुरुता को पुन: प्रख्यापित करना आज स्वतन्त्र भारत का पहला कर्त्तव्य होना चाहिये।

जब हम लोग वेद के आध्यात्मिक अर्थ करने की ओर दृष्टि करते हैं तो सर्वप्रथम स्वामी दयानन्द सरस्वती का ही स्मरण हो आता है। जिन्होंने वेद का ज्ञानपरक अर्थ करके वेद की पूर्ण महत्ता को पुन: इस संसार में प्रख्यापिन किया है।

अब आवश्यकता है कि वेद के आधिदैविक अर्थात् वैज्ञानिक अथवा विज्ञान परक अर्थ को संसार के सामने रखा जाये। □□

केरल केसरी

कुन्नम् ग्राम के पिछड़े एंव दलित वर्ग के व्यक्तियों को लुभाकर 'पेनाकोस्ट मिशन' के ईसाई पादरियों ने उनका धर्मान्तरण करके समूचे ग्राम को ईसाई बना डाला था।

केरल केसरी आर्य मिशनरी आचार्य नरेन्द्र भूपण जी १९६४ से पड़ोस के ग्राम में कार्य कर रहे थे। धीरे–धीरे सारे ईसाई

अपने पूर्व धर्म में पुनः वापिस आने के लिये सहमत हो गये। शुद्धि संस्कार कराने हेतु आचार्य नरेन्द्र भूषण जी अपनी बाइक से ग्राम में पहुँचे और शुद्धि कार्य सम्पन्न कराके लौट रहे थे, मार्ग में बाँस के लम्बे–लम्बे टुकड़े फैंकने के कारण श्री नरेन्द्र भूषण जी टकराकर गिर पड़े, गहरी चोट लग जाने के कारण अचेत हो गये। अगले दिन छपा एक विज्ञापन मिला "ईसा के मार्ग पर रुकावट डालने वालों को ईसामसीह द्वारा स्वयं रुकावट डाल कर नरक भेजने की घटनायें आगे भी होंगीं"

कोट्टय्यम् जिले में ९० प्रतिशत लोग ईसाई बन गये थे, श्री नरेन्द्र भूषण जी ने अपने कौशल से इन सब को भी वापिस कर अपने धर्म में पुनः वापिस ले लिया। साथ में पीटर नाम के पादरी को भी शुद्ध करके 'पंण्डित गोविन्द विद्या भूषण' नाम देकर अपने साथ ले लिया। एक गिरजाघर की शुद्धि करके उसे ही मन्दिर बना डाला।

श्री नरेन्द्र भूषण जी पर अर्ध रात्रि में आते हुये प्राण घातक आक्रमण कर ईसाई गुण्डों ने मार कर गन्दे नाले में डाल दिया। प्रभु कृपा से जीवित बच गये।

केरल के इस भीष्म पितामह श्री नरेन्द्र भूषण जी ने कठोर पुरुषार्थ से लगभग एक लाख ईसाईयों को वैदिक धर्म में पुनः वापसी का पुनीत कार्य किया है। केरल की भाषा में चतुर्वेद संहिता का प्रकाशन हुआ है। सभी व्यक्ति उसे अपनाते हैं, पाठ करते हैं और कहते हैं कि भगवान की वाणी वेद हमारे हाथ में है। □□

आर्य मनीषी

श्री प्रो० राजेन्द्र जिज्ञासु जी का जन्म सन् १९३२ में ग्राम मालोमट्टे जिला स्यालकोट में हुआ। इनके पिता श्री जीवन मल जी अपने ग्राम के सर्वप्रथम आर्य समाजी थे। जिज्ञासु जी में सातवीं कक्षा से ही, लेखन कला अंकुरित होने लगी थीं। पं० लेखराम जी के बलिदान से प्रेरित होकर लेखनी उठी। श्री पं० गंगाप्रसाद उपाध

याय जी आदि कई प्रखर विद्वानों की प्रेरणा और प्रोत्साहन से साहित्य सेवा में जो पग आगे बढ़े वे और आगे बढ़ते ही चले गये, फिर पीछे मुड़कर ही नहीं देखा।

कई मौलिक कृतियों का अन्य भाषाओं में भी अनुवाद हो चुका है। एशिया महाद्वीप में सर्वाधिक जीवनियाँ लिखने का श्रेय इन्हें प्राप्त है। मलेशिया जैसे कट्टर पंथी इस्लामी देश के एक ग्रन्थ में जिज्ञासु जी का जीवन परिचय छप चुका है।

ए० बी० आई० अमेरिका जैसी जगत प्रसिद्ध संस्था ने जिज्ञापु जी को अपना कन्सल्टिंग आडीटर चुना है।

वास्तव में जिज्ञापु जी को आर्य जगत के सम्पूर्ण इतिहास का चलता फिरता एतिहासिक कम्प्यूटर कहा जाय तो कोई अतिशयोक्ति नहीं होगी।

मेरा जिज्ञापु जी से पहले पत्राचार द्वारा परिचय हुआ था। पुस्तकों के आदान प्रदान से इसके पश्चात् मुरादाबाद में वेद कथावाचक के रूप में और फिर मेरे अभिनन्दन ग्रन्थ के सम्पादक के रूप में इस मनीषी का सदैव सहयोग प्राप्त होता रहा है। □□

माप दण्ड

हमने यहाँ पर तीन मापदण्डों की चर्चा की है —

१—काल गणना — भारतीय काल गणना, पलकों से प्रारम्भ होती है। एक बार पलक झपकने को १ बिपल कहते हैं। हर व्यक्ति के पलक झपकने का समय पृथक—पृथक होता है। बिपल की सही गणना का क्या रूप हो सकता है? जो बालक अबोध है, उस पर किसी भी प्रकार का कोई आवरण अभी नहीं चढ़ा है अर्थात् ८ या १० मास के बालक के पलक झपकने की जो स्वभाविक क्रिया होती है, उसी की गणना करने से 'बिपल' का सही समय निकल आता है ६० विपल का १ पल होता है, ६० पल की १ घड़ी होती है, ६० घड़ी का एक दिनमान अर्थात् एक दिन और रात होता है। एक दिनमान में ८ प्रहर होते हैं, १ प्रहर ७।। साड़े सात घड़ी का

अर्थात् ३ घन्टे का होता है। इसी प्रकार घड़ी की गणना के हिसाब से, ६० सैकिण्ड का १ मिनट होता है और ६० मिनट का १ घन्टा, २४ घन्टे का १ दिन मान होता है। २।। ढाई घड़ी का एक घन्टा होता है। १ घन्टे में ३६०० सैकिण्ड होते हैं, और १ घन्टे में ९००० बिपल होते हैं। इस प्रकार १ सैकिण्ड, १ बिपल से २।। ढाई गुणा बड़ा होता है। अर्थात् काल गणना का सबसे लघु घटक बिपल है। सप्ताह में सात दिन (दिनों के नामाकन की चर्चा वेद—दर्शन और ईश महिमा में की है।) होते हैं। मास तीन प्रकार के चलते हैं। चन्द्र मास, सौर मास और कैलैण्डर अर्थात् ग्रेगेरियन मास।

प्रथम—चन्द्र मास, इसमें १५ दिन का एक पक्ष होता है। एक पक्ष में चन्द्रमा घटता है और दूसरे पक्ष में बढ़ता है। इसका प्रतीक भूमि पर सोमलता है। चन्द्रमा की कला के अनुसार इस वनस्पति पर पत्ते निकलते और गिरते रहते हैं। इसे कायाकल्प बूँटी भी कहते हैं। चन्द्र मास का वर्प ३५५ दिन का होता है, अर्थात् तीन वर्प में ३६ नहीं ३७ पौर्णमासी और अमावस्या होनी हैं। इस अधिक मास को मलमास के नाम से जाना जाता है। जिन दो अमावस्याओं के बीच संक्रान्ति न आये, उसी मास को पुरुषोत्तममास (अधिक मास) माना जाता है।

दूसरा — सौर मास होता है, इसके मास को संक्रान्ति कहते हैं। संक्रान्ति वर्ष में १२ होती हैं। यह सौर वर्ष ३६५ दिन ६ घन्टे का होता है।

तीसरा — कैलैण्डर अर्थात् ग्रेगोरियन मास होता है। इसके वर्ष में ३६५ दिन होते हैं। कैलैण्डर वर्ष की धुरी मकर संक्रान्ती होती है। इस संक्रान्ति के अनुसार कैलैण्डर वर्ष में हर चौथे वर्ष लीपइयर के नाम से फरवरी २८ के स्थान पर २९ की करके सौर मास के समानान्तर कैलैण्डर वर्ष को ले आने हैं।

चन्द्रमा से वनस्पतियों को जीवनी शक्ति की पूर्ण ऊर्जा प्राप्त होती है, और सूर्य से वनस्पतियाँ परिपक्व होती हैं। भारतवर्ष में चन्द्र और सूर्य की समान उपयोगिता है। चन्द्रमास से पर्व और सौर मास से ऋतुओं के आगमन का स्वरूप बनता है।

इस्लामिक संस्कृति अरब की है, वहाँ पर सूर्य का ताप बहुत होता है, दिन में कोई बाहर नहीं निकलता, रात्रि में जब चन्द्रमा

की शीतल समीर चारो ओर छाती है, तो उस ठण्डक में बाहर आकर सब काम करते हैं। इसी कारण इस्लामिक संस्कृति ने अपना प्रतीक चन्द्रमा को माना है। साथ में गणित की अज्ञानता होने के कारण, तीन वर्ष में ३७ दोज के चन्द्रमा न मान कर ३६ ही मानते हैं। इसी कारण इस संस्कृति के सभी पर्व हर ऋतु में आते रहते हैं, परन्तु खजूर हर ऋतु में नहीं आती, वह तो अपने समय पर ही आती है। यूरोप में चन्द्रमा और सूर्य बहुत कम दीखता है, इसी कारण यूरोपियन देशों ने अपना प्रतीक घड़ी को मान कर कैलैण्डर की संस्कृति का प्रसार किया। युग, मनवन्तर आदि की चर्चा हम पूर्व कर चुके हैं।

२— गणना

संसार के किसी भी धर्म ग्रन्थ में गिनती की गणना अथवा गणित का कोई स्वरूप नहीं मिलता। तौरेत, जबूर, इन्जील बाइबल, कुरान, गुरुग्रन्थ साहब आदि किसी भी ग्रन्थ में उपलब्ध नहीं है। हाँ! आदि ग्रन्थ वेद में इस की चर्चा मिलती है। यजुर्वेद १७/२ के मन्त्र में गिनती की गणना का स्वरूप दिया है। १ पर, हर बिन्दु का नाम करण भी है। १ पर, एक बिन्दु का दस, २ बिन्दु का सौ, ३ बिन्दु का हजार, ४ बिन्दु का दस हजार, ५ बिन्दु का लाख, ६ बिन्दु का दस लाख, ७ बिन्दु का करोड़, ८ बिन्दु का दस करोड़, ९ बिन्दु का अर्ब, १० बिन्दु का दस अर्ब, ११ बिन्दु का खर्ब, १२ बिन्दु का दस खर्ब, १३ बिन्दु का नील, १४ बिन्दु का दस नील, १५ बिन्दु का पद्म, १६ बिन्दु का दस पद्म, १७ बिन्दु का शंख, १८ बिन्दु का दस शंख। इन संख्याओं की संज्ञा बनती है। ये इतनी संख्या तो कही हैं, परन्तु इससे आगे अनेक चकारों के होने से और भी अंकगणित, बीज गणित और रेखा गणित आदि की संख्याओं को यथात्वत समझें।

वेदों में गणित सम्बन्धी अनेकों मन्त्र पाये जाते हैं। अब से १५ सौ वर्ष पूर्व महान तपस्वी त्यागी भास्कराचार्य जी ने "लीलावती" के नाम से गणित ज्योतिष के अमूल्य ग्रन्थ की रचना की थी, हमने इस की चर्चा नींव के पत्थर में की है। उसी के अनुसार आज भी कई देशों में 'वैदिक गणित' के नाम से उसे पढ़ाया जाता है। स्पष्ट

है आदि सृष्टि से ही वेद ने संसार को (१) एक और (०) शून्य को प्रदान किया है।

३— भार

८ खस खस का १ चावल, ८ चावल की १ रत्ती (चौंटली जो लाल रंग की होती है, उसका मुँह काला होता है, इसे गुण्जा भी कहते हैं।) ८ रत्ती का १ माशा होता है।

इस प्रकार हमारा 'काल' अर्थात् समय, 'गणना' अर्थात् गिनती, 'भार' अर्थात् तोल। यह तीनों प्राकृतिक ही हैं।

पूर्णमदः पूर्णमिदं पूर्णात्पूर्णमुदच्यते।
पूर्णस्य पूर्णमादाय पूर्णमेवावशिष्यते।।

पूर्ण में से पूर्ण को घटाने से पूर्ण ही प्राप्त होता है और अन्त में पूर्ण ही शेष रहता है। जिस प्रकार माता—पिता पूर्ण हैं, उनमें से घटाकर पूर्ण सन्तान को जन्म देते हैं। सन्तान को प्राप्त करने के पश्चात् भी माता—पिता पूर्ण ही शेष रहते हैं। इसी प्रकार यह सारा जगत् पूर्ण परमेश्वर में से पूर्ण उत्पन्न होकर परिपूर्ण अवस्था में स्थित है। उसके पश्चात् वह परब्रह्म परमेश्वर भी पूर्ण ही शेष है। □□

अन्य प्रतिभायें

अन्य प्रतिभाओं से जिनका कुछ भी मेरे साथ सहयोग, सम्पर्क और सान्निध्य रहा है, उनकी यहाँ चर्चा अंकित करने का प्रयत्न कर रहा हूँ।

☞ श्री राममोहन जी! आर्य कुमार सभा, आर्य वीर दल और आर्य समाज के सबल घटक रहे हैं। नगर मुरादाबाद में पहली बार हिन्दू स्कूल के विशाल प्रांगण में अखिल भारतीय आर्य कुमार सभा का सम्मेलन आयोजित किया, एक विशाल शोभा यात्रा भी निकाली गई थी। इस अवसर पर एक मुस्लिम युवती को संस्कृत और वेद पर गरिमा पूर्ण प्रवचन देने पर पुरस्कृत भी किया था। आर्य कुमार सभा के सदस्यों को डा. सूर्यदेव की धार्मिक परीक्षाओं में बैठने के लिये प्रेरित करते थे। एक पुस्तक भी आर्य कुमार सभा के द्वारा

प्रकाशित की थी, जिसका नाम था "जाति—भेद का अभिशाप'। आर्य वीर दल के प्रान्तीय संचालक रहे। आर्य समाज स्टेशन रोड, मुरादाबाद के लोह पुरुष के समान वर्षों तक प्रधान पद पर आसीन रहे।

☛ राजा जयकिशन दास जी के निवास स्थान पर तीसरी आर्य समाज भाद्रपद शुक्ल ३ बुद्धवार सं० १९३६, उत्तरा फालगुनी नक्षत्र, सिंह के सूर्य कलिकाल ४९८० दयानन्दाब्द ५६ की २० जौलाई १८७९ ई० को ऋषिवार दयानन्द सरस्वती जी महाराज के कर—कमलों द्वारा स्थापित हुई। सर्वप्रथम आर्य समाज की स्थापना चैत्र शुक्ल प्रतिपदा बुद्धवार सम्वत् १९३२, तदानुसार १० अप्रैल १८७५ ई० को बम्बई में की दूसरी लाहौर में।

☛ १९७९ में आर्य समाज मण्डी बाँस, मुरादाबाद की शताब्दी मनाने का निश्चय हुआ। इस वर्ष मैं (वीरेन्द्र नाथ) मन्त्री और हंसराज चौपड़ा प्रधान थे। २० जौलाई से एक सप्ताह का कार्यक्रम यज्ञ का आर्य समाज मन्दिर में होने का निश्चय हुआ। पूर्व मन्त्री श्री महेश जी ने श्री रामप्रसाद जी विद्यालंकार को निमन्त्रण दिया था। मेरे मन्त्री बन जाने से श्री महेश जी ने श्री राम प्रसाद जी से आने के लिये मना करा दिया। श्री राम प्रसाद जी का पत्र आया कि गुरुकुल खुल गया है, मैं नहीं आ सकता, कारण श्री महेश जी मन्त्री नहीं थे। यह विद्वान् के नहीं अविद्वान् के लक्षण हैं। मैं श्री कान्तीलाल जी को साथ लेकर देहली श्री स्वामी जगदीश्वरानन्द सरस्वती जी के पास गया, उन्होंने तत्काल स्वीकृति दे दी और मार्ग व्यय भी नहीं लिया। ये है विद्वान् और योग्य सन्यासी की पहचान।

☛ मैं एक विवाह में देहली गया था, रविवार की प्रातः नयाबाँस आर्य समाज के सत्संग में गया। वहीं पर पूज्यपाद श्री स्वामी विद्यानन्द जी से भेंट हुई। उनका प्रवचन सुना बहुत प्रभाव शाली था। मैंने मुरादाबाद आने की प्रार्थना की। पूज्य श्री स्वामी विद्यानन्द जी मुरादाबाद आये, उस समय आर्य समाज के प्रधान श्री रघुवीर सरन जी थे, पूज्य स्वामी जी को उन्होंने अपने घर पर टिकाया था। कार्यक्रम की समाप्ति पर मैं उनको स्टेशन पर छोड़ने गया। उस समय पूज्य स्वामी जी ने कहा आपके प्रधान आर्य नहीं हैं। न सन्ध्या करते हैं न यज्ञ।

☛ वैद्य विष्णुकान्त जैन एक अच्छे चिकित्सक थे वह 'आयुर्वेदद्धारक' औषधालय चलाते थे, इनका महानारायण तेल जगत प्रसिद्ध रहा है। वैद्य जी सरल स्वाभाव के व्यक्ति थे मैं कई बार उनसे मिला, जब भी मुझे जिस योग की आवश्यकता पड़ी, उसे उन्होंने उनमुक्त भाव से मुझे बताया। हर प्रकार का परामर्श भी सदैव मिलता रहता था। उनके बड़े पुत्र शशी कान्त जैन उसी स्थान पर चिकित्सा करते हैं और छोटे पुत्र रविकान्त जैन, जैन आयुर्वेदिक स्टोर के नाम से दिनदार पुरा में चिकित्सा का भी कार्य करते हैं।

☛ प्रो० महेन्द्र जी, के०जी०के० कालिज के प्रधानाचार्य, एवं हिन्दुस्तान एकेडमी उ०प्र० इलाहाबाद के सचिव रहे। महेन्द्र जी कवि भी थे और अपने गृह पर 'अन्तरा' की गोष्ठी का आयोजन करते थे। बोलने में अति प्रवीण थे। नगर में वरिष्ठता के नाते सदैव अगली पंक्ति में सबसे आगे स्थान दिया जाता था। इनके सुयोग्य शिष्य डा० श्री अजय अनुपम जी अब 'अन्तरा' का कार्यक्रम देखते हैं।

☛ दैनिक यज्ञ करने की नगर में एक अच्छी कड़ी बनी हुई थी। इसमें चौधरी वीर सिंह जी, श्री राजेन्द्र चन्द्र सोती और उनकी गृहणी श्रीमती लीलादेवी सोती, श्रीमती किशोरी देवी पत्नी श्री धर्म प्रकाश जी श्री वेद प्रकाश जी और उनकी गृह स्वामिनी श्रीमति उर्मिला जी, श्रीमति प्रभा आर्य पत्नी श्री रामोहन जी, श्रीमति सुधा आर्य पत्नी श्री राजेश्वर सरन जी, श्रीमती राजेश्वरी गुप्ता पत्नी श्री हरिनन्दन जी, श्रीमति रक्षा आर्य पत्नी श्री सतीश चन्द्र जी एडवोकेट (श्रीमन) श्रीमति शारदा जी अर्धांगिनी श्री सुधीर कुमार जी, श्रीमति शन्नो रानी पत्नी श्री विनोद कुमार गुप्ता, श्री राजेन्द्र नाथ जी राजोगली, आदि की एक अच्छी श्रंखला बनी हुई है। मैं भी (वीरेन्द्र नाथ) गत ५५ वर्ष से दैनिक यज्ञ करता चला आ रहा हूँ। अनिलकान्त बंसल कुछ समय से अग्नारी रूप में लघु यज्ञ अमन्त्रिक करते हैं, परन्तु यज्ञ करने की प्रेरणा सबको देते हैं।

☛ नगर में मॉन्टेसरी पद्धती से बच्चों को शिक्षा देने की दिशा में श्री सर्वेश्वर सरन सर्वे जी प्रमुख माने जाते रहे हैं। इनके घनिष्ट

साथी रहें शंकर दत्त पाँडे जी। इन दोनों ने शिव सुन्दरी मौन्टेसरी विद्यालय के द्वारा बच्चों में शिक्षा का प्रसार किया। सर्वे जी मिट्टी की मूर्ति आदि के अच्छे कलाकार थे, वे पेन्टिंग में भी प्रवीण थे। इन के हाथ की चित्रकारी को बाहर से आने वालों ने बहुत सराहा था। मैं भी कई बार इनसे घर पर और विद्यालय में भी मिला था। इन्होंने कई साड़ियाँ अपने हाथ की पेन्टकारी की मुझे दिखाई थीं। एक वार लाख की चूड़ियों पर भी पेन्टिग करके मुझे दिखाया था। वह मुझसे अति स्नेह रखते थे।

☞ तम्बोली मोहल्ले में भंगवालों की धर्मशाला के सामने एक वड़ी कोठी में साहू भगवत सरन जी रहते थे। कार्य किस्तों का है मेरी दुकान से बहियाँ जाती रही हैं। एक बार बहियाँ लेने के लिये उनके सुपुत्र अनिल कुमार आये, उस समय एक और सज्जन दुकान पर बैठे गायत्री मन्त्र के बारे में चर्चा कर रहे थे। मैंने उनको गायत्री साधन पुस्तक दी। अनिल चुपचाप सब ध्यान लगाकर सुन रहे थे, उन्होंने भी एक पुस्तक गायत्री साधन ली और घर लेजाकर उसका पूरा अध्ययन किया। अगले दिन अनिल कुमार मेरे पास आये और अपनी शकाओं का समाधान करके चले गये। आज वह गायत्री के अच्छे साधक हैं कई लघु पुरश्चरण कर चुके हैं। गायत्री जाप से सारे कार्य सिद्ध होते गये और जीवन भी सुख पूर्वक चल रहा है।

☞ श्री विनोद सेठ गुजराती स्ट्रीट पर रहते हैं। आपके गृह पर प्रत्येक मंगलवार की शाम को सत्संग होता है। उसमें रामचरितमानस पर अधिक मनन होता था। इनके स्वर्गवासी हो जाने के पश्चात् यह सत्संग श्री सुरेश दत्त पथिक जी के गृह पर हो रहा है। उसमें श्री विपिन पोरवाल आदि अनेक श्रद्धालुओं का संगम हो जाता है। विनोद सेठ जी श्री नरोत्तम व्यास जी से भी मिलने आया करते थे, उसी समय मुझसे भी उनकी भेंट हो जाती थी।

☞ श्री मुरारीलाल जी की दुकान मुरादाबाद मुनि गली में है, उसी दुकान पर उनके पुत्र श्री मनोहर लाल जी भी बैठते थे। वह १९४७ में आर्य वीर दल की शाखा में भी जाया करते थे। महर्षि दयानन्द सरस्वती जी महाराज की मथुरा शताब्दी में, मैं (वीरेन्द्र नाथ)

पं० हरिप्रसाद आर्य और श्री मुरारीलाल जी भी गये थे। श्री मुरारीलाल जी के घर पर कई बार यज्ञ प्रचार समिति के द्वारा यज्ञ का कार्यक्रम रहा था। उनके एक पुत्र श्री विष्णु कुमार जी थे, उनके पुत्र श्री विनोद कुमार जी मण्डी बाँस आर्य समाज के सामने स्टील के हैण्डिलो का कार्य करते हैं। श्री विनोद कुमार जी योगासनों के अभ्यासी हैं, उन्होंने जेलर महोदय की अनुमति से जेल के कैदियों को भी आसनों का प्रशिक्षण दिया था।

☞ प्रभुता पाय काहि मद नाहीं।

प्रभुता किसी भी प्रकार की क्यों न हो उसके आते ही मद आ ही जाता है। यह स्वाभाविक गुण नहीं? यह मनोवृत्ति के अनुसार ही होता है। श्री जयदेव शरण जी इससे अछूते नहीं। थोड़ा आसनों का अभ्यास, किस आसन का किस अंग पर क्या प्रभाव पड़ता है, इसकी जानकारी ने अहम को एक दम अधिक बढ़ा दिया। एक दिन जयदेव जी से अनिल बंसल ने कहा—क्या आप 'यम—नियम' जानते हैं? जयदेव जी ने उत्तर दिया हाँ! हम योग का सारा कार्यक्रम नियमपूर्वक चलाते हैं। इस उत्तर को सुनकर अनिल की हँसी छूट पड़ी और कहा आप बिलकुल सही फरमा रहे हैं। कितनी बड़ी अज्ञानता है, जो 'यम—नियम' को ही नहीं समझ पा रहा है। 'यम—नियम' अष्टाँग योग की नसैनी के प्रथम दो डण्डे हैं।

☞ श्री एस. सी. सक्सैना जी भी अपने आपको परम योगी बताते हैं, सैंकड़ों पुस्तकों के अध्ययन कर्त्ता होने का दावा करते हैं। जवाहर लाल नेहरू राष्ट्रीय युवा केन्द्र पर सक्सैना जी ने बोलते हुए कहा—तत्व चार हैं। मैंने अपने प्रवचन में चार तत्वों का खण्डन करके पाँच तत्वों का होना सिद्ध किया, और हर तत्व के स्वाभाविक गुण बताते हुए कहा—किस तत्व के कम होने से क्या कुप्रभाव पड़ेगा। तत्व की कमी के कुप्रभाव से बचने का कोई उपाय नहीं।

☞ दीनदयाल नगर में आर्य समाज मन्दिर के मैदान में एक योग शिविर का आयोजन हुआ। उसके समापन कार्यक्रम में मुझे मुख्य अतिथि के रूप में आमन्त्रित किया गया। इस सभा के अध्यक्ष थे श्री सच्चिदानन्द जी शास्त्री थे। इस शिविर में प्रशिक्षण दिया था, योग साधन में प्रवीण श्री रमेश चन्द्र जी शर्मा एस.आई. पुलिस महोदय ने। श्री रमेश चन्द्र जी शर्मा योगासनों के अच्छे अभ्यासी हैं।

☞ श्री मंगल मुनि जी सिवहारा में पाराशर औषधालय चला रहे हैं। मंगलमुनी जी आयुर्वेदाचार्य हैं, आप मुरादाबाद मे ऋषिकुल कटघर में आयुर्वेद पढ़ाने आया करते थे। मेरी दुकान पर भी आने की कृपा करते थे। आपका योग दर्शन पर भी अच्छा अध्ययन है। योग शिविरों में प्रवचन के लिये जाते रहते हैं। मेरे घर पर भी एक वार यज्ञ में प्रवचन करने आये थे। कई औषधियों के अनुभूत प्रयोग बताने की मुझ पर कृपा भी की थी। आपके सुपुत्र वैद्य अवनीन्द्र उपाध्याय जी का चिकित्सा में अच्छा अनुभव है और स्वयं ही औषधि ा निर्माण करते हैं।

☞ समस्त गुणों से युक्त होने पर भी अभिमान रहित होना एक विलक्षण प्रतिभा का परिचायक है। ब्रास्को एक्सपोर्ट के स्वामी श्री अजीत कुमार जी वेद संस्थान के संरक्षक हैं। दानी हैं, विवेकी हैं, मननशील हैं। कार्यक्रम का पत्रक छपा, मैं पत्रक देने श्री अजीत कुमार जी के पास गया। उन्होंने देखा और कहा मेरा नाम अजित है, आपने अजीत लिखा है? मैंने कहा अजित का अर्थ बनता है जो कभी न जीत सके और अजीत का अर्थ है कि जिसे कोई न जीत सके, इसी कारण मैंने अजीत ही लिखा है। इस पर अजीत बाबू हँसे और कहा कि हम हिन्दी के बारे में कम जानते हैं।

☞ एक विद्वान् श्री सन्त यादव जी ने मुझसे कहा कि आपकी पुस्तक पर 'वेद—उद्गीत' गलत लिखा है वेद—उद्गित होना चाहिये था। यहाँ पर भी वही स्थिति है उद्गित का अर्थ है जो न गाया जा सके और उद्गीत का अर्थ है जो गाया जा सके। इस पुस्तक में गाये जाने वाले ही पाठ हैं इसलिये इसका नाम वेद—उद्गीत ही सही है।

श्री सन्त यादव जी बच्चों का एक विद्यालय भी चला रहे हैं। बच्चों को अच्छी शिक्षा प्राप्त हो इसी उद्देश्य से हर शब्द, वाक्य को अच्छी प्रकार तर्क पूर्ण ढंग से अपने आप समझ कर बच्चों को बताने का प्रयत्न करते हैं। इसी इच्छा के साथ वह मेरे पास आये और 'स्वाहा' का सही अर्थ जानना चाहा। मैंने कहा—१. 'स्व:' होता है उसका अर्थ है 'सुख स्वरूप' २. 'स्वाहा' होता है। इसके दो रूप हैं, १. मन्त्र भाग में आया 'स्वाहा' उसका अर्थ मन्त्र

भाव के साथ होता है, जैसे ऋषिवर दयानन्द जी महाराज ने आर्य्याभिविनय के उत्तरार्ध के मन्त्र ५३ में 'स्वाहा' का अर्थ किया है 'आप अनुग्रह और प्रीति से स्वीकार कीजिये' ५५ में अर्थ किया है 'मैं अत्यन्त प्रीति से स्वीकार करुँ'। २. 'स्वाहा' प्रेशवाक्य के नाम से यज्ञ के समय आहुति देने के लिये अन्त में बोला जाता है, उस 'स्वाहा' का अर्थ है आह्लाद, उल्लास, उमंग के साथ हवि को अर्पित करना।

☞ फैजगंज पोस्टआफिस पर कृपाशंकर गौड़ पैकर का कार्य करते थे। मन में जिज्ञासा उत्पन्न हुई कि गायत्री का पुरश्चरण किया जाय। कई ब्राह्मणों से मिले, किसी ने ४ हजार का किसी ने ८ हजार का तो किसी ने १० हजार का व्यय बताया। एक बार कृपा शंकर ने राम सरन वानप्रस्थी से चर्चा करी आज वह स्वामी शरणानन्द जी के नाम से जाने जाते हैं। उन्होंने इस कार्य की जानकारी हेतु मेरे पास भेज दिया। कृपाशंकर गौड़ को संजू शर्मा के नाम से भी जाना जाता है, इनको मैंने गायत्री के पुरश्चरण का सारा स्वरूप बता दिया और संजू ने एक पुरश्चरण करने का निश्चय किया। जब पुरश्चरण पूरा हो गया तो संजू मेरे पास आये और कहा कितना यज्ञ करना है और ब्रह्मभोज में क्या होगा? मैंने कहा केवल एक माला गायत्री से यज्ञ कर लो और तुम स्वयं ब्राह्मण हो तुम ही स्वयं भोजन करो, हो गया ब्रह्म भोजं पूरा। बिना किसी व्यय के पुरश्चरण पूरा हो गया, कई पुरश्चरण किये उन्नति भी हुई, आज वह पोस्टमैन हैं।

☞ पुरुषार्थी अपने लक्ष्य को प्राप्त कर ही लेता है। सन्तकुमार सिंघल रेलवे में कार्यरत रहते हुये भी प्रगति के पथ पर अग्रसर होने के प्रयत्नों में लगे रहते थे, पौलिश के अड्डे लगाये, दिन रात परिश्रम किया, आज उन्होंने लोहागढ़ में कप शील्ड और अन्य स्टैन्ड आदि बनाने का एक अच्छा और बड़ा उद्योग लगा रखा है। वह अपने इस उद्योग से सन्तुष्ट है। वेद संस्थान द्वारा प्रकाशित पुस्तक योग परिणति के विमोचन कार्यक्रम में मुख्य अतिथि के रूप में आपने अपने सारगर्भित प्रवचन से सबको मन्त्र मुग्ध कर लिया था। इसी प्रकार वेद संस्थान के कार्यक्रमों में आप आने की कृपा करते ही रहते हैं।

☞ राहत मौलाई एडवोकेट नगर मुरादाबाद से कई बार विध ायक निर्वाचित हुये थे। एक बार गो हत्या के केस में किसी कारण राहत मौलाई फँस गये थे। न्यायालय में वाद चल रहा था। न्यायाध ीश महोदय ने केस की लम्बी सुनबाई के पश्चात् निर्णय दिया। इसी न्यायालय में श्री कृष्ण गोपाल जी टाइपिस्ट के स्थान पर कार्य कर रहे थे। न्यायाधीश महोदय ने निर्णय बोला और टाइप होकर अगले दिन निर्णय सुनाना था।

उसी दिन सायंकाल को राहत मौलाई एडवोकेट के घर पर जश्न मनाया जा रहा था और दावत होने लगी। यह समाचार न्यायाधीश महोदय के कानों तक भी पहुँच गया। उन्होंने कृष्ण गोपाल जी से कहा कि आपने इसे घोषित होने से पहले ही आउट क्यों किया। कृष्ण गोपाल जी ने कहा—मैंने ऐसा नहीं किया। जज साहब—फिर कैसे मौलाई साहब को पता लगा कि मैं छूट गया, बरी हो गया। कृष्ण गोपाल—मुझे यह कुछ नहीं मालूम। न्यायाधीष महोदय ने कृष्ण गोपाल जी को बरखास्त कर देने की बात कही।

यह समाचार राहत मौलाई के पास पहुँचा और वह सोचने लगे कि लाला बेआई में मारा जायगा। इस विचार से मौलाई साहब ने कोर्ट में जाकर कहा मुझे समाचार किसी और ने नहीं दिया, मुझे समाचार तो आपसे ही मिला था। इस पर जज साहब चौंके और कहा कैसे? मौलाई—जज साहब हम वकील हैं उड़ती चिड़िया को पहचान लेते हैं। बहस हो जाने के पश्चात् मैंने आपसे कहा—हुजूर! क्या मैं जाऊँ? आपने उत्तर दिया हाँ जा सकते हो। मैंने तभी समझ लिया, कि मुझे बरी कर दिया गया है। यदि मुझे बरी नहीं किया गया होता तो मुझे घर जाने को नहीं कहा जाता। इस पर जज साहब हँसे और कृष्ण गोपाल जी पर जो अविश्वास का आरोप आ गया था वह समाप्त हो गया। इस अविश्वास के कारण कृष्ण गोपाल जी को आत्म ग्लानी हुई और वहाँ से त्यागपत्र भी दे दिया, और अपना टाइपिस्ट का कार्य करने लगे।

एक बार वादी और प्रतिवादी दोनों के प्रार्थना पत्र कृष्ण गोपाल जी ने ही टाइप किये। देखने में दोनों एक मशीन के एक हाथ के स्पष्ट दीखते थे। इस बात को पेशकार ने नोट किया और कहा

— यह क्या जाल साजी है। इस पर वादी और प्रतिवादी दोनों ने यह स्वीकार किया कि यह दोनों टाइप एक ही के हैं। हमें उन पर इतना भरोसा है कि वह एक दूसरे की बात एक दूसरे को नहीं बताते। इस पर पेशकार सहित जज महोदय को भी बड़ा आश्चर्य हुआ कि कितने भरोसा का यह व्यक्ति है।

श्री कृष्ण गोपाल जी आर्य समाज मण्डी बाँस मुरादाबाद के उपप्रधान थे। ऐसे विश्वासी सत्य निष्ठ और भरोसे मन्द व्यक्ति को भी आर्य समाज मण्डी बाँस मुरादाबाद के २००१ के चुनाव की वैध ाता को न्यायालय में चुनौती देनी पड़ी। दुभार्गयवश २५ दिसम्बर २००३ की रात्रि में उन्हें कोई कार से कुचल कर समाप्त कर गया।

श्री शिवचरण जी आजाद, श्री ज्ञान चन्द्र जी आजाद और श्री कृष्ण गोपाल जी आर्य कुमार सभा के मेरे साथियों में से रहे हैं।

☛ श्री जगतप्रकाश जी गर्ग का २९ जौलाई १९९८ को स्वर्गवास हो गया। वह आर्य विचारों के थे। इमी कारण शुद्धि यज्ञ ७ अगस्त १९९८ के अवसर पर उनके पुत्रों ने दैनिक सन्ध्या यज्ञ की पुस्तक का वितरण करने का विचार बनाया और श्री मुकेश कुमार जी के साथ मेरे पास आये और दैनिक सन्ध्या यज्ञ की पुस्तक छपवाने को कहा—मैंने कहा—समय बहुत कम है, इतने समय में पुस्तक तैयार नहीं हो सकती। कहने लगे कुछ प्रयत्न कीजिये। मैंने कहा—कुछ पुस्तकें एक और सज्जन की रखी हैं वह देने को कहा। उन्होंने अपने पिता श्री का चित्र छाप कर मुझे दिया और मैंने ३०० पुस्तकें तैयार कराकर उनको बिना मूल्य के ही दे दी थीं। उनका कार्य सम्पन्न हो गया।

कुछ समय के पश्चात् मैं श्री मुकेश जी को साथ लेकर प्रभात मार्केट रामपुर रोड पर उनके एक्सपोर्ट प्रतिष्ठान पर मिला और कहा—कि आप अपने पिना जी की स्मृति में दैनिक संध्या यज्ञ की पुस्तक का एक संस्करण प्रकाशित कराकर वितरित करा दें। इस पर कुछ इधर—उधर की बातें बनाकर साफ मना कर दिया। बात सही है, कि सीधा सादा मिठास से भरपूर गन्ना भी बिना पेले रस नहीं देता।

☞ श्री लक्ष्मण प्रसाद जी नगर मुरादाबाद के नगर प्रमुख पद पर आसीन रहे। आपका ब्रास एक्सपोर्ट का बहुत बड़ा काम है। वेद—उद्गीत पुस्तक के विमोचन कार्यक्रम में आप १ दिसम्बर २००२ को मुख्य अतिथि के रूप में सम्मलित हुये थे, उस अवसर पर आपने अपने उद्बोधन में कहा—कि वेद संस्थान केवल श्री वीरेन्द्र गुप्त: जी की ही पुस्तकें प्रकाशित करता हो, ऐसा नहीं, वह अन्य लेखकों की भी पुस्तकें प्रकाशित करता है। मैं श्री लक्ष्मण प्रसाद जी के आवास पर वेद के छन्दानुवाद के प्रकाशन सहयोग की चर्चा हेतु मिला और उन्होंने वेद के छन्दानुवाद के प्रकाशन का पूर्ण समर्थन किया और साथ देने का भी आश्वासन दिया।

☞ झुककर लिखने के कारण मेरी गर्दन और कन्धे में दर्द रहने लगा। सोच रहा था कि लेखन पीठिका बनवाई जाय। एक दिन दयालु और दूसरों के कष्ट का अनुभव करने वाले श्री सतीश चन्द्र जी गुप्ता एडवोकेट जी ने लेखन पीठिका बनवाकर श्री हरिबाबू जी के द्वारा मेरी दुकान पर भिजवा दी। अब आराम से लेखन पीठिका के सहारे लेखन कार्य सुगमता से चल रहा है। ऐसी विभूति को नमन करने के लिये सहसा मन प्रेरित हो जाता है।

कर्म शील अपनी छवि छोड़कर अमर हो जाते हैं। इसी प्रकार वैश्य शिक्षा समिति तथा मुरादाबाद इण्टर कालेज के अध्यक्ष, परहित पीड़क, साहित्य प्रकाशन हेतु सहयोग करने वाले, दानी, सहनशील, कर्मठ, अदम्य साहस के परिचायक, लोह पुरुष के समान श्री सतीश चन्द्र जी गुप्ता एडवोकेट १७ अक्टूबर २००५ बुद्धवार के दिन, 'रामगंगा बिहार के निवासी, राम गंगा तट पर शरीर रूपी जर्जरित रथ को त्याग कर नव जीवन धारण की दिशा की ओर अग्रसर हो, अमर हो गये।

उनका अभाव सदैव खटकता ही रहेगा, इस शोक पूर्ण विदाई के अवसर पर हम सब वेद संस्थान के सदस्य करबद्ध हो श्रद्धाञ्जली रूप कोटानु कोटि नमन करते हैं।

☞ मनुष्य में उपासना वृत्ति प्राकृतिक है, नैसर्गिक है, कृत्रिम नहीं। इसी कारण मनुष्य उपासना के मार्ग की खोज में लगा रहता

है। श्री मदन लाल गुप्ता जी के सुपुत्र अरविन्द कुमार गुप्ता जी जो लाइन पार रहते हैं, उनमें भी उपासना के प्रति मन में जिज्ञासा उठने लगी, उन्होंने इस विषय पर कई से चर्चा की, परन्तु कोई सन्तोष जनक समाधान नहीं मिला। किसी ने मुझसे सम्पर्क करने का परामर्श दिया। कई दिन तक अरविन्द कुमार गुप्ता जी यही सोचते रहे कि मैं उनसे कैसे मिलूँ, पता नहीं किस स्वभाव के हैं। एक दिन साहस करके अरविन्द कुमार गुप्ता जी डरते—डरते मेरे पास आये, नमस्ते करी और बैठ गये। कुछ देर पश्चात् गायत्री मन्त्र के शुद्ध उच्चारण और साधना की चर्चा करने लगे। मैंने अरविन्द कुमार गुप्ता जी को गायत्री मन्त्र का शुद्ध उच्चारण बताया और भ्रामक शंकाओं का निवरण करके सही मार्ग का निर्देशन किया। आज वह अच्छे और सफ़ल साधक के रूप में अग्रसर होकर अपने लक्ष्य की ओर बढ़ रहे हैं।

☛ कटघर क्षेत्र में भारतीय जनता पार्टी की बैठक थी। उसमें श्री राजीव कुमार जी भाग लेने गये, वहीं पर ही श्री कृष्ण कुमार शुक्ला जी से भेंट हुई, शुक्ला जी ने अपने पास से मेरी एक पुस्तक राजीव कुमार जी को दी और कहा—यह मण्डी चौक में ही हैं आप इनसे सम्पर्क करें, यह अच्छे लेखकों में से एक हैं। श्री राजीव कुमार जी मेरे पास आये, मैं इनके बाबा श्री बाबूराम जी को और पिता श्री कैलाश चन्द जी को पहले से ही जानता था। राजीव कुमार जी मुझसे कई पुस्तकें पढ़ने के लिये ले गये, सबको पढ़ा, कुछ ज्ञान का वर्धन हुआ। राजीव कुमार जी में उत्साह अच्छा है, कर्मठ हैं, प्रत्येक कार्य में शीघ्र लग कर पूरा करने की इच्छा रखते हैं, व्यायाम शील है, वर्षों तक संसार में भारत के शारीरिक व्यायाम की कला का नेतृत्व करने वाले विश्व विख्यात श्री ईश्वर दयाल (आई. डी.) माथुर साहब की व्यायाम शाला में जाकर बहुत कुछ सीखा, और अपने गुरु के नेतृत्व में अनेक प्रतियोगिताओं में विजयी होकर, गुरुजी की कला और प्रशिक्षण का सर्वत्र यंशोगान कराया और स्वयं को भी सम्मान मिला। वह मेरे सम्पर्क में बराबर बने रहते हैं।

☛ मुन्शी अम्बाप्रसाद जी (मुन्सिफ) मुरादाबाद आर्य समाज के धुरन्धर विद्वान् थे, आपके सुपुत्र श्री प्रेम प्रकाश जी थे और पुत्री गोपी देवी जी जो विधवा हो जाने के पश्चात् मुरादाबाद में ही बुआ जी के नाम से प्रसिद्ध रहीं। गोपी देवी जी ने नगर में स्त्री आर्य समाज की स्थापना की और जीवन भर आर्य समाज का कार्य करती रहीं। श्री प्रेम प्रकाश जी के सुपुत्र श्री धर्मप्रकाश जी थे आपकी गृहस्वामिनी श्रीमति राम किशोरी देवी नित्य दैनिक यज्ञ करती थीं। उनमें बुआ जी के पूरे संस्कार पनपे थे। इनके पुत्र श्री रविप्रकाश जी, श्री निरन्जन प्रकाश जी एवं श्री योगेश प्रकाश जी हैं। श्री रवि प्रकाश जी की धर्म पत्नी श्रीमती निर्मला जी में आर्य समाज के प्रति आस्था है। श्रीमति निर्मला जी आर्य, स्टेशन रोड महिला आर्य समाज की मन्त्राणी भी रही हैं। वह मुझे सदैव चाचा जी के सम्बोध ान से पुकारती हैं और वेद संस्थान के कार्यक्रमों में पूरा सहयोग प्रदान करती रहती हैं।

☛ पुस्तक लोकार्पण के कार्यक्रम में श्री हरीश चन्द्र जी गुप्ता ने विशिष्ट अतिथि के स्थान से सभा को सम्बोधित करते हुये कहा—मैं कोई साहित्यिक व्यक्ति या विचारक नहीं हूँ, मैंने वेदों को देखा तो है परन्तु वेदों का कोई विशेष ज्ञान नहीं। मैंने भाई साहब श्री वीरेन्द्र गुप्तः जी का साहित्य पढ़ा है। उनकी तीन पुस्तकों का लोकार्पण आज है, अत्यन्त उपयोगी तथा समाज सुधारक लगती हैं।

'श्रद्धा सुमन' आचार्य जी के प्रति श्रद्धा का असीम प्रवाह है तो 'छलकपट और वास्तविकता' हमारी आँखें खोलने का एक निरन्तर प्रयास है, तथा मदर टेरेसा की वास्तविक छवि दर्शाती है, 'दाम्पत्य दिवस' आज के संदर्भ में बहुत उपयोगी पुस्तक है तथा इसमें जैनेटिक साइन्स का समावेश आ जाता है। इस अवसर पर श्री प्रो. आर. गर्जर जो अन्तरिक्ष औषधि विज्ञान केन्द्र कोलोन जर्मनी के अध्यक्ष हैं की कुछ खोजें और शोध बहुत संक्षेप में आपके सामने प्रस्तुत कर रहा हूँ। प्रो० गर्जर के अनुसार जब मनुष्य पृथ्वी की गुरुत्वाकर्षण विहीनता की स्थिति में होता है तो उसके शारीरिक द्रव्य का २ लीटर भाग ऊपरी भाग में आ जाता है। इस अवस्था में मनुष्य

पर बहुत तेज आ जाता है, और आयु के लक्षण प्रतीत नहीं होते। इस अवस्था का वैदिक योग प्रणाली के अनुसार तप और समाधि से सीधा सम्बन्ध है। हमने अपने ग्रन्थों में पढ़ा है कि ऋषि मुनी धरती पर रहते हुये धरती के गुरुत्वाकर्षण की परिधि से ऊपर उठकर जो समाधि लगाते थे, वही उक्त अवस्था लगती है।

प्रो. गर्जर के अनुसार शून्यावस्था में मनुष्य की क्षुधा घटती जाती है और धीरे धीरे लुप्त हो जाती है, यह अवस्था योगियों द्वारा "कण्ठ कूपे सय्यमात क्षुति पिपासा निवृत:" अर्थात् कण्ठकूप में ध्यान लगाने से क्षुधा और प्यास समाप्त हो जाती है और योगी जन वर्षों तक बिना अन्न जल ग्रहण करे समाधि लगाने की क्षमता प्राप्त कर लेते हैं। उक्त स्वरूप, इसका अंश मात्र ही है।

हमारे वैदिक योग विज्ञान के सन्दर्भ की तुलना में प्रो० गर्जर का यह अति आधुनिक शोध अत्यन्त लघु और केवल मात्र एक कण के समान ही है। अन्त में मेरा निवेदन है कि श्री वीरेन्द्र गुप्त: जी की इन तीनों पुस्तकों का अध्ययन कर लाभ प्राप्त कर ज्ञान का वर्धन करें।

☞ मुरादाबाद नगरी विलक्षण प्रतिभाओं को जन्म देने में सदैव अग्रणी रही है। संसार प्रसिद्ध दिव्य विभूतियों ने इस भूमि पर जन्म लेकर संसार को नई से नई दिशा दी है। कानूगोयान निवासी, वयोवृद्ध ज्योतिष के प्रकाण्ड पण्डित श्रद्धेय जसवन्तराय जी के अनेकानेक शिष्य हैं जो ज्योतिष की सही दिशा में ज्योति को प्रज्जवलित रख कर जन सेवा कर रहे हैं। उनके एक प्रमुख सुयोग्य शिष्य हैं श्री विजय कुमार दिव्य, यह अपनी विद्या में पूर्ण पारंगत हैं, और विवाह के योग का मिलान करना, अथवा विवाह कब होगा या नहीं होगा आदि विषयों के पूर्ण अधिकारी विद्वान् हैं। आपका निवास ज्योतिष धाम राजोगली बर्तन बाजार मुरादाबाद में है।

☞ धन्वतरी फार्मेसी चन्दौसी के संस्थापक स्व०पण्डित रामस्वरूप जी मिश्र के तेजस्वी पुत्र श्री सुरेन्द्र मोहन मिश्र जी काव्य, इतिहास, पुरातत्व एवं लोक—साहित्य के प्रणेता हैं। सुरेन्द्र मोहन मिश्र जी का

एक संग्रहालय है, इसमें प्राचीन पांडुलिपियाँ, सिक्के एवं ऐतिहासिक मूर्तियों का विशाल संग्रह है। मिश्र जी मेरे पास यदा कदा आते रहते हैं आपने अभी अपनी दो कृतियाँ मुझे भेंट की मैंने भी अपनी ४७ वीं कृति वेद उद्गीत भेंट की। आपके कण्ठपर सदैव अंगूर की बेटी विराज़मान रहती है।

के. जी. के. इण्टर कालिज मुरादाबाद के प्रधानाचार्य श्री प्रभात कुमार अग्रवाल ३० जून २००३ को सेवा निवृत हुये हैं। प्रभात कुमार जी रसायन विज्ञान पढ़ाते थे, हिन्दी और अंग्रेजी के भी विद्वान् हैं। श्री प्रभात कुमार जी से दुकान पर भेंट होती ही रहती है। वे दुकान पर आने की कृपा करते हैं। कभी कभी वेद विषय्यक चर्चा भी हो जाती है।

श्री प्रभात कुमार जी ने एक दिन कहा—कि मेरी इच्छा यज्ञ करने की हो रही है। आम की लकड़ियाँ देख रहा हूँ। मैंने कहा—यज्ञ में आम की लकड़ियाँ अनिवार्य नहीं, आम पीपल, बरगद, ढ़ाक, नीम, गूलर और यूकेलिप्ट्स आदि किसी को भी ले सकते हैं। बरगद, ढ़ाक और गूलर पुत्रेष्टि में, पीपल सरस्वती में, एवं रोग निवारण में नीम की लकड़ी का उपयोग होता है।

विदेह जनक के राज्य प्रासाद में याज्ञवल्क्य ऋषि यज्ञ की महिमा बता रहे थे। इसे सुनकर जनक जी ने कहा—यज्ञ कैसे होता है? ऋषि ने कहा—घी, सामग्री समिधा आदि से होता है। जनक जी ने प्रश्न किया कि यदि किसी समय, घी, सामग्री न हो तो कैसे यज्ञ किया जा सकता है। ऋषि ने कहा—काष्ठ (समिधा) से। जनक जी ने फिर कहा—यदि किसी अवसर पर समिधा भी न हो तो? ऋषि ने कहा—जल से अर्थात् एक पात्र में जल लेकर मन्त्र पाठ के पश्चात् जल से आहुति देते रहें। विदेह जनक जी ने कहा—यदि कोई ऐसा स्थान मिल जाय, जहाँ पर जल भी न हो तो क्या करें? इस पर याज्ञवल्कय ऋषि ने कहा यज्ञ का छेदन अर्थात् यज्ञ का त्याग न करें, उस अवस्था में मानसिक यज्ञ करें अर्थात् मन्त्र पाठ अवश्य करें।

मैंने श्री प्रभात कुमार जी से कहा—आप भी जब तक आप की इच्छानुसार समिधा न मिलें, तब तक आप जल से यज्ञ करना

आरम्भ कर दें। यज्ञ का प्रारम्भ कीजिये, दैनिक, साप्ताहिक, पाक्षिक जो भी आपके अनुकूल हो वह कीजिये। यज्ञ का शुभ आरम्भ कर दीजिये।

☞ श्री शंकर देव पाठक जी ने सत्यार्थ प्रकाश का संस्कृतानुवाद सम्वत् १९८१ वि० में किया था। जिसकी प्रकाशक भूमिका महात्मा नारायण स्वामी जी ने शताब्दी कार्यालय मथुरा में बैठकर माघ शुक्ला ६ सम्वत् १९८१ वि०. में लिखी थी। आपके सुपुत्र पं० भद्रदत्त पाठक आर्य समाज के अच्छे भक्तों में से एक थे। इनके सुपुत्र श्री हरीश चन्द्र पाठक हैं, इनके तीन पुत्र श्री कपिल पाठक, श्री सम्राट पाठक, श्री ऋषि पाठक हैं यह सभी गंज बाजार में पाठक इलैक्ट्रिकल के नाम से व्यापार करते हैं, श्री सम्राट पाठक जी ने मुझ से प्रश्न किया कि नमस्ते हाथ जोड़कर ही क्यों करते हैं। मैंने कहा—नमस्ते करने का एक प्रकार हैं, दोनों हाथ जोड़कर सीने के पास हृदय को स्पर्श करते हुए कुछ शीश झुकाकर करने का है। पाठक जी ने कहा—क्यों? मैंने कहा—इसका एक रहस्य है कि हम आपका स्वागत अपनी दोनों भुजाओं की सामर्थ्य के अनुसार, जो मेरे हृदय में प्रेम है उसका स्पर्श करते हुये और बुद्धि विवेक के द्वारा कुछ शीश को झुका कर दोनों हाथ जोड़कर हम आपका स्वागत करते हैं। इस समाधान को सुनकर श्री सम्राट पाठक जी अति प्रसन्न हुये और कहा—कि आज हमने नमस्ते के प्रकार को सही रूप से समझा। मैंने निवेदन किया कि आप अपनी उपासना में एक माला गायत्री मन्त्र के जाप की और जोड़ लें। पाठक जी ने इसे अपनी उपासना में जोड़ने का आश्वासन दिया।

☞ श्री बिन्दाप्रसाद जी आर्य समाज मण्डी बाँस के प्रधान थे, उनके सुपुत्र श्री वेदप्रकाश जी भी प्रधान पद पर आसीन रहे थे, स्वर्गवास के पश्चात् इनके गृह पर शुद्धि यज्ञ था, उसकी सूचना मुझे नहीं मिलने के कारण मैं वहाँ नहीं जा सका था। उस शुद्धि यज्ञ में श्रीमती निर्मला जी आर्य ने मेरी एक पुस्तक "विवेक शील बच्चे" जो उनके पास थी उसका वितरण किया। कार्यक्रम की समाप्ति पर कुछ महिलायें एक साथ बैठी बातें कर रही थीं, उसी बीच एक महिला ने कहा कि यह (वीरेन्द्र नाथ) भी महेश जैसे ही होंगे? इस

पर श्रीमति निर्मला जी आर्य ने कहा—आपने उनको अभी जाना नहीं है। वह तो एक दम सूखी लकड़ी के समान ही हैं। आज तक के जीवन में उनके ऊपर किसी को भी उंगली उठाने का कोई कारण नहीं दीख पाया और उनके जीवन में कोई भी दोष किसी भी प्रकार का नहीं देखने में आया और न सुना गया। हाँ स्पष्ट वादिता के कारण दोषी व्यक्ति उनसे खिन्न अवश्य रहते हैं।

एक दिन मैंने चाचा जी श्री वीरेन्द्र नाथ जी से प्रश्न किया कि वक्ता अपने प्रवचन से पूर्व जो नारी के लिये सम्बोधन करते हैं "मातृ शक्ति" क्या यह ठीक है?

उन्होंने इसका उत्तर देते हुये कहा—यह सम्बोधन अत्यन्त भ्रामक है। मैंने इस प्रकार के सम्बोधन करने वालों को देखा है कि वह नारी को केवल "मातृ शक्ति" ही मानते हैं अर्थात् वह केवल सन्तान को जन्म देने वाली ही मात्र है, वह सम्मान अथवा आदर के योग्य नहीं मानते, वे अवसर पाकर उसका शोषण करने से नहीं चूकते। मैंने इस प्रकार का सम्बोधन करने वाले व्यक्तियों में से ८०—८५ प्रतिशत व्यक्तियों को पाप में लिप्त ही देखा है। महामुनी चाणक्य नीति १२/१३ में कहते हैं "मातृवत्परादाराश्च" अर्थात् दूसरों की स्त्री को माता के समान मानने की आज्ञा की है। इस प्रकार वक्ता को नारियों का सम्बोधन करते हुये "माताओं और बहिनों" कहना ही सही है। और अब से लगभग २० वर्ष पूर्व यही सम्बोधन किया जाता रहा है। अब आकार कुछ विकृत मानसिकता के व्यक्तियों ने इसे बदला है जो ठीक नहीं।

महर्षि दयानन्द जी के जीवन की एक घटना आती है कि प्रातः काल समय ऋषिवर गंगा किनारे से होकर जा रहे थे, मार्ग में एक अबोध बालिका नग्न जा रही थी उसे देखकर ऋषिवर ने हाथ जोड़कर अभिवादन किया। उसी समय एक पौराणिक पं० आ गया। सामने ही एक शिवाला भी था, उसने कहा—दयानन्द आज शिवालय के सामने आपका शीष झुक ही गया। इस पर ऋषिवर ने कहा—देखो वह जा रही है जगत जननी माता, मैंने उसे शीष नवाया था।

इस घटना से शिक्षा मिलती है कि बच्ची को भी माता रूप में ही समझना चाहिये। मातृ शक्ति का सम्बोधन बिलकुल ही गलत है। श्रीमति निर्मला जी आर्य से यह चर्चा सुनकर सब को बड़ा आश्चर्य हुआ।

हाँडी के एक चावल को देखने से हाँडी का पता लग जाता है, परन्तु समाज में एक व्यक्ति को देखकर अथवा परख कर समाज के दूसरे व्यक्ति का अनुमान नहीं लगाया जा सकता। वहाँ तो प्रत्येक व्यक्ति को परखना और पहचानना होगा।

☞ धूरी पंजाब के निवासी महात्मा प्रेम प्रकाश वानप्रस्थी जी अत्यन्त सौम्य, विद्वान्, वेदज्ञ और उपदेष्टा हैं। आप कहा करते हैं—ऐसे कौन व्यक्ति हैं जिसे शिव दर्शन न होने के कारण स्वयं ही 'शिव' बन गये। स्वधर्म 'स्वभाषा' स्वसंस्कृति और 'स्वराज्य' की एक साथ घोषणा करने वाले कौन थे? देश में जागृति और क्रान्ति लाने के लिये लाखों 'देश भक्त' देने वाले कौन थे? नारी जागरण विध ावा विवाह का विगुल बजाने वाले कौन थे? गौ हत्या पर प्रतिबन्ध ा और भारत में सबसे प्रथम 'गौशाला'' के संस्थापक कौन थे? बिखरों, बिछुड़ों पिछड़ो और अनाथों के 'नाथ' कौन थे? भारतीयों पर हो रहे मुसलमानों और ईसाइयों के द्वारा सांस्कृतिक आक्रमण को विफल करने वाले कौन थे? अविद्या रूपी अन्धकार में ईश्वर की कल्याणी वाणी 'वेद' का सूर्य दिखाने वाले कौन थे? एक 'ओ३म्' की ही उपासना से मुक्ति के मार्ग दर्शक कौन थे? ऋषियों, मुनियों की परम्परा को जीवित करने वाले कौन थे? राष्ट्र भाषा 'हिन्दी' की घोषणा करने वाले कौन थे? विष देने वाले को जीवन दान देने वाले कौन थे? नास्तिकों को आस्तिक बनाने वाले कौन थे?

वह थे महापुरुषों में अग्रणी, अखण्ड ब्रह्मचारी, आर्य समाज के संस्थापक, युग प्रवर्तक महर्षि दयानन्द जी सरस्वती, जिनके वेद ज्ञान की ऊचाइयाँ हिमालय के समान और सागर के समान आध्यात्मिक गहराइया थीं।

आगे और कहते हैं—हम थूकते हैं, खकारते हैं, उसे मुर्गा चाट जाता है और हम 'मुर्गे' को खा जाते हैं। हम गन्दगी करते हैं

सुअर उसे खा जाता है और 'सुअर' मानव का खाजा बना जाता है। आर्य महा सम्मेलन यू. एस. ए. में घोषणा करते हैं—जिन पदार्थों में दुर्गन्ध है उन्हें नहीं खाना चाहिये जिनमें सुगन्ध है उन्हें खाना चाहिये। इस विषय में मेरा अपना मानना है कि खाद्य—अखाद्य पदार्थों की सही परीक्षा अग्नि से हो जाती है। जिस प्रकार अग्नि पर डाली गई लाल मिर्च सबको परेशान कर देती है, वही मिर्च हमारे पेट में जाकर जठराग्नि पर पड़ती है तो वही उपद्रव शरीर के अन्दर होने लगता है। अग्नि पर जिस पदार्थ के डालने से सुगन्ध, शान्ति और आनन्द प्राप्त हो वही खाने के योग्य पदार्थ हैं।

किसी असावधानी के कारण १ किलो देसी घी तीन वर्ष पुराना हो गया। परीक्षा हेतु यज्ञ में प्रयोग किया। यज्ञाग्नि ने तत्काल दुर्गन्ध छोड़ कर उत्तर दिया, यह खाने योग्य नहीं रहा। सोचा इसे किसी गरीब को दे दिया जाय, उसी समय बुद्धि ने कहा नहीं? चाणक्य ने कहा है—'आत्मवत्सर्व भूतानि' सब प्राणियों को अपने समान समझें। जो स्वयं खाना चाहता है उसे ही दूसरे के लिये दे, अन्यथा न दें।

अंग्रेजी में भोज्य पदार्थों के नाम से स्पष्ट है, वह कहते हैं 'वैजीटेरियन' जो खाने योग्य है, उसे शाकाहार कहते हैं और 'नान वैजीटेरियन' अर्थात् नान 'नहीं' खाने योग्य पदार्थ मासाहार। उन पदार्थों को नहीं खाना चाहिये।

महात्मा प्रेम प्रकाश जी को मेरी नई पुस्तक 'ईश महिमा' मिली। श्रीमति इन्दिरा एवं श्री वीरकान्त जी को पत्र द्वारा लिखते हैं—आपके द्वारा प्रेषित 'ज्ञानोपहार 'ईश महिमा' के लेखक वैदिक विद्वान् आर्य जगत के साहित्यकार, त्यागी, तपस्वी 'श्री वीरेन्द्र गुप्त:' ने विभिन्न गम्भीर विषयों को सरल बनाकर प्रस्तुत किया है। आपने इस कृति को छपवाकर, महान पुण्य का कार्य किया है, आप परम सौभाग्य शाली हैं। श्री वीरेन्द्र गुप्त: जी का आर्य जगत ऋणी है और रहेगा।

☞ बाजार गंज मुरादाबाद में सूरजमल सर्राफ एक प्रसिद्ध व्यक्ति थे, उनके सुपुत्र श्री राममोहन जी भी उसी दुकान पर उसी व्यवसाय को करते हैं। मैं अपनी हर नई पुस्तक उनको अवश्य भेंट करता हूँ। एक बार मैंने आनुपक् कहानियों की पुस्तक भेंट की। दो

दिन के पश्चात् जब मैं अपनी दुकान के लिये घर से जा रहा था तो श्री राममोहन जी ने मुझे पुकारा और कहा—हमारा पोता परमात्मा को नहीं मानता, उसी क्षण वह पोता भी दुकान पर आ गया, आगे कहा—आपकी इस पुस्तक को पढ़कर वह परमात्मा को अब मानने लगा है। मैंने कहा—उसने पानी में नमक घुल जाने वाली घटना पढ़ी होगी। इस पर राममोहन जी ने कहा—उसी से तो वह परमात्मा के व्यापक होने की बात को समझा। मैंने कहा—यह प्रभु की ही कृपा है, जो मेरी एक कहानी से उसके मन में व्यापक परमात्मा की अनुभूति जागृत हुई। यह मेरा सौभाग्य है।

☛ वहाँ शीश स्वत: नत हो जाता है जब कोई अपरिचित विभूति उसके श्रम का सही मूल्याँकन कर अपनी योग्यता से चुने हुये शब्द पुष्पों की माला गूँथ कर पत्र द्वारा समर्पित करता है तो उस समय आनन्द सीमा का अतिक्रमण कर दूर तक बहता चला जाता है। उसका अनुभव, वही कर सकता है, दूसरा कोई नहीं।

साहित्यकार डाँ. विद्या विनोद गुप्ता डी० लिट (यू.एस.ए.) पूर्व प्राचार्य चम्पा छत्तीस गढ़, से २९/९/२००३ को पत्र द्वारा अपने अनमोल उद्‌गार प्रस्तुत कर हमें श्रेय प्रदान करते है "श्री वीरेन्द्र गुप्त: की नवीन सृष्टि 'वेद उद्‌गीत' शोध पूर्ण कृति के लिये श्री वीरेन्द्र गुप्त: यश एवं गौरव के साथ बधाई के पात्र हैं। वे वेदों में रम—बस गये हैं। जिनके स्वास प्रस्वास में वेद मन्त्रों की ऋचायें नि:सृत होती हैं वे महामानव होते हैं। धर्म और कल्याण जिनकी समानान्तर पोषाक हो, उनके लिये धरा में ही स्वर्ग उतर आता है। वेद मनीषी को साधुवाद कहिये।"

☛ यदा—कदा यह प्रश्न सामने आता ही रहता है कि भाग्य क्या है? मेरी समझ से तो भाग्य अपने कर्मों का ही फल होता है। परन्तु हम यह नहीं समझ पाते कि किस कर्म का फल कब, क्या और कैसे मिलेगा। यह व्यवस्था परमात्मा की ही है, इसे कोई नहीं जान सकता।

नमस्या मो देवान् ननु हत विधेस्तेऽपिवशगा,
विधि वन्धीः सोऽकि प्रति नियत कर्मैक फलदः।
फलं कर्मायत्त यदि कि म मरैः किं च विधिना,
न मस्तत् कर्मभ्यो विधि रपिन मेभ्यः प्रभवति।।

भृर्तहरि

हम देवताओं को नमन क्यों करें। किंतु वह भी कठोर विधि
ा के हाथ में हैं। तो विधि को वन्दना करनी चाहिये, किन्तु विधि भी हमारे नियत कर्म के अनुसार फल देती है। यदि फल कर्मों के अध
ीन है तो फिर क्या देवताओं से क्या विधि से प्रयोजन, इसलिये हम इन कर्मों को ही नमन करते हैं जिन पर विधि का कोई प्रभाव नहीं है, अर्थात् कर्म स्वतन्त्र है।

इस प्रकार कर्म की ही विशेषता प्रतीत होती है अर्थात् कर्म ही प्रधान होता है।

☛ श्री कृष्णलाल जी अरोड़ा कपड़े के व्यापारी, कोठीवाल नगर में रहते हैं। इनके कई पुत्रियाँ हैं, एक बार मेरी औषधि 'सूर्य गुणी' भी दी गई। परन्तु कन्या ने ही जन्म लिया। कारण को खोजा पता लगा कि उनकी माता जी ने भी किसी और से औषधि लाकर सेवन करा दी थी। पता नहीं वह क्या थी। परिणाम विपरीत ही सामने आया। इसी को भाग्य कहते हैं। पूर्व कर्म इतने सबल थे कि उनपर किसी का बस नहीं चल पाया। उसके पश्चात् श्री कृष्णलाल जी अरोड़ा मुझ से 'सूर्य गुणी' औषधि कई बार ले गये और हर बार पूर्ण सफलता प्राप्त हुई।

इस औषधि से सम्पूर्ण भारतवर्ष में लगभग तीस हजार से भी ऊपर परिवारों में पुत्र की किलोल से घर के प्राणगण गूँज रहे हैं।

☛ मेरी लिखित व प्रकाशित पाँच सात पुस्तकें पढ़ने के पश्चात् श्री केशव सिंह जी चन्देल की मुझसे मिलने की उत्कण्ठा जागृत हुई। वह एक दिन मेरी दुकान पर आये और विस्तार से चर्चा होती रही, अन्त में योगासनों के सही स्वरूप को समझने के लिये अपनी इच्छा व्यक्त की मैंने उनसे घर पर आने का समय दिया। अगले दिन श्री केशव सिंह जी मेरे घर पर आये और आसनों को

समझा, अन्त में आसन लगाकर भी दिखाये। जाते समय भेंट स्वरूप में बादाम का एक पैकिट मुझे दिया। इसके पश्चात् वह बराबर सम्पर्क में बने रहे। वह अपने साधनों के साथ आगे पढ़ते चले जा रहे हैं। वह आज आर्य समाज हरथला रेलवे कालोनी के मन्त्री पद पर आसीन हैं।

१६/७/२००३ बुद्धवार सायं ५ बजे महाराणा प्रताप पार्क पीली कोठी मुरादाबाद में हो रहे कार्यक्रम में श्री मन्त्री केशव सिंह जी ने दानदाताओं को संस्था की ओर से धन्यवाद दिया।

यशपाल आर्य बन्धु ने अपने प्रवचन में कहा—'आर्य समाज संस्था नहीं है' इसको आप लोगों ने संस्था बना दिया है मन्त्री जी ध्यान दें।

प्रश्न है—महर्षि दयानन्द सरस्वती जी महाराज आर्य समाज के संस्थापक हैं। क्या संस्थापक ने संस्था की स्थापना नहीं की? या किसी चौपाल की स्थापना की थी। यह मेरा प्रश्न है?

आर्य समाज रेलवे हरथला कालोनी के वार्षिकोत्सव की सभा में १२—१३/१०/२००३ को पं० ज्ञान प्रकाश भजनोपदेशक ने तथा महावीर सिंह ने कहा—आर्य सामाज एक संस्था है। परन्तु मन्द बुद्धि विद्वान् उसे संस्था नहीं मानते। उस उत्सव की सभा में यशपाल सिर नीचा करे बैठे सुनते रहे, कोई प्रतिकार करने का नैतिक साहस नहीं हुआ, क्योंकि उनकी बात गलत थी। इस विषय पर १९/१०/३ को विचार गोष्ठी बुलाई गई उसमें यह महाविद्वान् लेखक उपस्थित नहीं हुये।

उस लेखक और वक्ता की बात पर कैसे ध्यान दिया जाय जो लिखता कुछ है और कहता कुछ है, उसे यह पता ही नहीं कि मैंने पूर्व में क्या लिखा था?

१९७५ में आर्य समाज रेलवे हरथला कालोनी की स्मारिका में यशपाल स्वयं पृष्ठ ५ पर लिखते हैं "आर्य समाज एक प्रगति शील संस्था है।" आगे पृष्ठ १० पर लिखते हैं "आर्य समाज एक क्रान्तिकारी संस्था है।"

श्री यशपाल स्वयं अपनी कई पुस्तकों में आर्य समाज को सस्था मान कर लिखते हैं कि आर्य समाज एक संस्था है यहाँ पर उन सबके सन्दर्भ देना कोई आवश्यक नहीं।

लगता है लेखक वक्ता विद्वान् केवल अपने आपको योग्य और औरों को मूर्ख समझते हैं।

यह बात कहाँ तक सत्य है, इसे पाठक स्वयं विचार लें।

☞ हैदराबाद सत्याग्रह के सैनानी श्री हकीम रामस्वरूप जी, जो खइया पतेई ग्राम के निवासी हैं। उनके सुयोग्य सुपुत्र श्री सूरज भान जी गुप्ता रेलवे में डी. आर. एम. आफिस से ३१/१/८९ को रिटायर होकर आर्य समाज की सेवा में लगे रहते हैं। श्री सूरज भान जी गुप्ता मेरी दुकान पर आये और कहने लगे कि मैं आपको जानता हूँ मैंने आपकी कई पुस्तकें पढ़ी हैं। परन्तु आप मुझे नहीं जानते। मेरे मन में आपके प्रति बहुत सम्मान है। आप अपने लेखन से संसार का उपकार कर रहे हैं। आप पं० लेखराम जी की आज्ञा का पालन कर रहे हैं। उन्होंने कहा था कि आर्य समाज से तहरीर और तकरीर का काम सदैव चलता रहना चाहिये, सो आप उसे पूरा कर रहे हैं।

☞ उन दिनों नगर में एक महात्मा आये और धन की अपार वृद्धि के लिये अपनी दुकान पर गोलक पर अपने चरणों का चित्र लगाकर उसकी पूजा करने का उपदेश देते थे। और कहते थे "चरणं शरणं आ गच्छामि" मेरे चरणों की शरण में आओ, अपार धन प्राप्त होगा। मैंने एक पुस्तक 'पर्वमाला' १९९९ में प्रकाशित की थी, उसमें यह सारा विवरण प्रस्तुत किया है।

टोकते रहने के स्वभाव का उपयोग करते हुये श्री राम प्रकाश अग्रवाल जो बर्तन बाजार में बर्तनों का व्यापार करते हैं, मैंने उनकी दुकान पर एक चित्र पैरों का लगा देखा। मैंने उनको प्रेरित किया समझाया, उन्होंने उस पर विचार किया और कुछ दिनों के पश्चात् उनकी समझ में आया और इस असत्य को त्यागकर चरणों का चित्र हटा कर सत्य को ग्रहण किया।

☞ मण्डी चौक चौराहे पर सर्राफा बाजार में श्री जापेश्वर सरन जी (जापो) की सर्राफे की दुकान पर एक दिन सामने ही उर्दू लिपि

में लिखा ताबीज (यन्त्र) शीशे में लगा देख कर मुझे बड़ा आश्चर्य हुआ। मैं इसे देखकर चुप न रह सका। मैंने जापो जी से कहा आपने आपनी दुकान पर यह जो सामने उर्दू का यन्त्र लगा रखा है, क्यों? जापो जी ने टालते हुये बड़ी उपेक्षा के साथ कहा—ऐसे ही लगा दिया है। मैंने कहा—क्या अपने पास ऐसे यन्त्र नहीं हैं? जो दूसरों से उध ार लेकर लगा रखा है? आप जितने कहें मैं तैयार करके दे सकता हूँ। आप इस भ्रम में न रहें कि इसे देखकर मुसलिम ग्राहक आपके पास रूकेगा। वह बहुत चतुर होता है, किसी के धोखे में आने वाला नहीं। इस टोका—टाकी ने श्री जापेश्वर सरन जी के मन में द्वन्द को जागृत कर दिया, सोचा, विचारा, समझा और सच्चाई की ओर मुड़कर देखा, कुछ ही दिनों के पश्चात् मैंने देखा तो वह उर्दू लिपि का यन्त्र वहाँ पर नहीं था उसे हटा दिया गया।

☞ साहित्य अपने मधुर कण्ठ से लेखक का स्वयं यशो गान करता है। उसकी गूँज को पाठक ही समझता है।

गुरुनाथ विश्वनाथ तुंगोव माल्की जि० बीदर कर्नाटक से पत्र भेजते हैं, वह अपनी भावना को शब्द पुष्पों के साथ प्रस्तुत करते हुये ३/१०/२००३ को लिखते हैं "वेद उद्गीत" अद्योपान्त पढ़कर आनन्द मिला, इसे घनान्त वेद पाठी विद्वानों को पढ़ने का अवसर मिलेगा तो उपयुक्त होगा। सचमुच ही धन्य हैं हमारे महर्षि, उनकी दूर दर्शिता। आपने बहुत कुछ श्रम उठाकर यह ग्रन्थ प्रकाशित कर उपकृत हुये हैं, अन्त: हार्दिक धन्यवाद देता हूँ। अगले पत्र में लिखते हैं — "हम जन्म लिये हैं मरने के लिये। मरने से पहले कुछ करने के लिये। तो बताओ कुछ करके और कुछ बन के।" सचमुच ही शरीर मन और आत्मा को उन्नत कर जीवन को आपने सार्थक किया है। बड़ी प्रसन्नता का अनुभव करता हूँ।

☞ श्री श्रीभगवान जी श्री ओमप्रकाश जी सेठ और मैं (वीरेन्द्र नाथ) की आपस में अच्छी मित्रता थी। कभी—कभी किसी के गृह पर तीनों का संयुक्त भोज भी हो जाया करता था। तीनों ने मिल कर नगर मुरादाबाद में माथुर वैश्य नवयुवक मण्डल के पुरुषार्थ से एक भवन का भी निर्माण कराया। यदा—कदा अपने वंश के उद्गम पर

भी चर्चा होती थी। मैं इसकी खोज में लगा। कई वृद्ध पुरुषों से चर्चा की और अन्तिम परिणति तक पहुँचा। जिसे मैंने पूर्व अंकित किया है।

☛ श्री मन्नु लाल जी मोहल्ला साहू में सर्राफे का काम करते थे, उनके सुपुत्र श्री ओम प्रकाश जी भी वही कार्य करते थे इनको औषधि निर्माण में बहुत रुची रहती थी। एक दिन श्री ओम प्रकाश जी मेरे पास आये और कहा हमारे लाला जी के बक्से में से यह पर्चा निकला, इसमें जो वस्तुयें लिखीं हैं, उनको मिलाने का कोई अनुपात नहीं लिखा है, लाला जी इसी की चाय बनबाकर पीते थे। मैं इसे तैयार करना चाहता हूँ, सो आप इसका अनुपात बनायें। मैंने कहा—इसे तो किसी वैद्य से ही मालूम करना चाहिये। श्री ओम प्रकाश जी ने कहा—मैं सब वैद्यों को जानता हूँ और उनकी योग्यता को भी। वह इसे नहीं बता सकते, हाँ! आप इसे अवश्य बता सकते हैं। मैंने कहा—कि मैं इस योग्य कहाँ! हाँ प्रयत्न अवश्य कर सकता हूँ। उन्होंने पर्चा दिया उसमें लिखा था ''जायफल, जावित्री, दारचीनी, लौंग, हरी इलायची'' मैंने विचार कर बताया जायफल ५ ग्राम, जावित्री १० ग्राम, दारचीनी १५ ग्राम, लौंग २० ग्राम, हरी इलायची २५ ग्राम। श्री ओम प्रकाश जी उसी समय इस मेरे बताये अनुपात से सब सामान लाये और कूट कर तैयार करके अगले ही दिन एक कप मेरे लिये उसकी चाय बनाकर भेजी, वह सन्तुष्ट और प्रसन्न थे।

कुछ समय पश्चात् उनके बड़े पुत्र दिनेश ने केशर का सेवन किया, जो उसे बहुत ही अच्छा लगा, उसने एक मास में लगभग २० ग्राम केशर का प्रयोग कर लियां। होली के पश्चात् मार्च में उसे गर्मी ने सताना आरम्भ कर दिया, परेशानी बढ़ने लगी। सम्भल के रईस हकीम को दिखाया, एक मास तक चिकित्सा चलती रही परन्तु कुछ अन्तर नहीं आया, तब दिनेश ने कहा—पिता जी! वीरेन्द्र नाथ जी आपके मित्र हैं, उनसे कुछ परामर्श करके देखिये। श्री ओम प्रकाश जी मेरे पास आये और सारी कथा सुनाई। मैंने कहा—यह ५,७ दिन में ही ठीक हो जायगा, आप सूखा धनियाँ

पंसारी की दुकान से लेकर उसमें से १० ग्राम रात को २०० ग्राम पानी में भिगोकर प्रात:काल मसल कर छान लें और उसमें शहद मिला कर शरबत पिला दें। ऐसा ७ दिन करें ठीक हो जायगा और वह ठीक भी हो गया।

श्री ओम् प्रकाश जी के छोटे पुत्र श्री महेश जी सरल और सौम्य स्वभाव के हैं मिलन सार हैं।

☛ मण्डी बाँस तिराहे पर श्री श्रवण कुमार एडवोकेट के छोटे भाई डी. एस. एम. डिग्री कालिज काँठ के प्रधानाचार्य श्री प्रो० पुष्पेन्द्र जी के घर पर गायत्री परिवार की ओर से एक कार्यक्रम था उसमें मुझे भी बुलाया गया था। प्रवचन कर्त्ता ने कहा—अब कलियुग समाप्त हो रहा है और सतयुग आने वाला है। मैंने खड़े होकर प्रश्न किया कि कलियुग की कितनी अवधी है। प्रवचन कर्त्ता ने कोई उत्तर नहीं दिया परन्तु उनके साथ उद्दण्डी सण्डमुसण्ड दो क्रूर व्यक्तियों ने मेरे ऊपर वाक्य प्रहार और भावनात्मक प्रहार करना आरम्भ कर दिया। मैं चुप हो गया, कारण श्री पुष्पेन्द्र जी के घर पर कार्यक्रम था। वहीं पर प्रवचन कर्त्ता आचार्य के पास श्रीमती सन्तोष नारंग जी भी बैठी थीं। वह मुझको जानती हैं, उन्होंने आचार्य से कहा यह श्री वीरेन्द्र गुप्त: जी हैं और आपने ४७ पुस्तकें अब तक लिखीं हैं। यह सुनकर आचार्य जी ने अपने अंग रक्षकों को शान्त रहने को कहा और अन्त में मुझे प्रसाद आचार्य जी ने स्वयं आकर दिया और अगले दिन मिलने की इच्छा व्यक्त की।

मैं अगले दिन मिलने गया, वहाँ पर आचार्य जी और पुष्पेन्द्र जी ही थे। मैंने कहा—मेरे २ प्रश्न हैं। १—गायत्री मन्त्र के किसी भी अक्षर का अर्थ स्त्री लिंग नहीं है तो गायत्री माता कैसे बन गई। २—गायत्री के यज्ञ में गायत्री मन्त्र के पश्चात् 'इदन्नमम्' आपके यज्ञों में बोला जाता है। क्या बता सकते हैं कि 'इदन्नमम्' का क्या अर्थ हैं? आचार्य जी ने कहा—इदन्नमम का अर्थ है, यह मेरा नहीं, तेरा है और तुझको ही अर्पण है। मैंने कहा—इसका यह अर्थ हुआ कि जो हम परमात्मा से गायत्री जाप के द्वारा बुद्धि की प्राप्ति करना

चाहते हैं, वह गलत है, क्यों? क्योंकि गायत्री यज्ञ में गायत्री मन्त्र के अन्त में हम इदन्नमम् कहकर प्रभु से कहते हैं, कि "हे प्रभु मैं जो आपसे बुद्धि माँग रहा हूँ, वह आपकी है, मेरी नहीं, इदन्नमम के द्वारा वह आपकी दी हुई बुद्धि मैं आपको ही वापिस करता हूँ, अर्थात् मुझे बुद्धि नहीं चाहिये मैं निरबुद्ध ही रहना चाहता हूँ," क्या यह सही और उचित है? चारो वेदों में केवल यही गायत्री मन्त्र ही एक ऐसा मन्त्र है जिसके द्वारा मानव परमात्मा से बुद्धि की याचना करता है। आचार्य जी ने कहा—हम आपके दोनों प्रश्नों का समाधान नहीं कर सकते, हमें गुरुदेव आचार्य श्रीराम शर्मा जी ने जो आज्ञा की है हम उससे बन्धे हुये हैं, हम उससे बाहर नहीं जा सकते इसी कारण हम वैसा ही कर रहे हैं। मैंने कहा—आप स्वयं इन दोनों प्रश्नों पर विचार कीजिये और सही बात को अपनाइये। श्रीमती सन्तोष नारंग जी एक प्रबुद्ध और कर्मठ महिला हैं।

☛ साहित्य सबके लिये उपयोगी होता है, परन्तु उसकी उपादेयता का हर कोई मूल्याँकन नहीं कर पाता, डा. देव शर्मा वेदालंकार रोहिणी देहली से ८/११/२००३ को पत्र द्वारा अपने उद्‌गार लिखकर भेजते हैं। 'वेद उद्‌गीत' वैदिक प्रसून पाकर मन सुमन हो गया। एक प्रशंसनीय कार्य आपके (वीरेन्द्र गुप्त:) माध्यम से जन—जन का हित साधक बन सकेगा, ऐसा मेरा मानना है। प्रस्तुत पुस्तक विद्वानों वेद पाठियों एवं वेद स्वाध्यायियों का स्फुट मार्ग दर्शन करने में पूर्ण सक्षम हैं एतदर्थ आप साधुवाद के पात्र हैं।

'इच्छानुसार सन्तान' मेरी सम्मत्ति में सर्वश्रेष्ठ कृति है। आपने क्यों? कैसे? इस विषय को छुआ। यह तो मिलकर ही जान पायेंगे, परन्तु विद्वानों व आचार्यों की दृष्टि १२८ वर्षों में इधर नहीं पड़ी, और न महर्षि दयानन्द के पश्चात् इसकी आवश्यकता ही महसूस की गयी। जिसका दुष्परिणाम हृदय को उद्वेलित कर देता है।"

☛ १९४८ में महात्मा गांधी की हत्या हो जाने के कारण, आर्यवीरदल की शाखाओं पर बहुत प्रभाव पड़ा। सबने अपने बच्चों को भेजना बन्द कर दिया। मैं (वीरेन्द्र साथ) मुन्नालाल जी और शम्भू

नाथ जी ही शाखा में जाते रहे, सब प्राणायाम का अभ्यास करते थे, इसमें भस्त्रिका प्राणायाम से सबको बहुत लाभ हो रहा था। मार्च के प्रारम्भ में श्री जगन्नाथ सिंघल और श्री राममोहन जी से आज्ञा लेकर शाखा को बन्द कर दिया।

होली के पश्चात् अप्रैल के प्रारम्भ में श्री मुन्ना लाल जी मुझे बजांजा गली में मिले, उनका चेहरा पीला पड़ा हुआ था। मैंने कहा—क्या हो गया? मुन्नालाल जी ने कहा चिनक बढ़ गई है। मैंने कहा—भस्त्रिका प्राणायाम कर रहे थे क्या? मुन्नालाल जी ने कहा हाँ कल तक कर रहा था। आज नहीं किया है। मैंने कहा—मैं तो पास में ही था, मालूम कर लेते तो यह संकट नहीं बनता, अब आप शीतली प्राणायाम करो, सब ठीक हो जायगा। और वह तीन दिन में ही ठीक हो गये।

☛ जून मास में मैं कटरे से श्री बाबूराम जी से दालें लेने गया। बाबूराम जी ने कहा—मुझे जुकाम बहुत तेज हो गया था, यहाँ पर वैद्य बनबारी लाल जी दीक्षित आये थे, उन्होंने बताया कि सात काली मिर्च तोड़ कर एक पाव पानी में डाल कर पकायें जब आधा पानी रह जाये तो उसे पीलेना। मैंने ऐसा ही किया। जुकाम तो ठीक हो गया परन्तु शरीर में बहुत गर्मी बढ़ गई और पेशाब भी बहुत पीला और जलन से आ रहा है, मैं क्या करुँ? मैंने कहा वैद्य जी ने यह नहीं सोचा कि आयु क्या है, ऋतु क्या है, और अनुपात क्या है? आपको तो केवल २ काली मिर्च, एक उबाल के पानी से ही ठीक हो जाता, खैर जो हुआ सो हो गया। अब रात को १ तोला सूखा ध
ानियाँ एक पाव पानी में भिगो देना और प्रातः काल मसल छान कर उसमें शहद मिला कर ३ दिन पी लें, ठीक हो जायगा। वह ठीक हो गये।

☛ २१/९/९५ गुरुवार के दिन सारे देश में फोन द्वारा किसी उद्दण्डी व्यक्ति ने समाचार दिया कि गणेश जी दूध पी रहे हैं। एक दूसरे ने सब को फोन किया, बुद्धि से कुछ नहीं सोचा और पूरे देश में लाखों टन दूध नालियों में बह गया। उस दिन बच्चों और रोगियों को दूध नहीं मिला।

वीरेन्द्र गुप्तः

मण्डी चौक चौराहे पर श्री रामाशंकर जी सर्राफ की दुकान है उनके सुपुत्र श्री संजीव कुमार जी ने मुझसे कहा—क्या आपने भी गणेश जी को दूध पीते देखा है? मैंने कहा नहीं! मेरा उस काल में जन्म ही नहीं हुआ था। श्री संजीव कुमार जी ने कहा—मेरा मतलब गणेश जी की मूर्ति से है आप जाकर देखिये। मैंने कहा—असत्य बात को क्या देखना, जड़ मूर्ति कभी दूध नहीं पी सकती। संसार में प्रकृति के विपरीत कभी कुछ नहीं हो सकता। मूर्ति का दूध पीना प्राकृतिक नियम के विरुद्ध है, यह कभी नहीं हो सकता। श्री संजीव कुमार जी ने कहा—हम दूध पिला कर आ रहे हैं। मैंने कहा—आपने कोई ध्यान नहीं दिया, कि दूध मूर्ति के शरीर पर होता हुआ नालियों में चला गया। यदि आप ध्यान से देखते तो आपको पता चल जाता कि दूध कहाँ जा रहा है?

विवेकहीन विचार, बुद्धि को नष्ट कर देते हैं, इसी कारण मिथ्याप्रचार से बड़े—बड़े पढ़े लिखे, वकील, डाक्टर, प्रोफेसर आदि सब बहकावे में आकर अपनी बुद्धि के प्रयोग को छोड़कर मिथ्याचार में फँस जाते हैं। जब सबने दूध को नालियों में बहता देखा तो इस पाखण्ड का भण्डा फोड़ हो गया।

☞ टाउनहाल पर मार्केट में कपड़ों का व्यापार करने वाले श्री सुशील कुमार जी से मेरी आते जाते नित्य नमस्ते हो जाती है। एक दिन श्री सुशील कुमार जी ने मुझे बुलाकर कहा—आप क्या काम करते हैं? मैंने उत्तर दिया कि देसी बही खाते की दुकान है। फिर कहा—इस समय दुकान पर कौन बैठा है? मैंने कहा—कोई नहीं! पुनः कहने लगे क्या कोई लड़का नहीं है? मैंने कहा—नहीं। तो किसी से कह आते हैं क्या? मैंने कहा नहीं। फिर आश्चर्य से कहने लगे—पीछे कौन देखता है? मैंने कहा—जब हम यह मानते हैं कि परमात्मा सर्वत्र व्यापक है तो वही देखता रहता है। क्या आपको कभी कोई हानि तो नहीं हुई? मैंने कहा—सन् १९३९ से आज तक नहीं हुई। श्री सुशील कुमार जी मुझे आश्चर्य से देखते रहे और कहा—आपका परमात्मा पर कितना दृढ़ विश्वास है। मेरे नेत्रों का प्रकाश कम हो गया है, आते—जाते किसी न किसी से टकराव हो

ही जाता है, मैंने देखा कि श्री सुशील कुमार जी और उनके छोटे भाई श्री राकेश कुमार जी मेरी रक्षा के लिये हर समय तैयार रहते हैं। उनका कितना स्नेह है मेरे साथ।

परमात्मा के दण्ड देने के, रक्षा करने के, और उपकार अथवा दया करने के सहस्त्रों प्रकार हैं। परमात्मा की इन व्यवस्थाओं में किसी का भी कोई हस्तक्षेप नहीं हो सकता। वह दण्ड के समय रक्षा या दया अथवा उपकार के समय दण्ड को आड़े नहीं आने देता। उसकी हर व्यवस्था पूर्ण स्वतन्त्र और पृथक—पृथक है।

२९ अक्टूबर २००३ बुद्धवार की रात्रि में मैं दुकान बन्द करके घर चला गया प्रातः गुरुवार के दिन जब मैं १०:३० पर दुकान आया तो दुकान के दोनों ताले गायब थे, शटर उठाकर देखा तो गद्दी पर पैरों के चिन्ह थे चोर पूरी दराज ही उठा कर ले गया। हानि आवश्य हुई। परन्तु यह परमात्मा की न्याय व्यवस्था ही है। जब दण्ड देना होता है, तो वह अवश्य मिलता है। उससे किसी भी प्रकार से बचा नहीं जा सकता।

यहाँ एक शंका उठती है, क्या भगवान जी! चोर को चोरी करने की आज्ञा देते हैं? नहीं! वह चोरी करने की आज्ञा किसी को नहीं देते, अष्टाँग योग के यम में 'अस्तेय' आया है जिसका अर्थ है चोरी न करना। वह दण्ड देने के लिये प्रेरित करते हैं, चोरी करने के लिये नहीं। यह बात दूसरी है कि जिसे दण्ड देने के लिये आज्ञा की, उसने चोरी का मार्ग चुनकर, चोरी करके, अपने लिये पाप कर्म संचित और कर लिया। चोरी का सम्बन्ध ईश्वरीय व्यवस्था से नहीं, दोषपूर्ण सामाजिक व्यवस्था से है।

☛ श्री अर्जुन वीर जी भौतिक विज्ञान के प्रोफेसर हैं। आपका मानना है कि वेद का भाष्य बिना विज्ञान के सही होना सम्भव नहीं है। उनका यह विचार मेरी समझ से निराधार है। वेद का भाष्य विज्ञान नहीं, वेद व्याकरण के बिना अपूर्ण होता है। वेद भाष्य की कसौटी अष्टाध्यायी, पातंजली का महाभाष्य, निरुक्त और निघन्टु ही हैं। इनके बिना वेद का भाष्य कभी सही नहीं हो सकता। वेद के द्वारा वैज्ञानिक खोज पुष्ट होती है और विज्ञान की कसौटी पर वेद के समस्त विषय

खरे उतरते हैं। इन दोनों को एक दूसरे की कसौटी न कहकर एक दूसरे का पूरक कहा जाये तो उत्तम है।

☛ सतीश चन्द्र शर्मा जैतली जी, इलाहाबाद बैंक में मैनेजर के पद से सेवा निवृत हुये। श्री सतीश चन्द्र जी मेरी दुकान पर यदा—कदा आते रहते हैं। यह शान्त और गम्भीर स्वभाव के व्यक्ति हैं सबको नेक परामर्श देते हैं।

☛ श्री सतीश कुमार गुप्ता जी एडवोकेट, मेरे पास साधना के सम्बन्ध में कुछ सीखने की इच्छा से आया करते। इनको गायत्री का साधन करने को प्रेरित किया और करने भी लगे। आत्मिक शान्ति प्राप्त होने लगी और मन में भी स्थिरता आने लगी। कई वर्षों से छोड़े हुए वकालत के व्यवसाय को अब पुन: आरम्भ कर दिया और उसमें पूर्ण सफलता भी मिलने लगी।

☛ श्री सुमन कुमार जैतली, राष्ट्रपति महोदय द्वारा सम्मानित अध्यापक अच्छे लेखक और कवि हैं, कई पुस्तकों के रचनाकार भी हैं। इनकी मेरे ऊपर बड़ी कृपा रहती है। इनको किसी के भी द्वारा मेरी आलोचना करना बिलकुल भी स्वीकार नहीं होती।

☛ अपने स्वभाव के अनुसार परिचित व्यक्ति पर कोई संकट दीखता है तो मैं सहसा उनसे अवश्य मिलता हूँ। इसी प्रकार मौ० साहू में श्री सत्यप्रकाश जी बर्तन के व्यापारी हैं उनके स्वास्थ्य में बहुत गिरावट को देखते हुये मैंने उनसे अस्वस्थ्य होने का कारण जानना चाहा और उन्होंने बताया भी। मेरे जाने के पश्चात् श्री सत्यप्रकाश जी के बराबर दूसरे बर्तन व्यापारी श्री राकेश कुमार जी अग्रवाल ने कहा—लाला क्या कह रहे थे? श्री सत्यप्रकाश जी ने कहा—गली में अपने बहुत हैं, नातेदार भी हैं, परन्तु किसी ने भी मुझसे स्वास्थ्य के बारे में कभी कुछ नहीं कहा। एक यह गुप्त: जी हैं जिनसे केवल आते जाते नमस्ते मात्र ही हो जाती है, उनके अन्दर कितनी आत्मीयता है, जो मेरे स्वास्थ्य के बारे में मालूम किया। यदि वह दो चार मिनट और रुक जाते तो मेरी आँखों से उन्हीं के सामने आँसू टपक पड़ते। कुछ दिन पश्चात् श्री सत्यप्रकाश जी मेरे पास आये और गायत्री साधन के लिये मार्ग दर्शन चाहा। वह अब हर प्रकार से सन्तुष्ट हैं।

☛ मेरे पास एक पत्र जयपुर से आया, उसमें लिखा था कि हम जम्मू कश्मीर के रहने वाले हैं। मेरे पति आफिसर ग्रेड की सर्विस में हैं, दो मास की ट्रेनिंग के लिये यहाँ पर आये हैं। एक अन्य अधिकारी के यहाँ रात्रि का भोज था। हम सब जने गये। मेरे पास २ पुत्रियाँ हैं। उनको देखकर उनकी पत्नी ने मेरी पत्नी से कहा—क्या आपके पुत्र नहीं हैं? मैंने कहा—नहीं। उन्होंने अपने पुस्तकालय में से आपकी पुस्तक इच्छानुसार सन्तान निकाल कर मुझे दी। मैंने घर आकर उसे रात्रि को ही पूरा पढ़ लिया और मन में विचार आया जो इस समय गर्भ है उसकी सफाई कराकर इस विधि से पुत्र हेतु गर्भधारण करुँ। आगे एक स्थान पर मैंने पुत्र की कामना हेतु 'सूर्यगुणी' औषधि के सेवन का सुझाव दिया है, उसे देखकर औषधि मंगवाने को पत्र लिखा। औषधि गई और जम्मू कश्मीर से पुत्र के जन्म होने की सूचना मिली।

☛ नैन सुधार अंजन, नेत्रों के लिये अपने समय की एक प्रसिद्ध औषधि रही है। उसके स्वामी वर्ग के एक घटक श्री सीताराम जी की कन्या का एक कस्बे के जमींदार महोदय के पुत्र के साथ विवाह सम्पन्न हुआ। उनके आठ लड़के थे। लड़कों के दादा दादी भी थे। परन्तु दुर्भाग्यवश सबके कन्या ही कन्या थी, पुत्र किसी के पास नहीं था। इनकी पुत्री के भी एक कन्या का जन्म हो गया। अगली बार जब गर्भ स्थिति हुई तो श्री सीताराम जी मेरे पास आये और सूर्य गुणी औषधि लेकर भिजवा दी। उसके पश्चात् पुत्र का जन्म हुआ, पूरे परिवार में अत्यन्त हर्ष मनाया जाने लगा और दूर—दूर तक के पचासो ग्राम वासियों का विशाल भोज किया।

☛ श्री रामचन्द्र जी मिलक निवासी सच्चे आर्य हैं, संध्या यज्ञ सदा करते ही रहते हैं। श्री विजेन्द्र सिंह जी धुरियाई के निवासी, स्वाध्याय शील हैं आपका तर्क अति उत्तम है। पौराणिक और मुल्ला इनसे अपनी शंकाओं का समाधान करने आते रहते हैं। श्री श्यामपाल सिंह काशीपुर में एक फैक्ट्री में गनमैन के स्थान पर कार्य करते हैं। यह तीनों श्रद्धालु मेरे पास अपनी अथवा औरों की शंकाओं का समाधान करने के लिये आ जाया करते हैं।

☛ गंज़ बाजार में कटरा पूरनजाट गली जिसे आज पंजाब ट्रंक हाउस गली के नाम से भी जाना जाता है। उसके प्रथम कोण पर आटे की चक्की लगी है। मैं वही से आटा लेता हूँ। इस दुकान के स्वामी श्री हरीश अग्रवाल हैं। इनकी टाँग में एग्जीमा जिसे दाद आदि भी कहते हैं, था। श्री हरिशचन्द्र ने मुझसे कहा—इसके लिये कुछ उपाय बताइये। मैंने कहा—वर्षा की ऋतु है नीम की निबोली आ रही हैं, पकी निबोली के गूदे को चूँस लिया करें और गुठली को घर पर सुखा कर रख लें। जब निबोली मिलना बन्द हो जाये तो नित्य दो गुठली तोड़ कर उसकी मींग चबाकर खाया करें, भोजन के पश्चात् खदिरारिष्ट भी लिया करें। श्री हरीश जी ने ऐसा ही किया और जैसे—जैसे रक्त शुद्ध होता गया रोग में कमी होने लगी।

श्री हरीश जी को बुखार आ गया १५ दिन तक डाक्टरों का इलाज़ होता रहा परन्तु बुखार पीछा नहीं छोड़ रहा था। एक दिन मुझसे चर्चा करने लगे कि डा० ने बहुत सी एण्टीवाइटिक दवायें खिला दीं और बुखार वहीं बना हुआ है। मैंने कहा—आप सुदर्शन चूर्ण और सितोपलादि चूर्ण दोनों को मिलाकर सेवन करें, आपका बुखार कुछ ही दिनों में ठीक हो जायगा और वह ठीक हो गये।

हरपीस जिसे मकड़ी फलना भी कहते हैं, इसमें आग बहुत निकलती है, इस पर नीम की कोमल पत्तियों को पीसकर, उसमें थोड़ा सा असली देसी कपूर मिला का लेप करने से बहुत आराम मिलता है, लेप नित्य ताजा लगाया करें।

☛ रामपुर स्टेट में हमारे खानदानी चाचा श्री केशव सरन जी कागज का व्यापार करते थे। मैं एक विवाह में रामपुर गया था, जनमासे से विवाह स्थल पास ही था। मैं विवाह स्थल की ओर जा रहा था, मार्ग में एक मोड़ पर दुकान पर बैठे चाचा श्री केशव सरन जी के जेष्ठ पुत्र श्री आनन्द जी सिगरिट पी रहे थे, मेरे पहुँचते ही सिगरिट को छिपाने का अवसर नहीं बना तो, उन्होंने मेरे सामने भी सिगरिट की डब्बी प्रस्तुत की। इस धृष्टता को देखकर मैं चकित रह गया और मैंने कहा मैं इसका प्रयोग नहीं करता। इस पर आनन्द ने कहा—हाँ! आप तो जोड़ने पर ही लगे हैं। मैंने उसी क्षण उत्तर दिया

आप फूँकने पर, और मैं आगे चला गया। उसी आनन्द ने घर की सारी अर्थ व्यवस्था को चरमरा दिया और सब कुछ नष्ट भी हो गया। श्री केशव सरन जी के छोटे सुयोग्य, कवि विधा से जुड़े हुये सुपुत्र श्री हीरालाल किरण सत्यार्थ शास्त्री जी ने अपनी नई कृति 'गीता गीतों में' मेरे पास भेजी। श्री हीरा लाल किरण जी की इससे पूर्व ६ कृतियाँ और भी प्रकाशित हो चुकी हैं।

☛ अबोहर निवासी प्राध्यापक श्री राजेन्द्र जिज्ञासु जी आर्य समाज का सम्पूर्ण इतिहास के इतिहासकार हैं। आपने अनेकों पुस्तकों की रचना की है, आपका अबोहर में एक विशाल पुस्तकालय है, जिसमें सहस्त्रों दुर्लभ ग्रन्थ हैं। प्रवचन शैली इतनी मधुर है कि सभी श्रोता मन्त्र मुग्ध हो जाते हैं।

श्री राजाराम जिज्ञासु जी! आप बदायुँ के निवासी हैं, आपके पास भी एक विशाल पुस्तकालय है, जिसमें हर प्रकार के अप्राप्त ग्रन्थ उपलब्ध हैं।

मेरा यह सौभाग्य रहा है कि मैं दोनों ही जिज्ञासुओं का स्नेह, पात्र हूँ।

☛ लाला अनन्तराम जी के दो लड़के थे, एक श्री चन्द्र प्रकाश जी, जो कटरा नाज में छाली कत्थे का थोक व्यापार करते थे। दूसरे श्री कैलाश जी, जो मण्डी चौक में कैलाश बटन स्टोर के नाम से जनरल स्टोर और दीपावली और शब्बेरात पर अतिशिबाजी का थोक व्यापार करते। एक दिन लाला अनन्तराम जी मेरी दुकान पर आकर बैठ गये, मैंने कहा—आप मेरे पास आकर बैठ जाया करें। मैंने अपनी दुकान पर एक कोने में चादर गद्दीदार बिछा दी उसी पर नित्य आकर बैठ जाया करते थे।

प्रश्न उठता है सन्तान क्या है? सन्तान के कई सम्बोधन हैं। हर सम्बोधन का गुण—धर्म अलग—अलग है। वह उससे अवश्य प्रभावित होती है।

१— जिसे आत्मज कहते हैं, अर्थात् वह अपनी आत्मा का प्रति रूप होकर सबका कल्याण कारक होता है। जिसका निर्माण साधना के रूप में हर प्रकार की सावधानी के साथ तप द्वारा किया जाता है।

२— जिसे पुत्र कहते हैं। मनुजी महाराज ९/१०७ में कहते हैं "स एव धर्मजः पुत्रः" जिसके उत्पन्न होने से पितृ ऋण दूर होता है और मोक्ष प्राप्त होती है उसी को धर्मज पुत्र कहते हैं। अथर्ववेद २०/१२९/५ में कहा है—"साधु पुत्रम् हिरणयम्" तेजस्वी श्रेष्ठ पुत्र की कामना की है। नरक से जो बचाये।

३— जिसे लड़का कहते हैं। इसके लिये मनु जी ने कहा है "कामजानितरान्विदुः" उसे कामज अर्थात् वासना पूर्ण लिप्त अवस्था में प्राप्त सन्तान को लड़का कहते हैं।

४— सन्तान उसे कहते हैं जिससे सन्तति चलती है। सन्तति श्रेष्ठ पुत्र से ही चलती है, ऋग्वेद १०/५३/६ में कहा है "मनुर्भव जनया दैव्यं जनम्" हे मनुष्य तू मनन शील हो और दिव्य गुण वाला पुत्र व शिष्य तैयार कर संसार को दे। ऐसे पुत्र को 'सुत' भी कहते हैं।

जिस प्रकार की सन्तान को आपने जन्म दिया है, उसका वही फल होगा। बबूल का पेड़ बोने पर काँटे ही मिलेंगे, आम नहीं! इसलिये आश्चर्य क्यों?

'पिता'—शब्द में पालन, रक्षा, विकास और अपना पूर्ण संचित अनुभव देने की क्षमता और भावना छिपी है, वह भावना अथवा मन्तव्य फादर या डैडी में नहीं।

'माता'—शब्द में जो स्नेह, ममता, लाड़, दुलार और माता को अपना सब कुछ पुत्र पर न्यौछावर करने के लिये जो प्रेरणा स्फुरित होती है वह मदर या मम्मी में नहीं होती और न हो सकती है।

'गुरु—शब्द में सम्पूर्ण विद्या, शिक्षा, गुर और समस्त ज्ञान भण्डार देने की उदारता छिपी है वह मास्टर, अध्यापक, ट्यूटर, टीचर आदि में नहीं होती।

पुत्र, पिता, माता, गुरु आदि गौरवमयी, शब्द रचनाओं की शब्दावली के उच्चारण से जो मन, बुद्धि से तरंगें निकलती हैं, जीवन पर उनका प्रभाव निश्चित ही होता है।

☞ रामपुर स्टेट में आर्य समाज के वार्षिकोत्सव करने के लिये नवाव साहब की ओर से एक दिन प्रति वर्ष दिया जाता था। एक बार

दारानगर गंज स्थित स्वामी केवलानन्द जी के आश्रम से एक ब्रह्मचारी रामपुर आर्य समाज के उत्सव पर आये। उन्होंने अपने प्रवचन में कहा—"गऊ दूध पीने वा्ले का, गऊं मास खाने वाला मुकाबला नहीं कर सकता" उत्सव में नवाब साहब के बैठने की विशेष व्यवस्था की जाती थी, उनके पास बैठे नौजबान पट्ठे ने खड़े होकर कहा—"ऐं! क्या कहता है, मैं नित्य एक बछिया का खून पीता हूँ, क्या मुझसे लड़ेगा?" इस प्रतिकार का ब्रह्मचारी ने कोई उत्तर नहीं दिया और अपनी बात को पुन: कह दिया। इस पर पहलवान ने पुन: लड़ने के लिये ललकारा, इस पर ब्रह्मचारी ने कहा—नवाब साहब बैठे हैं, इन को लिखकर दे दे और मैं भी लिखकर दिये देता हूँ कि "यदि कोई किसी के हाथों मारा जाय तो वह अपराधी नहीं होगा।"

सभा स्थली अखाड़ा बन गई। पहलवान ने लंगोट कसा और ब्रह्मचारी ने अपनी धोती कसी और पहलवान से भिड़ गये। पहलवान ऊपर ब्रह्मचारी नीचे। पहलवान ने पूरा जोर लगाया परन्तु वह ब्रह्मचारी को जरासा भी नहीं हिला सका, पाँच मिनट में ही पहलवान का स्वाँस फूलने लगा, उचित अवसर जान कर ब्रह्मचारी ने पैंतरा बदला और पहलवान को नीचे ले लिया और अपने आप ऊपर आ गये और उसकी गर्दन पर अपनी कोहनी के दो घस्से मारे, पहलवान के प्राण पखेरु उड़ गये।

यह देखा गया है कि मास खाने वाले का स्वाँस शीघ्र ही फूलने लगता है और दूध पीने वाले का स्वाँस स्थिर रहता है। इसी कारण दूध पीने वाला मांसाहारी पर भारी पड़ जाता है।

नवाव साहब को गतकाफरी का खेल बहुत प्रिय था। यदा—कदा वे इसका आयोजन करते ही रहते थे। एक बार नवाव साहब ने घोषणा करी, जो जीतेगा उसे उपहार में तलवार दी जायगी। यह समाचार चारो ओर फैल गया, दूर—दूर से पटेबाज आये, और नवाव साहब के पटेबाज से हार कर बैठते चले गये। इस कार्यक्रम में नगर मुरादाबाद के पटेबाजी के खलीफा श्री मोहन लाल जी भी अपने साथ एक शिष्य को लेकर गये। वे भीड़ में खड़े थे, अचानक

भीड़ से निकल कर नवाव साहब से कहा कि मैं भी खेलना चाहता हूँ। आज्ञा मिलने पर मोहन लाल जी ने चेले से अपना गतका लिया और उल्टे पैंतरे से खेलने लगे। पटेबाज ने कहा—क्या? खेलना नहीं आता! चला जा। मोहन लाल जी ने कहा नहीं—नहीं आप जैसे कहेगें मैं वैसे ही चलूँगा, आप बताइये कैसे चलूँ। इस पर पटेबाज ने पैंतरा चलकर बताया और कहा—ऐसे चल। मोहन लाल जी ने इसे भ्रमित कर दिया और कहा मैं ऐसे ही चलूँगा। खेल होने लगा १० मिनट के पश्चात् ही मोहन लाल जी ने एक तेज आवाज से कहा—'कन्पटी रोक'। पटेबाज कन्पटी का रोध न ले सका और मोहन लाल जी का तेज प्रहार कन्पटी पर हुआ, कन्पटी फट गई और रक्त बहने लगा। चारो ओर से आवाज उठी 'पकड़ लो कौन है?' गुरु चेले दोनों सतर्क हो गये, जब तक दोनों के हाथ में गतका है कोई पास तक आने का साहस ही नहीं करेगा। इसी बीच किसी ने मोहन लाल जी को पहचान लिया और नवाव साहब से जाकर कहा कि यह मुरादाबाद के खलीफा हैं। नवाव साहब ने स्थिति को देखा कि वह दोनों भी सतर्क हैं, सबसे चुप रहने को कहा और मोहन लाल जी को आदर के साथ 'आइये खलीफा जी' कहकर पुकारा और उनकी वीरता और हुनर की प्रसंसा करते हुये, पुरुस्कार रूप में स्याहकलम की नकाशीदार मूठ लगी तलवार भेंट में प्रदान करी।

श्री मोहन लाल जी खलीफा के मुरारीलाल जी, मुरारीलाल जी के जगन्नाथ सिंघल, जगन्नाथ सिंघल के विनोद कान्त सिंघल, कृष्ण कान्त सिंघल पुत्र हैं। आज भी वह तलवार उनके पास रखी है। १९४५ से मेरा सम्पर्क श्री जगन्नाथ सिंघल जी से रहा।

☞ श्री वेद प्रकाश जी रस्तौगी अमरोहा आर्य समाज के कर्मठ कार्य कर्त्ता थे। आर्य समाज के लिये समर्पित थे। वह होम्योपैथी के बहुत अच्छे चिकित्सक भी थे। बहुत से बिगड़े हुये केसो को ठीक करके उनके जीवन की रक्षा की। जब कभी वह मुरादाबाद आते थे तो मेरे पास आने की अवश्य कृपा करते थे। एक बार उन्होंने कहा था—वीरेन्द्र जी। इस गिरावट के समय पर भी अन्य मतावलम्बियों की अपेक्षा से आर्य फिर भी श्रेष्ठ हैं, संसार के सभी मतावलम्बी

प्रत्येक आर्य की दिनचर्या पर बहुत ध्यान देते हैं, वह उसके आचरण से व्यवहार से, क्रियाकलाप से कुछ सीखना चाहते हैं। इसलिये प्रत्येक आर्य को अपनी जीवन शैली को, अपने आचार–विचार, व्यवहार को शुद्धरूप से प्रस्तुत कर आदर्श स्थापित करते रहना चाहिये।

☛ पूर्ण भारतीय परिधान से सज्जित कॉठ निवासी श्री सुरेश चन्द्र जी आर्य, एक सच्चे आर्य हैं। आर्यों में जो गुण होने चाहिये, वे सब इनमें विद्यमान हैं, दानी हैं, परोपकारी भी हैं। मेरा परिधान भी पूर्ण भारतीय है, मैं टोपी सदैव एक ही रंग की प्रयोग करता हूँ, इसी कारण बहुत से व्यक्ति दूर से ही टोपी देखकर मुझे पहचान लेते हैं। एक बार मैं जा रहा था, कुछ दूर से श्री सुरेश चन्द्र जी ने टोपी देखकर पीछे से आकर मेरे कन्धे पर हाथ रखा और वीरेन्द्र जी नमस्ते कहा और कहा मैंने टोपी देख कर आपको दूर से ही पहचान लिया। श्री सुरेश चन्द्र आर्य जी के दो पुत्र हैं। एक श्री राकेश चन्द्र जी आर्य सी.ए. हैं जो मुरादाबाद में ही अपनी प्रैक्टिस करते हैं। दूसरे दिनेश कुमार जी आर्य कॉठ में ही अपने पैतृक व्यापार को देखते हैं।

'आर्य समाजी' और 'आर्य' में अन्तर है। आर्य समाजी, आर्य समाज का सदस्य ही मात्र होता है, परन्तु आर्य, आचरण से आर्य होता है, चाहे वह आर्य समाज का सदस्य हो या न हो।

☛ जड़ी बूटियों के विक्रेता ब्रजलाल राम सरन दास के स्वामी श्री विष्णु जी की दुकान पर दो सज्जन कुछ लेने आये, किसी वस्तु में शंका उत्पन्न हो गई, उसका निवारण हेतु श्री विष्णु जी ने उनको मेरे पास भेज दिया। वह दोनों मेरे पास आये, उनका समाधान किया। एक सज्जन से मैंने परिचय जानना चाहा, तो उन्होंने उत्तर दिया कि मुझे 'महेश दिवाकर' कहते हैं। मैंने अचम्भे से कहा—क्या आप प्रसिद्ध कवि, साहित्यकार महेश दिवाकर जी हैं? उत्तर मिला—जी हाँ! मैंने कहा—आपका नाम बहुतों से सुना था, दर्शन आज अनायास ही हो गये। दिवाकर जी ने कहा—आपका क्या शुभ नाम है? मैंने कहा—मुझे वीरेन्द्र गुप्त: कहते हैं। अत्यन्त आश्चर्य और प्रसन्नता से कहा कि मैं आपसे कई बार मिलने की इच्छा करता रहा, आज आपसे अचानक ही मिलन हो गया। अगले दिन श्री दिवाकर जी ने

अपने हस्ताक्षरों सहित एक पुस्तक ''डा. महेश दिवाकर सृजन के बीच'' मुझे भेंट की। उदार साहित्यकार की ऐसी ही छवि होती है। मैंने भी श्री दिवाकर जी को अपनी कई कृतियाँ भेंट कीं।

☛ श्री रामाशंकर जी सीनियर एडवोकेट हैं। प्रत्येक न्यायालय में इनके तर्कों को ध्यान से सुना जाता है। आपकी एक विशेषता है कि विपक्षी से कोई समझौता अथवा सौदा नहीं करते, न किसी न्यायिक से। अपने तर्कों पर केस जीतने का पूरा प्रयत्न करते हैं। श्री रामाशंकर जी एडवोकेट, श्री सतीश चन्द्र गुप्ता जी एडवोकेट, श्री रामअवतार जी रम्मन बाबू, इन तीनों ने राजकीय महाविद्यालय में एक साथ शिक्षा प्राप्त की, इन तीनों में अत्यन्त घनिष्ट मित्रता है। एक बार इन तीनों का पर्यटक के रूप में डा० जगतप्रकाश जी आत्रेय, दर्शन शास्त्री जी के साथ जाने का सौभाग्य प्राप्त हुआ था। इन सभी महान विभूतियों ने मेरे अभिनन्दन के कार्यक्रम में उपस्थित होकर मुझे शुभाशीष प्रदान कर मेरा सम्मान किया था।

☛ राजस्थान के निवासी, कविराज वैद्य प्रभु दयाल जोशी जी उच्चकोटि के सफल चिकित्सक हैं, जो नगर मुरादाबाद को आयुर्वेद के द्वारा रोगमुक्त करने का प्रयत्न कर रहे हैं। जिस प्रकार राजस्थान के वीरों ने कभी भी यवन शासन की दास्ता स्वीकार नहीं की, इसी प्रकार वैद्य प्रभुदयाल जोशी जी ने भी ऐलोपैथिक चिकित्सा को कभी प्रोत्साहन नहीं दिया। एक दिन वैद्य जी से मेरी शुक्राणुओं के विषय पर चर्चा हुई और मैंने कहा—शुक्राणु और शुक्रकीट यह दोनों अलग—अलग हैं मैं ऐसा मानता हूँ। जिसे मैंने अपनी पुस्तक इच्छानुसार सन्तान में विस्तार से अंकित किया है। वैद्य जी ने इसे स्वीकार किया और कहा आपने कहाँ से आयुर्वेद की शिक्षा प्राप्त की। मैंने कहा—गुरुचरणों में बैठ कर। इस पर वैद्य जी बहुत प्रसन्न हुये और कहा—आपनें आयुर्वेद को बहुत बल दिया है।

☛ हिन्दू कालेज के प्रोफेसर को मुझ से मिलने का सुझाव मिला, वह मेरे पास आये और बताया कि मैं २ वर्ष से अस्वस्थ चल रहा हूँ, डाक्टरों से बहुत इलाज कराया परन्तु कोई लाभ नहीं मिला। मैंने कहा—उपद्रव क्या है? प्रोफेसर ने बताया—कि मैं कक्षा में जाकर

चुप बैठ जाता हूँ, कुछ भी पढ़ाने को मन नहीं करता, शरीर गिरता ही चला जा रहा है, घर पर भी गुम सुम पड़ा रहता हूँ। मैंने उनको पहले एक सप्ताह 'अभ्यारिष्ट' सेवन करने को कहा। प्रोफेसर एक सप्ताह के पश्चात् आये और कहा—अब मुझे कुछ राहत लग रही है। मैंने कहा—अभ्यारिष्ट अभी और चलेगा, उसके साथ रात्रि को एक गोली दूध से 'ब्राह्मीवटी' का और सेवन करें। दस दिन पश्चात् आकर कहने लगे कि मैं अब बिलकुल ठीक हूँ। मैंने कहा—अब आप १० दिन ब्राह्मीवटी का और सेवन करें साथ में वसन्तकुसुमाकर का भी १० दिन सेवन कर लें। वह पूर्ण स्वस्थ हो गये।

☞ अमरोहा गेट पर एशियन पेन्ट्स की प्रसिद्ध दुकान है, अपने पिता श्री रमेश कुमार जी के साथ श्री मनोज अग्रवाल उसी प्रतिष्ठान पर विराजते हैं। यदा कदा इनके पास श्री कैलाशदत्त तिवारी जी भी आ जाया करते हैं। एक दिन श्री तिवारी जी ने कहा—गुप्तः जी 'सत् और सत्य' में क्या अन्तर है? मैंने कहा—हम और आप इस समय श्री मनोज जी की दुकान पर बैठे—बैठे कुछ चर्चा कर रहे हैं, यह सत्य है। परन्तु कुछ देर पश्चात् जब हम और आप चले जायेंगे तो पहला सत्य समाप्त हो गया, जो कुछ समय पूर्व सत्य था, अब यह सत्य है कि उस स्थान पर न मैं हूँ और न आप, इस प्रकार सत्य परिस्थिति जन्य होता है।

'सत्' कहते हैं शाश्वत को जे सदैव एक रूप में ही रहने वाला है, जो कभी बदलता नहीं। जैसे ईश्वर 'सत्' है सदैव रहने वाला है, जीव भी 'सत्' है इसी प्रकार प्रकृति भी 'सत्' है। जिस प्रकार यह तीनों सदैव रहने वाले, कभी नष्ट न होने वाले हैं, उसी प्रकार 'सत्' सदैव रहने वाला, जिसमें कभी कोई परिवर्तन नहीं, जो तीनों कालों में, एक सा रहे उसे 'सत्' कहते हैं, और इसी 'सत्' को 'ऋत' भी कहते हैं। सत् और सत्य का यही अन्तर है।

एक और 'सत्व' है, यह बिल्कुल अलग है। इस 'सत्व' को गुणवाचक नाम से जाना जाता है—जैसे 'सत्व, रज, तम' यह तीन गुण होते हैं। अर्थात् 'सतोगुण, रजोगुण, तमोगुण। इस प्रकार सत्य, सत् और सत्व यह तीनों अलग अलग हैं।

श्री राम बहादुर सक्सैना जी स्वाध्याय शील आर्य हैं। सेवा निवृत होने के पश्चात् उनके पास स्वाध्याय हेतु जो जो पुस्तकें जिस–जिस की थी वह सब वापिस कर दीं, एक पुस्तक शेष रह गई थी, उसका पता नहीं चल रहा था, किसकी है। वह मेरे पास आये और यह सब स्थिति बताई। मैंने कहा—आपके पास जो पुस्तक है। वह बड़े आकार की है, पक्की जिल्द है, नीली छींट गोलाकार डिजाइन की उस पर लगी है, उसका नाम 'स्वाध्याय संदोग' है। श्री सक्सैना जी ने आश्चर्यचकित होकर कहा—आपको यह सब कैसे मालूम? मैंने कहा—यह पुस्तक मेरी है, मैं इसे बहुत समय से खोज रहा था, आज अनायास आपके पास मिल गई। इस पर श्री रामबहादुर जी हँसे और कहा आपकी पुस्तक कल आ जायगी।

श्री रामबहादुर जी ने अपने गृह पर श्री स्वामीवेदानन्द जी को जिनका पूर्व नाम "श्री मौलाना सत्यदेव" था को भोज पर आमन्त्रित किया। भोजन का पारस हुआ, स्वामी जी खाने लगे। कुछ देर पश्चात् श्री रामबहादुर जी हाथ जोड़कर स्वामी जी के सामने आंकर बैठे और मुस्कराते हुये कहा—मैंने आपकी परीक्षा लेने के लिये शाक में नमक और खीर में मीठा नहीं डाला था, आप उसमें पास हो गये। आप सच्चे सन्यासी हैं। साधु हैं स्वादु नहीं। मैं क्षमा चाहता हूँ।

मेरा नागरिक अभिनन्दन ७ जनवरी १९९६ को हुआ था, उस अवसर पर एक अभिनन्दन ग्रन्थ भी प्रकाशित हुआ था। उसमें सम्पूर्ण भारतवर्ष से लेख आये थे, उनको प्रकाशित किया गया। एक अवसर पर श्री रामसरन जी वानप्रस्थी अब सन्यास ग्रहण कर शरणानन्द जी के नाम से प्रसिद्ध हैं, ने कहा—आपने मेरा लेख जैसा का तैसा छाप दिया था, मैंने उसमें आपकी त्रुटियों पर भी प्रकाश डाला था, आपने उसे अलग नहीं किया, यह देखकर मेरी श्रद्धा आपके प्रति और अधिक बढ़ गई कि आप अपनी कमी को भी सबके सामने आने से नहीं रोकते।

नगर प्रसिद्ध कवि जी मेरे पास आये और कहा कि आप मेरे बारे में कुछ लिखकर दीजिये। मैंने लिखकर दे दिया, वह उनकी

पसन्द नहीं आया और अपने आप अपनी पसन्द का लिखकर मेरे पास लाये और उस पर मेरे हस्ताक्षर करा लिये।

अपनी पसन्द, विचार, छवि, द्रष्टिकोण यह सब अलग अलग होते हैं। सही बात को स्वीकार करना बड़ा कठिन होता है।

☛ नगर मुरादाबाद की जन संख्या बहुत कम थी, यहाँ पर पंसारी ही कागज, कापी, बहियाँ आदि रखते थे। मेरे पिता श्री लाला भूकन सरन जी ने सन् १९१४ में कागज का व्यवसाय प्रारम्भ किया था, उससे पूर्व किराने का काम था। उस काल में बही खाते का कागज हाथ का बना हुआ सम्भल में तैयार होता था। वह कागज चिकना, साफ और टिकाऊ होता था उसी कागज का प्रयोग बही खाते में होता था। कुछ समय के पश्चात् विदेशी कागज ने भारत में

प्रवेश किया। स्वाधीनता के पश्चात् अब सारा कागज मशीनों द्वारा भारत में ही बनता है, और पास के देशों को निर्यात भी होता है।

☛ हुसैन पुर हमीर के निवासी डा. राम कृपाल सिंह जी एक अच्छे कुशल चिकित्सक हैं, कृषक हैं उद्यमी और पुरुषार्थी हैं। मन के इतने उदार हैं कि सबके संकटों में पूरा साथ देते हैं।

☛ अरोड़ा टैन्ट हाउस के स्वामी श्री महेन्द कुमार जी अरोड़ा, मेरे सदैव रक्षक रहे हैं, कई दुष्टों से उन्होंने मेरी रक्षा की है।

☛ राज प्रिन्टर्स के स्वामी श्री राजकुमार जी के प्रेस में मेरी पुस्तकें छपती थीं। एक बार पुत्र प्राप्ति का साधन टाइटिल छप रहा था, मैं उसे देखने गया, उस समय एक व्यक्ति ने व्यंग्यात्मक रूप से मुझसे प्रश्न किया—क्या, जिसका विवाह न हुआ हो तो उसके भी पुत्र हो जायगा? मैंने भी उसी प्रकार उत्तर दिया। हाँ हो जायगा। उस व्यक्ति ने बड़े आश्चर्य से कहा—कैसे? मैंने साधारण सा उत्तर दे दिया कि वह हमें गोद ले ले। वह चुप होकर चले गये।

☛ परमात्मा जिस जीव को जिस कार्य के लिये भेजता है, वह उसी कार्य को पूरा करता है। अन्य कुछ नहीं कर सकता। श्री कश्मीरी लाल जी ने एल. एल. बी. पास किया, कुछ दिन वकालत भी की परन्तु वह न चल सकी। विवश होकर पुनः दुकान पर ही

पिता श्री के साथ आकर व्यापार को ही देखने लगे। श्री कश्मीरी लाल जी प्रभु के भक्त हैं, आस्तिक हैं, कठिनाइयों से लड़ना जानते हैं, सन्तोषी भी हैं। साथ में हिन्दी व्याकरण के पण्डित हैं।

☛ मेरे ममेरे भाई श्री रामेश्वर प्रसाद जी के बड़े दामाद श्री ओमप्रकाश जी रामपुर निवासी, बहुत अच्छे पत्र लेखक हैं। इनके पत्र समाचार पत्रों में प्रकाशित होते रहते हैं। इनके पत्र शिक्षाप्रद और समस्या—समाधान प्रधान होते हैं।

☛ श्री जय नारायण खन्ना जी, महात्मागाँधी और विनोवा जी के सच्चे भक्त हैं। अपने वस्त्र अपने हाथ के कते सूत से तैयार कपड़े के धारण करते हैं।

☛ श्री मुकटाप्रसाद बजाज नगर प्रसिद्ध कपड़े के व्यापारी थे। इनके अपनी कोई सन्तान नहीं थी, दत्तक पुत्र के रूप में श्री त्रिलोकीनाथ जी इनके उत्तराधिकारी बने। श्री त्रिलोकीनाथ जी के पुत्र श्री मनमोहन जी अत्यन्त विवेकशील और पुरुषार्थी व्यक्ति हैं, यह गंज बाजार के समस्त विवादों को बड़ी सरलता से सुलझा कर निबटा देते हैं।

☛ श्री रामनारायण लाल जी गोटे वालों के पुत्र श्री रमेश चन्द्र जी का भी यही मानना है कि हिन्दी के साथ हिन्दी के ही अंक लगाने चाहिये। जिस प्रकार अंग्रेजी के साथ हिन्दी के अंक कोई भी लगाने का साहस नहीं कर सकता, उसी प्रकार हिन्दी के साथ भी अंग्रेजी के अंक लगाना उचित नहीं, अनुचित ही है।

☛ जगदीश मैडिकल स्टोर नीम प्याऊ, गंज के स्वामी श्री जगदीश जी अच्छे और सौम्य स्वभाव के थे। उनका व्यवहार अनुकरणीय है। वह किसी को भी गलत परामर्श और औषधि नहीं देते थे।

☛ जीलाल स्ट्रीट पर वैद्य किशन लाल जी, चोबे जी के फाटक में चिकित्सा करते थे, उनके सुपुत्र श्री सूरज सहाय बिजली वाले करके प्रसिद्ध थे, वह बिजली के सामान का व्यवसाय करते थे। एक दिन हमारे पिता श्री के पास वैद्य किशन लाल जी आकर बैठे और कहा—देखो भूकन लाल इस आयु में किसी से भी नाराजी

हो जाय तो गुस्से में आकर भोजन मत छोड़ देना। इसकी पूर्ति आगे कभी नहीं हो सकेगी। इसे सदैव ध्यान में रखना।

☛ श्री रामकृष्ण जी और श्री एस.पी. सक्सैना जी 'सूर्या' यह दोनों व्यक्ति अंग्रेजी से एम.ए. हैं, दोनों ही योग्य व्यक्ति हैं। श्री रामकृष्ण जी के तीनों पुत्र व्यवसाय से जुड़े हैं, अच्छा प्रगतिशील परिवार है। अक्सर बच्चे कह देते हैं कि मैं करोड़पति पिता का पुत्र हूँ। इसे श्री रामकृष्ण जी ने लौट दिया, वे कहते हैं कि मैं करोड़पति बेटों का पिता हूँ। श्री एस.पी. सक्सैना जी 'सूर्या' अंग्रेजी के कई ग्रन्थों के रचनाकार भी हैं।

☛ श्री वेद प्रकाश जी शर्मा कटरा पूरन जाट, गाँधी मार्ग पर स्थित आवास में निवास करते हैं, मुझसे आते—जाते अक्सर नमस्ते हो जाती है, अच्छे सौम्य स्वभाव के हैं। मैंने अपने परिचितों में बहुतों को देखा है, कि उनके नमस्ते करने पर भी उनके बच्चे मुझसे नमस्ते नहीं करते। इससे मुझे कोई खिन्नता नहीं लगती परन्तु उन बच्चों को दिये गये संस्कारों का पता लगता है। श्री वेद प्रकाश जी शर्मा के पुत्र अंकित शर्मा जब कभी कहीं पर भी मिलते हैं तो वह स्वयं ही मुझसे नमस्ते करते हैं। इस प्रकार आभासित होता है कि उनके पैतृक संस्कार कितने अच्छे और कैसे हैं।

☛ स्वयं मेरे अपने घर पर ऊपर के कमरे की चौखट में ततैयों ने छत्ता बना लिया, छत्ता बहुत बड़ा हो गया। उसे तोड़कर किसी के घर को नष्ट करने का विचार नहीं बन पा रहा था। मैंने यज्ञ के पश्चात् प्रभु जी से प्रार्थना की—कि प्रभु जी आप सर्वान्तर्यामी हैं सबके हृदयों में विराजमान हैं। आप अपने इस सर्वान्तर्यामी स्वरूप से इन ततैयों के हृदय में यह विचार उत्पन्न कर दो कि वह यहाँ से भाग जायें। प्रभु जी ने मेरी प्रार्थना स्वीकार की और ततैयाँ वहाँ से भाग गईं।

☛ हरचरनदास सूत वालों के पुत्र श्री रघुनाथ जी के यहाँ अप्रैल में बहियाँ जाती हैं, इस बार भी गईं। मैं उनसे पैसे मंगवाना भूल गया था, उन्होंने अपने पोते के हाथ ६०० रुपये २५/७/४ को भिजवा कर रसीद मंगवा ली, और ४/८/४ को इस संसार से विदा

लेकर चले गये। श्री रघुनाथ जी में कितना आत्मविश्वास और सत्य निष्ठ स्मृति बनी हुई थी, किं उन्होंने अपनी जीवन यात्रा समाप्त होने से १० दिन पूर्व ही मेरे पैसे भिजवा दिये। यह उनके पवित्र ह्रदय का ही स्वरूप था।

☞ हर प्रकार की घड़ी के बक्से पर डायल छपा होता है और उसमें घड़ी की सूई १० बजकर १० मिनट का संकेत देती है, ऐसा क्यों?

मेरी दुकान पर श्री अशोक कुमार चन्देल (पाल) बैठे थे, उसी समय सर्वगुणसम्पन्न महानुभाव भी पधारे। उनके सामने अशोक जी ने उक्त प्रश्न रखा, उस पर महानुभाव ने उत्तर में कहा कि संसार में सबसे पहले जो घड़ी बन कर तैयार हुई थी उस समय पर १० बजकर १० मिनट का समय था, इसी कारण से बक्से पर छपे डायल पर १० बजकर १० मिनट दिखाये जाते हैं। मैंने कहा—यह समय दिन का था या रात्रि का? इसका कोई उत्तर नहीं मिला। यह समाधान उचित नहीं लग रहा। इसका और कोई कारण भी हो सकता है।

अशोक जी ने कहा—इसका समाधान आप कीजिये।

मैंने कहा—घड़ी के डायल में कोई भी ऐसा कोण नहीं है जो घन्टा मिनट को एक समान रूप से बता सके।

अशोक जी ने कहा—११ बजकर ११ मिनट भी तो हो सकते हैं?

मैंने कहा—११ बजकर ११ मिनट या १२ बजकर १२ मिनट में, मिनट बताने वाली सूई का संकेत पूर्ण अंक का नहीं बनता। १ बजकर १ मिनट पर दोनों सूईयाँ एक साथ आसपास मिल गई, अलग—अलग संकेत नहीं बता रहीं। इसी प्रकार पूरे डायल में ऐसा कोई कोण नहीं बनता जो घन्टा और मिनट को एक समान प्रगट कर पूर्ण अंको का संकेत दे सके। बक्से पर डायल का डिजाइन बनाने वाले की यह योग्यता है कि उसने पूर्ण अंकों का संकेत देने वाली दोनों सूइयों को ऐसे कोण से विचार पूर्वक १० बजकर १० मिनट पर ही अंकित किया। यह डिजाइनर की योग्यता है घड़ी के निर्माता की नहीं, इस डिजाइन की आवश्यकता तब पड़ी जब घड़ी के लिये बक्सा बनाया गया। बक्सा घड़ी के निर्माण से बहुत वर्षों के पश्चात् ही

बना था। जिसकी योग्यता का जो परिचायक है उसे स्वीकार करना चाहिये।

मैंने कहा—डायल में एक और ऐसा ही कोंण है, वह है ५ बजकर ५ मिनट का। इस कोंण में भी अंक पूर्ण का ही संकेत बनता है और सूइयाँ भी पृथक—पृथक हैं परन्तु इसमें एक दोष है।

श्री अशोक जी—वह क्या दोष है?

मैंने कहा—घड़ी का निर्माण यूरोप में हुआ, वहाँ पर प्रातःकाल ५ बजकर ५ मिनट, सूर्य उदित होने से पूर्व बजते हैं। उस समय पर अधिकतर व्यक्ति शयन में ही होते हैं। इस प्रकार ५ बजकर ५ मिनट का उपयोग करने की संगति पूरी तरह उचित नहीं बैठती। इस कारण इसका कोई उपयोग ही नहीं बनता।

श्री अशोक जी ने कहा—इस तर्क में कुछ सार लगता है।

☛ फरीदाबाद निवासी श्री राजेन्द्र प्रसाद जी आर्य एक अच्छे उद्यमी व्यक्ति हैं, आपको अनायास पक्षाघात का रोग लग गया। पत्र आया, उपचार के लिये "रास्नादि क्वाथ" "अग्नितुण्डी वटी" का सेवन और "महानारायण तेल" का मर्दन करने का सुझाव दिया। इससे लाभ रहा और अब वह स्वस्थ्य भी हो रहे हैं।

यूनानी चिकित्सा का केन्द्र बिन्दु 'मेदा' होता है, ऐलोपैथिक चिकित्सा का केन्द्र बिन्दु रोगी को सुला देना अर्थात् 'नींद' पर आधारित होता है, आयुर्वेद चिकित्सा का केन्द्र बिन्दु 'हृदय, मस्तिष्क और मेदा' तीनों होते हैं।

☛ आँवला निवासी श्री गिरिजा नन्दन जी एक प्रोफेसर हैं, प्रतिभाशाली हैं, लेखक भी हैं। इन्होंने अपनी रचित "आँवला दर्शन और मुरादाबाद, सम्भल, चन्दौसी, इतिहास एवं संस्कृति" की दो पुस्तकें भेजीं। पुस्तकें उत्तम और खोज पूर्ण हैं। पुस्तकों के साथ मुझे लिखे पत्र में, अखिल भारतीय माथुर वैश्य महासभा द्वारा ग्वालियर सम्मेलन में ६ मार्च १९९९ को समाज शिरोमणी सम्मान के अलंकरण का, साहित्यिक व्यक्ति ने मूल्यांकन कर उसे उपाधि में परिवर्तित कर सम्बोधन के साथ जोड़ दिया। यह गिरिजा नन्दन जी की विषेश योग्यता का परिचायक है। यह प्रतिभा सबके पास नहीं होती।

वीरेन्द्र गुप्तः

☛ वाणी से कहे शब्दों को नकारा जा सकता है, परन्तु लिखित को नहीं। इसलिये बहुत सोच समझ कर लेखन कार्य करना होता है। किसी भी घटना को, सन्दर्भ को सही रूप में प्रस्तुत करना ही लेखन की सफलता होती है। श्री रामशरण गुप्ता जी ने अपनी एक पुस्तक की पाण्डुलिपि मेरे पास भेजी। पुस्तक का नाम रखा "कायमगंज के माथुर वैश्यों का संक्षिप्त परिचय" मैंने उसे देखा, कुछ सन्दर्भों को सही रूप देकर, छपवाने के लिये वापिस भेज दिया। उन्होंने अपने पत्र में लिखकर भेजा है, "आपने संशोधन दिये हैं, अक्षरश: शुद्ध कर छापने को दे दिया है। आपके आदेश का पालन पूर्णत: बड़ी सावधानी से कर रहा हूँ। आप जो सम्मान दे रहे हैं, मैं अपने को इस योग्य नहीं समझता। यह तो सब आपकी कृपा है। प्रभु की अनुकम्पा है। मैं आपका अतिशय आभारी हूँ। आपका मार्ग दर्शन पाकर ज्ञान वर्धन हुआ।।"

श्री रामशरण गुप्ता जी ने परामर्श का मूल्याँकन कर अपने गौरव को कई गुना अधिक बढ़ा लिया।

☛ स्वामी दिव्यानन्द जी कई बार मुरादाबाद आये हैं, लगभग हर बार मेरा उनसे भेंटा हो चुका है, एक बार महिला आर्य समाज के कार्यक्रम में और दूसरी बार वेद प्रचार मण्डल के कार्यक्रम पर आयें थे, उन्होंने बताया कि बरेली में मेरे प्रवचन पर एक मुसलिम युवक ने पाँच तत्वों का खण्डन कर चार तत्व सिद्ध कर दिये और मैं उसका कोई उत्तर न दे सका। इस प्रकार वेद के ऊपर कुरान हावी हों गया। यहाँ स्वामी दिव्यानन्द जी से भूल हो गई, उन्हें उस समय पर पाँच तत्वों की पाँच तन मात्राओं का ध्यान नहीं रहा। मैंने इस विषय को 'ईश महिमा' के द्वितीय संस्करण के २२ पृष्ठ पर "तत्व पाँच ही हैं" में स्पष्ट समाधान कर दिया है।

स्वामी दिव्यानन्द जी के शिष्य श्री प्रताप कुमार साधक ने "अध्यात्म प्रकाश" पुस्तक में पृष्ठ १७ पर प्रश्न खण्ड २ का २१ के उत्तर में लिखा है "अनेक स्त्री व पुरुष युवावस्था में पृथक—पृथक अण्डों से उत्पन्न हुये थे।" इस पुस्तक की रचना सत्यार्थ प्रकाश के ७.८.९ में समुल्लास पर आधारित कहते हैं। इन समुल्लासों के

अतिरिक्त कहीं पर भी सत्यार्थ प्रकाश में मनुष्य की उत्पत्ती अण्डे से नहीं लिखी है। तो फिर यह 'पृथक —पृथक अण्डों से'' उत्पत्ती कहाँ से आ टपकी। इस प्रकार सिद्धान्तों का मटिया मेट करना अच्छा नहीं।

मैंने अपनी पुस्तक 'ईश महिमा' के पृष्ठ ४० पर लिखा है ''जिस समय यह सब पूर्ण युवावस्था को प्राप्त कर चुके थे और गर्भ रूपी भूमि ऊपर को उठती जा रही थी। परमात्म व्यवस्था के अनुसार पूर्ण परिपक्व अवस्था में आने पर भूमि के ऊपर उठी हुई झिल्ली फटी और समस्त नर—नारी उठकर नग्नावस्था में बाहर निकले, और सबने एक दूसरे को हाथ जोड़कर नमस्ते की। यहीं से ''माताभूमि पुत्रोऽहम्।'' का नाद गूँज उठा। ''ईश महिमा'' पुस्तक के पृष्ठ ८ पर अंकित किया है कि मनुष्य कलम की संस्कृति नहीं है। इसका स्पष्ट अर्थ है कि मनुष्य प्रारम्भ में अण्डे से पैदा नहीं।

☛ स्वयं अपने आपको बड़ा मान लेने से व्यक्ति बड़ा नहीं बन जाता, बड़ों के बीच, बड़े की तुलना करना सम्भव नहीं, जब तक छोटे न हों, तब तक बड़ा बड़ा नहीं होता। छोटे व्यक्ति भी व्यवहार कुशल होने पर बड़े बन जाते हैं। श्री बाँके लाल जी के पुत्र श्री पूरन प्रसाद जी। पूरनप्रसाद जी और उनकी जीवन संगिनी श्रीमती राजदुलारी जी के पुत्र श्री अरविन्द कुमार जी, छोटे हैं, परन्तु व्यवहार में बड़े लगते हैं। मैंने स्वयं देखा है कि श्री अरविन्द कुमार जी गृहस्वामिनी के साथ कार में बैठे जा रहे थे, बाजार गंज में सिंघल ज्वैलर्स के पास कार रोक कर और कार का गेट खोल कर मुझ से कहा—आइये मैं आपको घर पर छोड़े देता हूँ। कितना मधुर और सौजन्य पूर्ण स्वर था। मैंने कहा—मैं इसी गली में रहता हूँ। श्री अरविन्द जी ने कहा— मैं समझा कि आप एम.डी.ए. में रहते हैं। मधुर मुस्कान के साथ आगे चले गये।

कार में बैठकर जाना सभ्यता का द्योतक है, और कार रोक कर घर तक पहुँचा देने को कहना, यह संस्कृति का द्योतक हैं।

☛ दुनीचन्द अमीर चन्द के नाम से एक दुकान मौ. साहू में बर्तनों की थी। उसी दुकान पर हंसराज जी भी कार्य करते थे।

कालान्तर में दुनीचन्द अमीरचन्द अलग–अलग हो गये। दुनीचन्द जी उसी दुकान में कार्य करते रहे और हंसराज जी भी उन्हीं के साथ लगे रहे। कुछ समय के पश्चात् हंसराज जी ने अपनी दुकान मौ० साहू में ही कली फरसी की लगा ली। उद्यमी और पुरुषार्थी होने के साथ साथ व्यवहारिक और संस्कारित भी थे। उन्होंने अपने बच्चों को अपने ही गुण प्रदान किये थे, ललित नाथ पाल जी के अन्दर उनके समस्त गुणों की विद्यमानता स्पष्ट दीखती है।

☛ भारतीय संस्कृति के पोषक, प्रसारक अध्यापक श्री हरपाल सिंह जी आर्य (स्वामी जी) महाराज का गुण है कि उपहार भी अपनी संस्कृति के अनुसार ही होना चाहिये, वह विवाहिक अवसर पर गायत्री मन्त्र और हिन्दी के अंकों से युक्त 'काल गणक' अर्थात् दीवार घड़ी को उपहार के रूप में देकर घर की शोभा को बढ़ा देते हैं।

☛ प्रयत्न करने पर सही दिशा मिल जाती है। सही समाधान होने पर, भरोसा बनने लगता है। मौरीशस के ट्रायोलेट निवासी श्री विष्णुदत्त देमकाह जी की खोज थी, संस्कारित सन्तान को प्राप्त करने की दिशा–निर्देशिका। संसार में अच्छी, सुयोग्य, स्वस्थ्य, सुन्दर सन्तान को सभी चाहते हैं। यह विज्ञान भारतीय दर्शनों में निहित है, उसी में से मैंने कठोर परिश्रम करके इस सारे विज्ञान को एक स्थान पर संचित कर इच्छानुसार सन्तान के नाम से प्रकाशित कर दिया है। सौभाग्य वश पुराने आर्य मित्र में पढ़ा इच्छानुसार सन्तानोत्पत्ति कैसे हो सकती है, श्री देमकाह जी ने मुझे २३/३/५ को एक पत्र लिखा, मैंने उनको तीन पुस्तकें १–इच्छानुसार सन्तान २–अभीनन्दनीय व्यक्तित्व ३–ईश महिमा भेज दी। १८/४/५ को दूसरे पत्र में श्री विष्णुदत्त जी लिखते हैं "तीनों पुस्तकें मिलीं, इसके लिये धन्यवाद, 'ईश महिमा' के विषय में बहुत से लोगों ने सराहना किया है, वर्षों की खोज के पश्चात् मुझे 'इच्छानुसार सन्तान' पुस्तक मिली। वेद दर्शन आदि सभी पुस्तकें छः–छः प्रतियाँ भेजें।"
२५/५/५ को तीसरे पत्र में लिखते हैं –

मुझे आपकी भेजी हुई पुस्तकें सारी,
पर हो गई पूजा से डण्डवत भारी।
आप ठहरे लेखक भारी मैं आपको,
कहता हूँ कि आप ठहरे हैं बड़ी उपकारी।

चौथे पत्र २२/६/५ में लिखते हैं—

मङ्गल मय से जीवन व्यतीत करें प्रभु आप लोगों को,
सदा अच्छी शक्ति दें, इसी तरह लिखते रहिये।।

☛ जिस विषय को पढ़ने की कामना होती है वह कभी न कभी पुस्तक रूप में पढ़ने को मिल ही जाती है। श्री महेन्द्र पाल आर्य इन्जीनियर मुजफ्फर नगर से ३०/६/५ को लिखते हैं—इच्छानुसार सन्तान तथा ईश महिमा पुस्तकें पढ़ी, अति उत्तम पुस्तकें हैं। इस विषय पर केवल यही पुस्तक अभी तक उपलब्ध थी। मुझे बड़ा अफसोस है कि आपकी लिखी पुस्तकें अब पढ़ने को मिलीं, जबकी मैं १९६० से पुस्तकें पढ़ता आ रहा हूँ। अब वेद दर्शन पढ़ना शुरु किया है, पुस्तक अति उपयोगी है।

☛ स्वाध्यायान्माप्रमादः अर्थात् स्वाध्याय में प्रमाद नहीं करना चाहिये। यह गुण श्री सुक्खन सिंह जी में स्पष्ट दीखता है, उन्होंने पहले वेद दर्शन का स्वाध्याय किया, उससे प्रेरित होकर चारो वेदों का सम्पूर्ण सैट खरीदा। सुक्खन सिंह जी सच्चे आर्य हैं, दानी भी हैं, साहित्य प्रकाशन हेतु सहयोग करते ही रहते हैं।

☛ साधना का मार्ग अत्यन्त दुर्गम और कटीला होता है, उसपर चलना मानो खाण्डे की धार पर चलना है, पैर बहकते ही कट जाता है। बड़े स्थिर भाव से साधना के मार्ग पर चल कर सफलता प्राप्त करके उन्नति का मार्ग प्रशस्त होने लगता है। पहले सत्य मार्ग का मिलना कठिन होता है, और जब वह मिल जाता है तो उसे अपनाने में बड़े संकट उपस्थित हो जाते हैं। बस वही क्षण परीक्षा का होता है। अवसर आने पर अस्थिरता का पर्दा पड़ जाने से सत्य—असत्य का निर्णय न लेने से सफलता हाथ आते—आते फिसल जाती है। साधना के मार्ग में उठापटक का होना अर्थात् बार बार मार्ग का बदलना अच्छा नहीं।

श्री सन्दीप कुमार शर्मा जी रेलवे में इन्जिन चलाकर गाड़ी को सही मार्ग से ले जाते हुये गन्तव्य स्थान तक पहुँचा देते हैं। वह जानते हैं कि इन्जिन चलाते समय किस मनोयोग से ध्यान को स्थिरता के साथ रखकर कार्य किया जाता है, वह अपने लक्ष्य को बार बार बदलते नहीं, स्थिर चित्त होकर कार्य में लगे रहते हैं। श्री सन्दीप कुमार शर्मा जी इन सभी मार्गों को पार करके अपने जीवन में, स्थिरता को स्थापित करने की दिशा में आगे बड़े हैं। परन्तु संगत सही न मिलने के कारण दिशा से शीघ्र ही भटक जाते हैं।

☛ श्री रामेश्वर सरन जी, कोल्हू वाले करके नगर प्रसिद्ध हैं। श्री रामेश्वर जी संस्कृत के भी विद्वान् हैं, इनको भर्तृहरि के शतक कण्ठस्थ हैं। यदा—कदा उनके प्रसंग मुख पर आ जाते हैं, इनके मधुर कण्ठ से पाठ अति प्रिय और प्रभाव युक्त होता है। यह अत्यन्त उद्यमी, सहन शील और परहित का भी ध्यान रखने वाले हैं, ईश्वर भक्त हैं, एक विचित्र संयोग है कि मेरी वेषभूषा और इनकी वेषभूषा एक समान है, चेहरे की आकृति भी बहुत कुछ समान है, श्री रामेश्वर जी का मुख्य व्यवसाय कोल्हू का है और मेरा (लेखक) बही खाते का। कभी—कभी ऐसा हो जाता है कि व्यक्ति मुझसे कोल्हू के बारे में और श्री रामेश्वर जी से खातों के बारे में मालूम करते ही रहते हैं। एक दिन श्री रामेश्वर जी अपने पोते को साथ में लेकर दुकान पर आये, पोता कभी मुझे और कभी रामेश्वर जी को देखता रहा, घर जाकर उसने बड़े आश्चर्य से कहा, दो बाबा?

☛ आस्तिक की छवि अलग ही दीखती है, उसके अन्दर दूसरों के सम्मान करने की भावना निहित होती है। हरि विराट कीर्तन सम्मेलन के लिये प्रातःकाल प्रभात फेरी के रूप में घर—घर जाकर कुछ सज्जन चन्दा करते हैं। यह मण्डली मेरे कुञ्ज में भी आई, मैं उस समय पत्नी सहित यज्ञ कर रहा था, श्री महावीर प्रसाद जी ने मेरे घर के कपाट खोले, यज्ञ कार्य को देखकर चुपचाप कैलेण्डर और कार्यक्रम का पत्रक रखकर चले गये। इसे श्री महावीर प्रसाद जी का सौजन्य ही कहा जा सकता है। उन्होंने यज्ञ कर्म का कितना आदर किया।

☛ लगनशील व्यक्ति अपने वर्ग के साथी की खोज कर ही लेता है और श्री राजवीर सिंह जी मुरादाबाद में 'विजया' बैंक में विदेश विभाग में कार्यरत हैं। वैदिक विचारधारा को स्वीकार करते हैं। आपने एक पत्र अबोहर निवासी आर्य विद्वान श्री राजेन्द्र जिज्ञासु जी को लिखकर यह जानना चाहा कि मुरादाबाद में, मैं किस आर्य से सम्पर्क करुँ, उत्तर आया श्री अमर नाथ जी से और वीरेन्द्र नाथ जी से मिलें। वह मेरे पास आये और श्री अमरनाथ जी का पता मालूम करके उनसे मिले। श्री राजवीर सिंह जी के मन में एक ज्वार उठ रहा है कि वेद का वैज्ञानिक भाष्य तैयार होना चाहिये। यह उनके अन्दर महर्षि दयानन्द सरस्वती जी महाराज और वेद के प्रति अगाध श्रद्धा का कारण ही है।

☛ श्री सतीश चन्द्र गुप्ता एडवोकेट जो 'श्रीमन' के नाम से प्रसिद्ध हैं। यह न्यायालय में जज महोदय को 'सर' या 'हुजूर' कर के सम्बोधित नहीं करते, इसके स्थान पर शुद्ध हिन्दी के 'श्रीमन' सम्बोधन का ही प्रयोग करने के कारण श्रीमन के नाम से ही प्रसिद्ध हो गये हैं। छोटी बार एशोसियेशन के मन्च से हिन्दी दिवस पर कार्यक्रम होता है। एक बार मुझे भी इस कार्यक्रम में आमन्त्रित किया गया, इस कार्यक्रम के मुख्य अतिथि के रूप में श्री महेन्द्र प्रताप सिंह जी, जनपद न्यायाधीश महोदय भी उपस्थित थे। मुझे मन्च पर आमन्त्रित करते समय श्रीमन जी ने कहा—श्री वीरेन्द्र जी मेरे गुरु हैं, इन्हीं की प्रेरणा से मैंने भी कई पुस्तकें लिखी हैं। आपकी ४५ पुस्तकें अब तक प्रकाशित हो चुकी हैं, मैं उनसे मन्च पर आकर हिन्दी के सम्बन्ध में अपने विचार प्रस्तुत करने के लिये आमन्त्रित करता हूँ। मैं मन्च पर गया और हिन्दी की उपयोगिता और उपादेयता के बारे में मैंने अपने विचार व्यक्त किये। सबने बड़ी ही प्रशंसा की और जज साहब भी बहुत प्रभावित हुये।

☛ श्री गट्टा मल जी दलाल, राजोगली में रहते थे, इनके पुत्र श्री भूकन लाल थे, उनका मुख कुछ टेढ़ा था, इस कारण भूकनलाल टिढ़मुहे करके प्रसिद्ध थे। इनके दो पुत्र राममूर्ती सरन दलाल और राम

किशन थे। राम किशन मेरे साथ हिन्दू स्कूल में पढ़ते थे। इनकी माता का स्वर्गवास हो गया था, दूसरे विवाह के पश्चात् कई पुत्रों का जन्म हुआ, उनमें से श्री देवेन्द्र कुमार जी से मेरा सम्पर्क रहा है। देवेन्द्र कुमार 'दिब्बो' दलीप कुमार मेहता गुजराती के यहाँ कोठी में सदर मुनीम के स्थान पर कार्य करते हैं। श्री प्रकाश नारायण खन्ना वकील साहब के यहाँ भी कार्य करते हैं, उनकी बहियाँ भी मेरे यहाँ से जाती हैं। मैंने देखा है कि देवेन्द्र कुमार दिब्बो में ईमानदारी बहुत है, कभी किसी से कमीशन आदि की बात तक नहीं करते। सब काम सच्चाई के साथ करते रहते हैं।

☛ आयुर्वेद का जीवन परमात्मा की उत्पन्न की हुई जड़ी बूटियों में समाया हुआ है। श्री रघुराज सिंह आर्य मन्त्री आर्य समाज गोण्डा अलीगढ़ उ०प्र० से १३/१०/२००५ को पत्र द्वारा लिखते हैं "मैंने आपका अधिकांश साहित्य पढ़ा है, तथा दूसरों को भी उपलब्ध कराया है। आपके अनुभव सभी के लिये जीवनोपयोगी हैं। आपके द्वारा तैयार सूर्य गुणी औषधि ने कई महिलाओं के निराश जीवन को जीवन्त प्रसन्नता प्रदान की है।"

☛ फतेहपुर बिश्नोई के निवासी श्री निहाल सिंह जी आर्य, घर पर यज्ञ आदि कर्म करते रहते हैं। पुत्र वधू—पौराणिक परिवार से आई, उसकी रुचि यज्ञ में नहीं थी, इसी कारण श्री निहाल सिंह जी की पत्नी कभी—कभी अपनी पुत्र वधू से नाराज हो जाती थी। यह दोनों मेरे पास मिलने आये और मैंने कहा—आप अपनी पुत्र वधू को कटु वचन मत कहिये, प्रेम से समझायें, वह समझेगी और आपका कहना मानेगी। आज निहाल सिंह जी ने बताया कि पुत्र वधू ने स्वयम् कहा—पिताजी अपने पोते का जन्म दिवस यज्ञ के द्वारा ही आप करायें। परिवर्तन आया और पुत्र वधू ने अपनी सास और ससुर के चरण स्पर्श किये।

☛ बलदेव आर्य कन्या विद्यालय की अध्यापिका श्रीमती सविता सिंघल ने विद्या का सदुपयोग कर अध्यापन द्वारा बच्चों में संस्कारों का बीजारोपण कर बच्चों को संस्कारित बनाकर देश, जाति और धर्म की ध्वजा फहराते हुये, सब के हित में अपना कल्याण

समझा। यह संस्कार ऋषि दयानन्द के हैं जो इन्हें पैतृक सम्पत्ति के रूप में प्राप्त हुये थे। ३० अक्टूबर २००५ को श्री यशपाल जी सहगल का निधन हो गया था। शोक सभा आर्य समाज स्टेशन रोड पर २/११/५ को थी। उसी दिन सायंकाल को अध्यापिका जी श्रीमती सविता सिंघल मेरे घर पर आई और शोक सभा की चर्चा के बीच कहा—आपने वास्तविक श्रद्धाञ्जली दी। कहने लगीं एक दिन मुझे डा. अजय अनुपम जी मिले, उनके सामने आपकी (वीरेन्द्र नाथ) चर्चा आई और यशपाल जी की भी। इस पर डा० अजय अनुपम जी ने कहा—इन दोनों की तुलना करना उचित नहीं, यशपाल जी की कथनी और करनी में बहुत बड़ा अन्तर दीखता है और श्री वीरेन्द्र जी की कथनी और करनी में कभी कोई अन्तर नहीं दीखा।

☞ आचार्य काशी प्रसाद गुप्ता जी, उपडाक पाल (डी०पी०एम०) डाकघर नौबस्ता लखनऊ २२६००३, ता० २/११/५ को पत्र द्वारा लिखते हैं "पुत्र प्राप्ति का साधन पुस्तक पढ़कर मैं लेखक श्री वीरेन्द्र गुप्त: से प्रभावित हुआ, इसलिये उपलब्ध सभी पुस्तकें पढ़ने एवं पढ़ाने हेतु भेजने की कृपा करें।"

☞ श्री ईश्वर चन्द जी 'ईश' रस्तौगी इन्टर कालिज मुरादाबाद के सेवा निवृत प्रधानाचार्य रहे हैं। आपका जन्म ७/१२/१९२५ का है। आप कवि हैं, साहित्यकार हैं, कई कृतियाँ प्रकाशित हो चुकी हैं। इसमें 'गद्यगीत ग्रामर' अति लोक प्रिय रही है। स्वभाव से शान्त, अपने प्रति कटु शब्द प्रहार को भी सहन करने वाले हैं।

☞ प्रकाश चन्द जी सक्सैना 'दिग्गज मुरादाबादी' के नाम से बच्चों के प्रसिद्ध कवि हैं। स्वभाव से कुछ अभिमानी हैं। स्वाभिमान का होना अच्छा होता है। यदि स्वाभिमान और अभिमान को त्यागकर समता भाव का जीवन हो तो बड़ा ही शान्ति दायक बन जाता है। प्रसिद्धि तो गुणों से स्वत: प्राप्त हो जाती है।

☞ मुझे स्नोफीलिया हो गया था। डा० पन्त की चिकित्सा की, एक मास में रोग ठीक हो गया। एक मास के पश्चात् पुन: रोग उभर पड़ा, डा० रामकुमार जी ने होम्योपैथिक चिकित्सा की, वह भी ठीक

हो गया। उसके एक मास के पश्चात् स्नोफीलिया का पुनः प्रकोप बनने लगा, तो मैं गुरुकुल कॉंगड़ी के आयुर्वेदाचार्य श्री धर्मवीर जी से मिला, मैंने कहा वैद्य जी क्या यह रोग जीवन भर के लिये लग गया? वैद्य जी ने कहा—नहीं! ठीक हो जायगा, आप ६ मास तक चन्द्र प्रभावटी का सेवन करें। मैंने ऐसा ही किया और मुझे रोग से सदैव के लिये छुटकारा मिल गया।

☛ एक मित्र बन्धु जी ने कहा—कि मेरे पास अपने पुस्तकालय में वेद, सत्यार्थ प्रकाश, रामायण, गीता आदि ग्रन्थ हैं। किसी कारण से उनमें दीमक लग गई। मुझे बड़ा आश्चर्य हुआ, पुस्तकालय की पुस्तकों को देखकर मैं चकित रह गया की वेद और सत्यार्थ प्रकाश को दीमक चट कर गई और पास में रखी गीता और रामायण साफ बची रही। मैं सोचने लगा कि गीता और रामायण को दीमक ने भगवान के ग्रन्थ समझ कर छोड़ दिया। यह चमत्कार ही है। मैंने कहा—आपने गलत सोचा। बन्धु जी ने कहा—तो सही क्या है? मैंने जो देखा वही कहा है। मैंने उत्तर दिया कि आपने इसका अर्थ गलत निकाला। वास्तविकता कुछ और है। बन्धु जी! वह क्या? मैंने कहा—दीमक भी यह जानती है कि वेद और सत्यार्थ प्रकाश को अपने में आत्मसात कर लेने से मोक्ष मिल सकती हैं, गीता और रामायण से नहीं। इसी कारण दीमक ने वेद और सत्यार्थप्रकाश को आत्मसात कर अपने में समा लिया, गीता और रामायण को अनुपयोगी समझते हुये छोड़ दिया।

☛ प्रभु कृपा से ही 'कान्ति' 'शान्ति' का मिलन योग होता है। 'कान्ति' के साथ 'शान्ति' न हो तो अहम को बढ़ा देती है, और यह अहम पतन का कारण भी बन जाता है। 'कान्ति' अहम के कारण कोई सम्मान अर्जित नहीं कर पाती और 'शान्ति' शान्ति के साथ आर्य स्त्री समाज मण्डी बाँस से प्रगति के पग बढ़ाती हुई, स्टेशन रोड की महिला आर्य समाज के मन्त्री पद पर आसीन हो जाती है। यदि 'कान्ति' ने 'शान्ति' को अपना लिया होता तो वह भी उन्नति के पथ पर बहुत आगे बढ़ सकता था। पिता अथवा गुरु कभी अनिष्ट

चिन्तन नहीं कर सकता, वह तो सदैव यही चाहता है कि मेरा पुत्र अथवा शिष्य आकाश की ऊँचाइयों तक बढ़ता चला जाय।

☛ क्या मैंने 'वातायन' ग्रन्थ की रचना करके कोई गलती की है? इसे मैं नहीं, पाठक अवश्य बता सकते हैं। इसी सन्दर्भ में एक सज्जन ने आकर मेरी बड़ी आलोचना कर दी, जबके ग्रन्थ को देखा भी नहीं था। आलोचना करते हुए यहाँ तक कह गये, जो ५० वर्षों में आपको आसमान पर बैठा सकता है, वह ऊपर से धक्का भी दे सकता है। जब बुद्धि भ्रष्ट हो जाती है तो वह अपनों का ही अपमान करने लगता है। यह सम्भव है कि उक्त सज्जन की दुखती नस पर कलम की नोक जाकर चुभ गई हो। आसमान पर बैठाना या ऊपर से धक्का देना तो केवल विधि के ही हाथ में है।

☛ श्रीमती सुमन कादियान, पत्नी श्री रघुवीर सिंह कादियान मकान न० ७७ सैक्टर एक रोहतक, हरियाणा से १९/१२/५ को पत्र द्वारा लिखते हैं—हम नवम्बर में रोजड़ (आर्यवन) गये थे, वहाँ पर हमें प्रसाद रूप में 'ईश महिमा' पुस्तक पढ़ने को मिली, इसे पढ़कर, रचनाकाल, रचना से पूर्व आदि सभी विषयों के बारे में जाना और सन्तुष्टि हुई। बहुत ही सुन्दर ढंग से समझाया है। इच्छानुसार सन्तान पुस्तक पढ़ना चाहता हूँ। मेरे पुत्री जो लन्दन में रहती है, उसे दो बार गर्भ गिर गया है। उसका समाधान करने की कृपा करें।

☛ १४ जनवरी २००६ मकर संक्रान्ति के पावन पर्व पर श्रीमती चन्द्र मुखी गुप्ता जी ने भक्ति गीत और भजनों का संग्रह 'भजन गीतदीपिका' के नाम से प्रकाशित किया है। इसमें 'ईश महिमा' पुस्तक के दो उद्धरण अपनी पुस्तक के पृष्ठ ८८ और ९२ पर अंकित करना, उनके अपने स्वध्याय और संग्रह की ज्योति का, पूर्ण परिचायक सिद्ध होता है।

☛ श्री बलवीर सिंह जी विशनोई, विशनोई साहित्य के लेखक हैं, कई ग्रन्थों की रचना की है, स्वाध्याय शील हैं, आपने दर्पण की बड़ी प्रशंसा की, पूरी पुस्तक पढ़ कर ही चैन मिला। श्री ओम प्रकाश

जी विशनोई प्रधान डाकघर में कार्य करते हैं। मौरीशस पुस्तकों का पार्सल भेजने में आपने मेरा मार्ग दर्शन किया और पुस्तकें गन्तव्य स्थान तक पहुँच गई। वे धन्यवाद के पात्र हैं।

☞ श्री सुखदेव जी मेरे साथ हिन्दू स्कूल में पढ़ते थे। इनको और मुझे ड्राईंग में अधिक रुचि थी। बड़े भाई की बीमारी के कारण मेरा स्कूल जाना बन्द हो गया। सुखदेव पढ़ते रहे। इन्होंने स्टेशनरी की दुकान और एक छपाई की प्रेस लगाई। मैंने सोचा इन्हीं से अपनी पुस्तक छपवानी चाहिये। मैं पुस्तक लेकर इनके पास गया। इन्होंने कहा क्या किसी से जँचवा लिया है? मैंने कहा—नहीं! तब पुस्तक छापने से मना कर दिया। वह पुस्तक कुमार प्रेस में छपी। सुखदेव जी कह रहे थे कि आपकी सभी पुस्तकें मेरी पत्नी को बहुत अच्छी लगीं। आपकी लेखन शैली सरल और मधुर है।

☞ साहित्यकार छोटा हो या बड़ा, अथवा किसी विद्या का उपासक हो, वह रचनाकार ही है। श्री जयनारायण सुमन जी भी एक साहित्यकार हैं, कई पुस्तकें प्रकाश में आ चुकी हैं।

कोई शिक्षक या प्रोफेसर अपने विषय का पारंगत हो सकता है, परन्तु संसार में सहस्त्रों विषय हैं, क्या वह उनके बारे में जानता है? नहीं! तो फिर अहम क्यों? इतिहास और धर्म ग्रन्थ में अन्तर होता है। इतिहास, धर्मग्रन्थ नहीं हो सकता, गीता, रामायण पुराण आदि ग्रन्थ इतिहास ग्रन्थ हैं, जो समय पर आये। धर्मग्रन्थ वेद है जो आदि सृष्टि से है, उसे देखना और पढ़ना चाहिये।

एक व्यक्ति ने ऋषि दयानन्द जी से कहा—क्या आप पूर्ण ज्ञानी हैं? इस प्रश्न के पीछे उसका उद्‌देश्य था कि यदि स्वामी जी कहेंगे कि मैं पूर्ण ज्ञानी हूँ, तो मैं कहूँगा कि आप बड़े अभिमानी हैं, और यदि कहा—मैं पूर्ण ज्ञानी नहीं, तो अज्ञानी से क्या बात करनी? इस छल पूर्ण उद्‌देश्य पर पानी फिर गया। जब ऋषिवर ने उत्तर दिया कि मैं जिस विषय को जानता हूँ, उसमें पूर्ण ज्ञानी और जिस विषय को नहीं जानता उसमें अज्ञानी हूँ। इस उत्तर को सुनकर वह व्यक्ति उठकर चला गया।

☛ प्रोफेसर राम सरन दास, मुरादाबाद के गाँधी जी, के छोटे भाई श्री भगवानसरन जी के सुपुत्र श्री विनोद कुमार जी मेरे आर्य कुमार सभा के साथियों में से एक हैं। यह अति उत्साही और उद्यमी हैं। सेवा निवृत्त होने के पश्चात् आर्य समाज स्टेशन रोड के साप्ताहिक सत्संग का संचालन बहुत उत्तम रीति से करते हैं। आर्य समाज और ऋषि दयानन्द जी महाराज को समर्पित हैं।

☛ वेद प्रकाश रस्तौगी जिनका उपनाम 'बिद्दाखाँ' था वह मुझसे बहुत बड़े थे, सायंकाल के समय नित्य दुकान पर आया करते थे। बहुत ही साहस वाले तथा हर प्रकार का नशा करते थे। एक दिन बिद्दाखाँ ने कहा—'वीरन' तूने तो मुझसे कभी कुछ नहीं कहा, परन्तु तू जो औरों से बातें करता है, उसे सुन—सुन कर मेरे मन पर बहुत बड़ा असर पड़ा और मैंने आज से सब नशों के साथ—साथ सिगरट को भी छोड़ दिया।

☛ आई० के० प्रतिष्ठान के स्वामी श्री ईश्वर चन्द्र जी से नित्य नमस्ते हो जाती है। कई दिनों से मेरी उनसे भेंट नहीं हो सकी। आज ७/४/२००६ को अनायास भेंट हुई तो कहने लगे क्या बात है, कैसा स्वास्थ्य है, कई दिनों से भेंट नहीं हुई। जहाँ चाहत और अपनात होती है। वहीं चिन्ता भी बन जाती है। मैंने कहा दुकान के कारण अप्रैल के प्रथम सप्ताह में दोपहर का घर जाना बन्द कर देता हूँ। इसी कारण आपके दर्शन कम हो सके।

आपके छोटे भाई श्री महेश चन्द्र जी भी सबके काम आने वाले और मिलन सार व्यक्ति हैं।

☛ गंज घास मण्डी के पास मल्होत्रा क्लाथ हाउस के स्वामी श्री विनोद मल्होत्रा जी को मेरी पुस्तक "विवेक शील बच्चे" बहुत पसन्द आई, वह उसे यदा—कदा पढ़ते ही रहते हैं।

☛ मन्दिरों और संस्थाओं का पैसा खा कर मोटा हुआ व्यक्ति, अपने सर पर वीर सावरकर जैसे महापुरुष की जैसी टोपी लगाकर अपने में वीर सावरकर की आत्मा के उपस्थित होने को समझकर, पाप कर्मों के कुफल से बचा रहना मान कर, पापार्जित धन के संग्रह में निर्भय होकर लगा हुआ है। कर्मों के फलों का क्षय कभी नहीं होता।

☞ श्री रवि चतुर्वेदी और श्री विपिन कुमार जी वर्मा सर्राफ, यह दोनों साहित्य प्रेमी हैं। साहित्यकारों को सम्मान देते हैं। इन्होंने अपने पुरुषार्थ से श्री पुष्पेन्द्र वरणवाल जी को सम्मानित करने का भव्य आयोजन किया था। यह दोनों सरल हृदय और सात्विक विचारों के धनी हैं।

☞ श्री रामनाथ जी टण्डन नगर पालिका मुरादाबाद से सेवा निवृत्त होकर परोपकार में ही लग गये। गायत्री परिवार से भी सम्पर्क बन गया। मेरी दुकान पर बैठे थे चर्चा होने लगी बीच में ही विषय उठा, घर और मन्दिर में क्या अन्तर है? मैंने कहा—घर में परमात्मा की बनाई हुई चेतन मूर्तियाँ निवास करती हैं, अपनी उन्नति करती हैं और अपने सदृष्य चेतन मूर्तियों को जन्म देकर सृष्टि क्रम को बनाये रखती हैं। परन्तु मन्दिर में मानव द्वारा कल्पित मूर्तियाँ पत्थर, धातु, काष्ट और ईंट गारे की बनाई गई स्थापित होती हैं, जो न कुछ कार्य करने में समर्थ होती हैं और न किसी का कुछ भला कर सकती हैं।

☞ श्री रामकुमार जी रस्तौगी आर्य समाज को समर्पित हैं, कुरान और पुराण दोनों पर अच्छी तर्क पूर्ण चर्चा करते हैं ७४ वर्ष की आयु में भी सक्रिय हैं। इन्होंने मेरी दस नियम पुस्तक का बहुत अच्छा अध्ययन किया है।

☞ श्री कैलाश चन्द्र जी के पुत्र श्री राजीव कुमार जी और श्री जगत नारायण जी के पुत्र श्री विजय कुमार जी मेरे पुस्तक विमोचन के कार्यक्रम में पूर्ण सहयोग देकर उसे सफल बनाते हैं। यह दोनों अत्यन्त घनिष्ट मित्र हैं।

☞ कल्यानपुर ग्राम के निवासी श्री रामसिंह जी प्रधान, एक परिवर्तन शील व्यक्ति हैं, इन्होंने मेरे सम्पर्क में आकर अपने जीवन में बहुत बड़ा परिवर्तन कर डाला। आज दैनिक यज्ञ करते हैं, औरों को यज्ञ करने की प्रेरणा देते हैं, साहित्य का भी वितरण करते रहते हैं।

☞ बाबा इन्दर सिंह जी भी इसी ग्राम के निवासी हैं, यह भी मेरे पास आते रहते हैं। एक बार मैं और रमेश चन्द जैन इनके निवास

पर गये थे, वहाँ पर यज्ञ कराया था, कुछ प्रवचन भी हुआ था। बाबा जी स्वयं नित्य दैनिक यज्ञ अपने गृह पर करते रहते हैं।

☞ लिखने के व्यसन की पूर्ति के लिये जब नकल के लिये कुछ और नहीं मिला तो अपनी यात्रा का बखान करना ही श्रेयकर दीखा। मैंने अमुक स्थान से टिकिट खरीदा, अमुक स्थान पर गया, मेरे पास टिकट के लिए पैसे न थे, उधार लेकर टिकट खरीदा, क्या खाया, क्या पिया, कहाँ सोया क्या करा, ही लिखकर सन्तोष किया। कहते हैं शिकागो धर्म सांसद में लाला लाजपतराय, हरविलास शारदा, स्वामी श्रद्धानन्द, भाई परमानन्द, प्रो० सोमदेव, चमुपति शास्त्री, महात्मा हंसराज में से कोई क्यों नहीं गया? चमुपति शास्त्री गलत हैं, आचार्य प्रवर पं० चमुपति नाम है, वह उस समय केवल सात मास के थे, आचार्य सोमदेव केवल १२ वर्ष के थे, भाई परमानन्द जी केवल १६—१७ वर्ष के थे, इस प्रकार यह सब अल्प आयु के बालक ही थे। इस उत्तर को पढ़कर चौंक उठे और सोचने लगे कि मैंने यह क्यों लिख दिया।

बच्चियों को पी.एच.डी. कराते हैं, परन्तु बिना पाप कर्म दक्षणा के नहीं कराते।

एक अपने निकटतम घनिष्ट अत्यन्त विश्वासी मित्र से अपने मन की बात करते हुए कह रहे थे। जब—जब मैं अखण्ड ब्रह्मचारी, अक्षतवीर्य, महापुरुष के बारे में लिखने बैठता हूँ तो मेरी कलम नहीं चलती, मन भय से आक्रान्त हो जाता, हृदय काँपने लगता, पता नहीं ऐसा क्यों होता है। मित्र ने कहा—आप यह तो जानते ही हैं कि दयानन्द सरस्वती योगी थे, परम विद्वान् थे, बाल ब्रह्मचारी थे, उनके लिये आप जैसे रसिक व्यक्ति की कलम कैस चल सकती है? वह तो स्वत: काँप उठेगी। कहने लगे तो मुझे क्या करना चाहिये? मित्र ने परामर्श दिया कि आप उन पर अपनी कलम न उठायें। फिर कहने लगे, मैंने जो पुस्तकों के खरीदने पर इतना पैसा व्यय किया है, उसका क्या करूँ? मित्र ने कहा—उन्हें वापिस कर दो। पी.एच.डी. करने वाली छात्राओं के साथ मैंने कुछ गलत

किया है, यह सही है। मित्र—जब तुम्हें अपनी कमी मालूम है तो यही उचित रहेगा कि आप उस विषय को यहीं पर ही बन्द कर दो।

परोपकारी में प्रकाशित उत्तर की ओट मिली, कहते हैं "रोने को बैठी थीं—भईया आ गया" इस रूप से पुस्तकें वापिस कर दीं।

मैं महर्षि दयानन्द पर एक ग्रन्थ लिखना चाहता था। इस हेतु श्री लक्ष्मीचन्द्र आर्य मुनि (मेरठ) व श्री धर्मपाल आर्य वेद पथिक (औरंगाबाद मेरठ) से ९ पुस्तकें लाया था। किन्तु अजमेर से निकलने वाली पत्रिका परोपकारी में राजेन्द्र जिज्ञासु ने मेरे विरुद्ध एक घृणित लेख निकाला। मेरे बारे में अपशब्द भी लिखे। अत: मैंने दयानन्द पर लिखने का विचार त्याग दिया और इन दोनों की पुस्तकें भी वापिस कर दी (पृष्ठ ३०४)। "यह नहीं लिखा परोपकारी में क्या लिखा था, क्यों लिखा था। साहस था तो उसका भी उल्लेख करते।" लगता है कि एम. ए. की परीक्षा में अभी डगमगा गया हूँ, मेरे सभी पाप मुझसे कुछ न कुछ पूछ रहे हैं—उन्हीं का सामूहिक रूप से विषधारी स्त्री है (पृष्ठ ८३)। अब तो ऋषि दयानन्द और वेद के कर्मफल के स्वरूप को स्वीकार करते हो।

यादव से कृष्ण बन गये, श्री कृष्ण बनने की इच्छा है। लगे रहो लाइन में। छात्राओं के साथ रासलीला रचा ली, घर पर गउओं का दूध बेचकर गोपालक भी बन गये, भले ही गोबरधन पर्वत न उठा सकें, प्रद्युम्न को जन्म न दे सकें। कपूत को जन्म देकर पश्चाताप कर रहे हैं। सन्तान अपने आचरण की प्रतिछाया ही होती है। अच्छा है लगे रहो, कभी समय आ सकता है, सिर पर मुकुट, हाथ में मुरली और बगल में राधा हो।

आश्चर्य होगा कि यह गुप्त बात मेरे पास तक कैसे आई। योग दर्शन का सूत्र है।

प्रत्ययस्य परचित ज्ञानम् "योग दर्शन ३/१९ संयम द्वारा दूसरों की चित्तवृत्ति का साक्षात्कार करने पर दूसरों के चित्त का ज्ञान हो जाता है।

हृदये चित्तसंवित्।। योग दर्शन ३।३३

हृदय में संयम करने से चित्त का ज्ञान हो जाता है। ऐसे ही मुझे ज्ञात हो गया।

यदि लेखक करनी, कथनी और लेखनी को समान रखता है तो वह पथिक बन जाता है। एक बात और भी है कि, पाप करनी, पाप कथनी, और पाप लेखनी समाप्त होने पर क्या वह पथिक बन सकता है? नहीं! क्या वह पुरुषार्थी नहीं, सत्य वक्ता नहीं है? है! परन्तु वह अकल्याणकारी है। 'गुणिगणगणनारम्भें' वह गुणी तो है, परन्तु उससे पूर्व 'र्दु' शब्द और जोड़ लिया, अर्थात् र्दुगुणी है। जब उसके साथ 'सद्' शब्द जुड़ जाता है तो वह सद्गुणी बनकर 'प्रचोदयन्ताम्' सबका कल्याण कारक होकर 'पुरोहितम्' बन जाता है।

☛ सन् १९८० में योजनाबद्ध उत्तर प्रदेश में साम्प्रदाइक दंगे हुए। मेरठ में नौचन्दी के मेले पर लगभग १३ पुलिस थानों पर सामूहिक रूप से आक्रमण हुए। ईद के अवसर पर मुरादाबाद में भी दंगे हुए थे। श्रीमती इन्दिरा गाँधी के व्यक्तिगत मुख्य सचिव श्री यशपाल कपूर मुरादाबाद आये, उनकी सभा में नगर काँग्रेस के महामन्त्री श्री विनोद गुप्ता जी ने निर्भय होकर बड़े साहस के साथ कहा था कि मुझे ऐसे संगठन के महामन्त्री कहते लज्जा आती है, जिसके शासन में हिन्दू मारा जा रहा है।

☛ मेरी दुकान के पास ही श्री बाबूराम जी चाँदी के आभूषणों की ढ़लाई का कार्य करते थे। उनके साथ श्री रघुनन्दन जी, सैजादे, और बड़े पुत्र ओम प्रकाश भी कार्य करते थे। श्री रघुनन्दन जी अपनी वाणी से ही सितार, तबला, हारमोनियम आदि सभी की धुन अपने मुख से निकाल लेते थे। सोम प्रकाश का जन्म होने के बाद पत्नी अर्थात् सोमप्रकाश की माता का स्वर्गवास हो गया। बाबूराम जी ने ही सोमप्रकाश का पालन पोषण किया अब श्री सोमप्रकाश जी के दो पुत्र हैं। छोटे पुत्र श्री जयप्रकाश जी दयालू और परोपकारी हैं। सब्जी मण्डी में अब आभूषणों का थोक व्यापार करते हैं।

☛ श्री वीरेन्द्र कुमार भट्टे वाले प्रसिद्ध व्यक्ति हैं। आप अन्नपूर्णा मन्दिर और हरि विराट कीर्तन सम्मेलन में सक्रिय भाग लेते रहते हैं। मैंने एक दिन इनके कार्यालय पर जाकर कहा—क्या आपने वेद देखे हैं? तो हंसते हुए करबद्ध होकर कहने लगे, कि मैंने आज तक वेद नहीं देखे। मैंने कहा—मैं आपको वेद—दर्शन लाकर दूँगा, उसका अवलोकन करें। मैंने वेद दर्शन उनको जाकर दिया, वह बहुत प्रसन्न हुए।

☛ वेद व्याख्यान दाता आर्य सन्यासी श्री ब्रह्मानन्द सरस्वती (वेद भिक्षु) जी का बरेली से पत्र आया, डा० ओ०पी० अग्रवाल सीनियर कन्सल्टेंट कार्डियोलाजिस्ट को पुस्तकें भेजने के लिये। मैंने पुस्तकें भेज दीं। पुस्तकें पढ़ने के पश्चात् वह मेरे घर पर श्री स्वामी ब्रह्मानन्द जी और अपनी पुत्री, दामाद के साथ आये। शंकाओं का समाधान किया। श्री स्वामी जी ने बताया कि आपकी पुस्तक 'वेद दर्शन' के पुत्रेष्टियज्ञ से एक निराश परिवार में ११ वर्ष के पश्चात् पुत्र की प्राप्ति हुई। वह पुत्रेष्टियज्ञ मैंने ही कराया था।

☛ श्री राजीव कुमार 'हिन्दी पुत्र' ई० १०८८ राजेन्द्र नगर आवास विकास, बरेली, से लिखते हैं —'दर्पण' पुस्तक बहुत ही प्रेरणास्पद है। "राष्ट्रीय गौरव" पुस्तक राष्ट्रीय गौरव की अनुभूति कराने वाले तत्वों का विवेचन करती है। मैं आपकी इस बात से पूर्णत: सहमत हूँ कि प्रत्येक लिपि और भाषा, अपने में उस संस्कृति को समाहित किये होती है। जिस लिपि और भाषा को जीवन में अपनाया जाता है, उसके साथ उसकी संस्कृति स्वत: प्रवेश कर जाती है। उससे बचा नहीं जा सकता।

☛ श्री पराग जी फोटोग्राफरी में प्रवीण हैं। पराग का अर्थ मूल तत्व होता है। श्री पराग जी अपने वंश के पराग हैं। माता—पिता, भाई, बहन और भतीजे भतीजी का पूरा सहारा बने रहते हैं। विपदा को बड़ी सरता से सहन करते हुए आगे पग बढ़ाते ही रहते हैं।

☛ श्री सन्तोष कुमार जी गुप्ता एडवोकेट। वास्तव में सन्तोषी हैं, राजस्व—अधिवक्ता के रूप में नगर मुरादाबाद में कार्य करते हैं। न्याय दिलाने में सतर्क रहते हैं। नगर में आपको सम्मान की दृष्टि से देखा जाता है।

☛ श्री गिरधर गोपाल पाँडे जी मुरादाबाद में सिटी पोस्टाफिस में पोस्टमास्टर थे, मैं पार्सल कराने जाता था। उन दिनों पोस्टाफिस में बैग कम थे। पाँडे जी ने युक्ति निकाली, जो पार्सल कराने आये वह

एक खाली कट्टा लेकर आये। बैगों की कमी खाली कट्टों से पूरी करी। यह युक्ति अच्छी रही और पाँडे जी की प्रशंसा भी होने लगी। पाँडे जी के शरीर में रक्त दोष होने के कारण सारे शरीर में दाद जैसे चिन्ह बनने लगे। मैंने उन्हें खदिरारिष्ट और किशोर गूगल का सेवन बताया। उसके सेवन से रोग में लाभ हुआ।

☞ उड़ीसा के सत्यवीर शास्त्री जी को 'संस्कार' पुस्तक बहुत अच्छी लगी, वे लिखते हैं कि इस पुस्तक का भारत की सभी भाषाओं में रूपान्तर होना चाहिये। देश हित में 'संस्कार' पुस्तक का अधिक से अधिक प्रसार होना चाहिये।

☞ श्री लक्ष्मण कुमार आर्य, शास्त्री नगर भीलवाड़ा से लिखते हैं। आपकी पुस्तक 'करवा चौथ' महिलाओं के लिये अति उपकारी है 'करवा चौथ' का पर्व कैसे मनाना चाहिये इस विषय पर आपने विस्तार से प्रकाश डाला है।

☞ पोस्ट सावर अजमेर से श्री दिनेशकुमार आर्य लिखते हैं कि 'मनुर्भव' पुस्तक में आपने मानव के सभी प्रकार के कृत्यों पर अच्छी प्रकार खोज पूर्ण विवेचना की है। इसके मनन से वास्तव में मानव 'मनुर्भव' बन सकता है।

☞ श्री मानक चन्द जी आर्य चन्दौसी के निवासी थे, वे ब्रजलाल किशन लाल सर्राफ के यहाँ मुनीम थे। वह मेरे पास आया करते थे, उन्हें मेरी पुस्तक 'गर्भावस्था की उपासना' इतनी अच्छी लगी कि उन्होंने दो सौ प्रतियाँ इस पुस्तक की ले जाकर चन्दौसी में घर—घर पहुँचाई।

☞ श्री राजेन्द्र किशोर जी पंसारी, को 'वेद की चार शक्तियाँ' पुस्तक के नित्य पारायण से अत्यन्त लाभ प्राप्त हुआ और हर समस्या का समाधान भी होता रहा।

☞ पुत्र प्राप्ति की इच्छा से श्री दीपक महरोत्रा पत्नी सहित मेरे पास आये। निर्देशानुसार कार्य किया 'सूर्य गुणी' औषधि का सेवन कराया। समय आने पर पुत्र रत्न की प्राप्ति हुई। इतने कृतज्ञ व्यक्ति हैं कि प्रभु कृपा को मेरा आर्शीवाद मानते हैं। और अनेक निराश व्यक्तियों को मेरे पास भेज कर, उनकी निराशा को दूर करते ही रहते हैं।

☞ हिन्दू स्कूल के मेरे पुराने सहपाठी श्री रविप्रकाश, शर्मा जी, अत्यन्त सीधे, कर्मकाण्ड में प्रवीण, सन्तोषी ब्राह्मण हैं। वास्तव में ब्राह्मण के सत्य स्वरूप की प्रतिमूर्ति ही है।

☞ श्री बक्शी जी चौमुखापुल मुरादाबाद में काँटे बाटों का व्यवसाय करते हैं। उन्होंने प्रश्न किया, उत्तर दिशा को सिर करके क्यों नहीं सोना चाहिये। मैंने कहा—उत्तर दिशा में ध्रुव तारा स्थित है, उसमें प्राणाकर्शण की शक्ति अधिक है, वह हमारे मास्तिष्क की शक्ति को खींच लेता है, निरन्तर उत्तर दिशा को सिर करके सोने से उन्माद अर्थात् पागल पन का रोग उत्पन्न होने लगता है। दक्षिण दिशा को शीष करके सोने से शक्ति मिलती है, पूर्व को आयुष्य वृद्धि, और पश्चिम को भय उत्पन्न होता है।

☞ सम्भल निवासी श्री विक्रम सिंह जी आर्य बड़े ही स्वाध्यायशील और कर्मठ आर्य थे, इनके सुयोग्य पुत्र श्री सन्जय सिंह जी भी अत्यन्त पुरुषार्थी और आर्य सिद्धान्तों को जानने के इच्छुक हैं। सन्जय सिंह जी कई बार अपनी शंकाओं का निवारण करने मेरे पास आते रहते थे, इससे उनके अन्दर वेद तथा महर्षि दयानन्द जी के अमर ग्रन्थ सत्यार्थ प्रकाश के प्रति अति अगाध श्रद्धा बनी। वे इस बार २७/११/६ सोमवार के दिन भी सत्यार्थ प्रकाश के नवम समुल्लास के प्रश्न "मनुष्य का जीव पशवदि में और पाश्वादि का मनुष्य शरीर में और स्त्री का पुरुष के और पुरुष का स्त्री के शरीर में जाता आता है या नहीं"।

उत्तर – "हाँ! जाता आता है"। इस उत्तर के पश्चात् स्वामी जी ने इसकी व्याख्या रूप में तीसरे पहरे के अन्त में लिखा है। "जो स्त्री के शरीर धारण करने योग्य कर्म हो तो स्त्री और पुरुष के शरीर धारण करने योग्य कर्म हो तो पुरुष शरीर में प्रवेश करता है और नपुंसक गर्भ की स्थिति समय स्त्री पुरुष के शरीर में सम्बन्ध करके रज वीर्य के बराबर होने से होता है।" इस लेख से लगता है कि

स्त्री का स्त्री शरीर में और पुरुष का पुरुष शरीर में ही जीव जाता है। जबकि संस्कार विधि के गर्भाधान संस्कार में सम—विषम रात्रि के हिसाब से स्त्री—पुरुष के शरीर बनते हैं। इन दोनों में अन्तर क्यों है।

उत्तर—यह आपका भ्रम है, यह दोनों एक ही हैं, दोनों कथनों में कोई अन्तर नहीं। केवल समझने का अन्तर है। ऋषिवर ने उत्तर में सबसे पहले शब्दों में ही स्पष्ट कर दिया, "हाँ! जाता आता है।" अर्थात् स्त्री—पुरुष, पशु, पक्षी आदि सभी में जाता आता है। अन्त में नपुंसक के लिये लिखा है रज—वीर्य का समान होना। अर्थ बना "जो स्त्री शरीर धारण के लिये कर्म होगा अर्थात् 'विसम रात्रि' में और पुरुष शरीर धारण के लिये जो कर्म होगा अर्थात् 'सम रात्रि' में। यही इसका समाधान है। कथन में कोई विरोधाभास नहीं है।

☞ श्री भोला नाथ जी किस्तों का काम करते थे, वह हमारे पिता श्री के पास आया करते थे। इनके पुत्र श्री विश्वनाथ जी कवि थे, अपनी रचना मुझे सुनाने आ—जाया करते थे। इनके पुत्र श्री अमरनाथ जी रेलवे में कार्यरत थे, अतिरिक्त समय में घर पर ही होम्योपैथी की चिकित्सा के द्वारा सबका कल्याण करते रहते थे, इनके पुत्र श्री शरद चन्द्र जी हैं जो व्यापार में लगे हुये हैं। श्री विश्वनाथ जी के छोटे पुत्र श्री अनिल प्रकाश जी स्टील के बर्तनों का थोक व्यापार करते हैं। अच्छे उद्यमी, परोपकारी और दानी भी हैं।

☞ श्री रामानन्द शर्मा जी डी०लिट० — १०/१२/६ रविवार के दिन अनायास मेरी दुकान पर आकर विराजे, नमस्ते के पश्चात् चर्चा होने लगी और कहने लगे कि मैं आपको जानता हूँ, मैंने आपकी कई पुस्तकें पढ़ी हैं। मैंने जिज्ञासा वश कहा—आपका परिचय! तब उन्होंने बताया कि मुझे डा० रामानन्द शर्मा कहते हैं। मैंने आश्चर्य मे कहा—आपकी चर्चा डा० अजय अनुपम जी और श्री पुष्पेन्द्र वर्णवाल जी करते रहते हैं, पुस्तकों की भूमिका आदि लिखते हैं, क्या आप वही हैं? तब डा० साहब ने हँसते हुये

कहा—'हाँ'। यह सुनकर मुझे अति प्रसन्नता हुई। मैंने उनको वेद दर्शन आदि कई अपनी रचित पुस्तकें भेंट में दीं।

साहित्यकार ही साहित्य का सही मूल्याँकन कर अवलोकन का इच्छुक, अध्ययन कर पत्र द्वारा—कृतज्ञता व्यक्त करते हुए १५/१२/६ को पत्र लिखकर भेजते हैं—"आपकी पुस्तक घर जाकर पढ़ी। मैं बहुत समय से ऐसी पुस्तक की खोज में था, जिसमें वेदों के प्रसिद्ध सूक्त एकत्र दिये गये हों, जिससे उनका अवलोकन किया जा सके। वैदिक चिन्तन की प्राणवत्ता को समझा जा सके। 'वेद दर्शन' आपका पाकर निश्चयतः प्रसन्नता हुई है। आपने अत्याधिक श्रमपूर्ण यह संकलन एवं व्याख्यायन किया है। अभी औपचारिक तौर पर देखा है। मैं सुविधानुसार उसका अनुशीलन करुगा। (शोध पीठ बी० ९ जिगर कालोनी मुरादाबाद)

☛ सार्जेन्ट एन.एस. दीक्षित एस.एन.क्यू. ६७६/२ (सुपरन्यू) एयरफोर्स स्टेशन जामनगर गुजरात ३६१००३ पत्र द्वारा १/१२/६ को लिखते हैं आपके द्वारा प्रकाशित पुस्तक "पुत्र प्राप्ति का साधन" का हमने आद्योपान्त अध्ययनं किया है। आपके द्वारा दिशानिर्देशित मार्ग दर्शन की जितनी प्रशंसा की जाय वह कम ही है। सर्वजन हिताय व सर्वजन सुखाय की भावना से ओत—प्रोत हैं। आपने एक देवदूत का कार्य किया है, आपको हमारा कोटि—कोटि प्रणाम स्वीकार हो।

☛ आर्य श्रेष्ठ महात्मा चैतन्य मुनि जी, वैदिक वरिष्ठ आश्रम (महर्षि दयानन्द धाम) ८१ एस ४ सुन्दरनगर कालोनी जिला मण्डी (हि.प्र.) से पत्र मिला ३/१/२००७ का आप लिखते हैं—मुरादाबाद में आकर आपसे मिलना हमारे लिये विशेष सौभाग्य रहा। आप जिस प्रकार से साहित्य साधना में लगे हुए हैं वह अत्यधिक सराहनीय व अनुपम है। मैंने कुछ पुस्तकों को देखा है, आपका चिन्तन मौलिक तथा व्यवहारिकता से परिपूर्ण है। मैं आश्रम की मासिक पत्रिका में आपके लेखनादि के बारे में समय—समय पर परिचयात्मक सामग्री देते रहने का प्रयास करूँगा।

☛ श्री विजय कुमार शेषराव बाघमारे, गणेश नगर (मार्किटयार्ड) निलंगा जि. लातूर (महाराष्ट्र) ४१३५२१ का फून आया और ५० पुस्तकें इच्छानुसार सन्तान की मंगवाई। पत्र में पता साफ नहीं था मैंने उत्तर भेजा उसी बीच २५/१२/२००६ को महात्मा चैतन्य मुनि जी मुरादाबाद आये, उन्होंने मुझसे मिलने की इच्छा व्यक्त की और वह मेरी दुकान पर आये। चलते समय कहा कि मैं पहले विजय कुमार शेषराव को धन्यवाद दूँगा कि उन्होंने मुझे मुरादाबाद के महान सन्त से मिलवाने का मार्ग प्रशस्त किया। मुझे आपसे मिलकर आत्म सन्तुष्टि और अति प्रसन्नता हुई।

☛ श्री विजय किशन आर्य (ठक्कर) जी वानप्रस्थी को वेद उद्‌गीत पुस्तक अति पसन्द आई, वह मेरी दुकान पर १५/१/२००७ को आये और वेद संस्थान को १००/— दान में दिये और कहा—श्री हरवंशलाल कुमार जी ने बताया कि जीवन में जो वस्तु चाहिये, उसी को खरीदना चाहिये। यदि उसके बिना कार्य चल सकता है तो नहीं खरीदनी चाहिये। पैसे का दुरुपयोग नहीं करना चाहिये, न किसी से होड़ करनी चाहिये। कर्ज लेकर अपनी शान बनाना दुःख दाई हो जाता है। ब्याज देते—देते परेशान हो जाता है रातों की नींद उड़ जाती है। कर्ज कभी नहीं लेना चाहिये। कितने उच्च विचार हैं श्री हरवंशलाल कुमार जी के।

☛ श्री जगन्नाथ प्रसाद जी मुख्त्यार और उनके छोटे भाई श्री ईश्वर दयाल जी मुख्त्यार कानूगोयान। श्री विन्ध्यवासनी प्रसाद जी पीरगैब, लंका। श्री रामूर्ती सरन जी गोटे वाले, श्री हरिओम जी रस्तौगी, महल सराय। श्री जयदेव शरण जी नवाबपुरा। श्री रामसरन जी वैश्य, श्री अश्विनी कुमार जी, श्री बलवीर सिंह जी, चौरासी घन्टा। श्री रामअवतार जी औतार मेडिकल हाल चौमुखापुल। सत्यदेव रस्तौगी, श्री राजीव कुमार रस्तौगी चौराहा गली। श्री शम्भूनाथ, श्री बाबूराम, श्री धनी राम, श्री ठाकुरदास—बाला की सराय। श्री रामचन्द्र जी, श्री लक्ष्मण प्रसाद, श्री रामगुलाम जी मानपुर। श्री शम्भू

शरण जी पंसारी, भगत जी पंसारी, श्री जगदीश सरन जी, श्री मुरारीलाल जी, दिन्दारपुरा। श्री रामसरन जी भटनागर, श्री रामगोपाल जी, श्री कैलाश चन्द्र जी, श्रीमती सुधा त्यागी, श्री अशोक कुमार अग्रवाल, डा० भूमित्र, हरपाल नगर। श्री हरि किशन टण्डन, श्री पुरुषोत्तम हकीम, साहू प्रहलादी लाल रस्तौगी चूहे वाले, बल्लम स्ट्रीट। श्री पृथ्वी राम फरनीचर वाले, आर्य नगर स्टेशन रोड। श्री शिवचरनलाल गुलाठी तम्बोली मोहल्ला। श्री वीर सिंह जी वर्मा गुजराती मौहल्ला। भूड़ा और असालतपुरा के जाटव परिवारों में। श्री हंसराज भगत जी, श्री सतीशचन्द्र जी श्रीमन, श्री रमेश चन्द जी गोयल, दौलतबाग। श्री आर.डी.गुप्ता, श्री राममोहन जी, डिप्टी गंज। हितेष गुप्ता, श्री वैद्य बनवारी लाल कटघर। श्री धर्मवीर वैद्य खुशहाल नगर, श्री वेद प्रकाश रस्तौगी, श्री राम किशन जी, मौ० भट्टी। श्री राम रक्षपाल जी सम्भली गेट। श्री परमानन्द वकील, पुजेरीगली। श्री रघुवीर सरन सक्सैना लाजपत नगर। श्री हरीप्रसाद आर्य दिलवाली गली। महाशय राम चन्द जी वर्मा तम्बाकू मोहल्ला। श्री महाराज नारायण टण्डन जाटोगली। बलराज खन्ना स्टेशन रोड। ज्ञान प्रकाश जी भगत हरपाल नगर। राजेश गुप्ता जिगर कालोनी। ओम प्रकाश आर्य हरपाल नगर।

इन सभी के गृहों पर मैंने यज्ञ में सम्मलित होकर यज्ञ की महिमा पर प्रकाश डालते हुये यज्ञ की वैज्ञानिकता को स्थापित किया। इस प्रकार यज्ञ के प्रति सबमें आस्था जागृत हुई।

श्री सतीश चन्द जी गुप्ता एडवोकेट, श्री रामअवतार जी रम्मनबाबू, श्री वीरकान्त जी गुप्ता मैडिकल स्टोर, श्री राधेश्याम जी रस्तौगी सर्राफ, श्री अजीत कुमार जी गुप्ता, (ब्रास्को एक्पोर्ट) श्री कामेश्वर नाथ जी (एक्पोर्ट), श्री राम किशोर जी रस्तौगी, श्री उमेशचन्द्र जी गुप्ता आर० एण्ड पी. एक्पोर्ट, श्रीमती गायत्री देवी पत्नी श्री प्रेम प्रकाश जी जलेसर वाले, श्री नवीन कुमार जी श्रीमती राजेश्वरी देवी, श्री राजेन्द्र नाथ जी, श्री राजेन्द्र प्रसाद जी फरीदाबाद,

श्री जय प्रकाश जी सर्राफ, श्री कैलाश चन्द्र जी लाजपत नगर, आदि महादानियों ने वेद संस्थान को पुस्तक प्रकाशन में पूर्ण सहयोग दिया।

श्री देवेन्द्र कुमार जी गुप्ता सेठ रामपुर, श्री राममुकुट गुप्ता, श्री हरिओम जी गुप्ता सम्भल, श्री सुक्खन सिंह जी, श्री राजेन्द्र कुमार जी खण्डेलवाल ठाकुर द्वारा, श्री रमेश चन्द्र जी खण्डेलवाल और उनके साथी ठाकुरद्वारा, पुरुषार्थ वान आर्य कृषक अपनी श्रम साध्य आय का अंश, उदारता पूर्वक भेजते रहते हैं वे हैं, श्री स्वरूप लाल जी आर्य शामदों जीन्द हरियाणा, ज्ञानेन्द्र गाँधी परिवार, मेजर सन्दीप मदान, श्री पुष्पेन्द्र कुमार गुप्ता आदि ने अपने सात्विक दान से वेद संस्थान को साहित्य प्रकाशन में आन्शिक सहयोग किया।

विद्या का दान सर्वोपरी दान होता है, जैसा दान होता है वैसा ही उसका फल भी प्राप्त होता है। अन्न, वस्त्र, भवन, आभूषण आदि सब योनियों को किसी न किसी रूप में प्राप्त हो ही जाते हैं। परन्तु विद्या के दान से विद्या ही प्राप्त होगी और विद्या प्राप्ति के लिये मनुष्य जन्म ही पुन: प्राप्त होता है। □□

अपनी पहचान

मुरादाबाद के पत्रकार श्री अरविन्द मिश्र नारद जी ४ अगस्त २००३ को साक्षातकार लेने आये वह शाह टाइम्स में प्रकाशित हुआ। मैंने अन्त में कहा था कि मैं मानता हूँ कि जो थोड़ा सम्पन्न होता है तो पहनावे को भुला देता है, अधिक सम्पन्न होता है तो भाषा भूल जाता है सर्वाधिक सम्पन्न होता है तो अपनी भारतीय संस्कृति को भूल जाता है।

मैं बराबर देखता चला आ रहा हूँ, जो व्यक्ति गरीबी रेखा से कुछ भी ऊपर उठता है तो वह सबसे पहले अपने भारतीय पहनावे को तिलाञ्जली देकर पश्चिमी पोषाक को धारण कर अपने आपको

कुछ ऊँचा समझने लगता है। और जब और अधिक आर्थिक उपलब्धि
। प्राप्त करता है और नये व्यवसाय आदि को लेकर बैठता है तो
अपनी भाषा को तिलाञ्जली देकर बड़े गर्व से चौड़ी छाती करके
अपने व्यावसायिक नामपट को अंग्रेजी भाषा में लिखवाता है। अपने
प्रतिष्ठान के बिक्री पत्र, उधार पत्र, विज्ञापन आदि सब कुछ अंग्रेजी
में ही छपवाता है। जब कि अपने प्रतिष्ठान के सारे कर्मचारी आदि
और स्वयं भी ग्राहक से हिन्दी में बातें करता, माल बेचता, ग्राहक,
को सन्तुष्ट करने के लिये अपने माल की सारी विषेशतायें हिन्दी में
ही बताता है। अंग्रेजी में एक शब्द नहीं बोलता।

रोजी रोटी अर्जित करने के लिये हिन्दी भाषा का प्रयोग
करता है, परन्तु नामपट, डब्बे थैली आदि के रूप में अपने कन्धों
और सिर पर अंग्रेजी को बैठाता है। यह कितना घोर पतन है,
कृतघ्नता है, और अन्याय है और सर्वाधिक सम्पन्न होने पर अपनी
भारतीय वैदिक संस्कृति को भुलाकर अपने घर का सारा वातावरण,
रहन सहन, खान पान आदि सब कुछ बदल कर पाश्चात्य शैली में
आ जाता है। अपने पर्वों का भी अंग्रेजी करण कर श्री कृष्ण
जन्माष्टमी को 'हैप्पी बर्थ' के रूप में मनाना चाहता है। जबके वह
यह नहीं जानता कि 'हैप्पी वर्थ' जीवित का होता है और महापुरुषों
के जन्म दिन मनाये जाते हैं। दीपावली के दिन अपनी समृद्धि के
लिये लक्ष्मी पूजन करेगा परन्तु दीपावली कार्ड अंग्रेजी के खरीद कर
अंग्रेजी में छपवाकर ही भेजेगा।

महे चन त्वाद्रिवः परा शुल्काय दीयसे।
नसहस्राय नायुताय वज्रिवो नशताय शतामघ।।
ऋग्वेद ८/१/५—सामवेद ३/२/१०/७—२९१

हे अन्धकार का नाश करने हारे ज्ञान, विज्ञान, कला,
संस्कृति, सभ्यता, शिक्षा, वाणी, अक्षर, अंक, गणित, कृषि,
आवास, यातायात, रक्षा उपकरणों आदि समस्त शिक्षाओं से सम्पन्न
वेद ज्ञान को देने हारे! हे वज्र शक्ति को धारण करने हारे आत्मन! बड़े

भारी मूल्य अथवा सम्पन्नता की प्राप्ति के बदले में तुझको नहीं दिया जा सकता अर्थात् अपनी संस्कृति के किसी भी अंश का त्याग नहीं किया जा सकता है। हे सैंकड़ों ज्ञान कर्मों से सम्पन्न! न सौ के बदले में, न हजार के बदले में और न लाख के बदले में तुझे नहीं दिया जा सकता है अर्थात् लौकिक अपार धन सम्पदा के लोभ में आकर तुझ ईश्वर व धर्म और संस्कृति का त्याग कभी न करना चाहिये।

मेरा विनम्र निवेदन है कि पाश्चात्य के भूत को उतार फेंको अपनी पहचान स्वयं बनाओ। प्रात:काल यज्ञ, उपासना के समय पर धोती कुर्ता धारण कर भारतीय वेश भूषा में पूजा किया करो। देखो कितना आनन्द आता है, कितनी शान्ति मिलती है। जितना और अधिक सम्पन्न होते जाओ, उतना अधिक अपनी संस्कृति से प्रीति को बढ़ाते चले जाओ और संसार में अपनी संस्कृति का प्रसार करो। बच्चों के जन्म दिन केक काटकर या मोमबत्ती बुझाकर मत मनाओ परन्तु घी के दीपक जलाकर और यज्ञ द्वारा मनाया करो। इसकी विधि हमने 'जन्म दिवस' पुस्तक में छापी है। खड़े होकर पेशाब मत करो, यह हानिकारक होता है बीमारी को उत्पन्न करता है।

मूत्रं नोत्तिष्ठिता कार्यम्।।

महाभारत अनुशासन पर्व १०४

अर्थ—खड़े होकर पेशाब नहीं करना चाहिये, यह अमंगल कारी और अलक्ष्मीदायक है। कालान्तर में पक्षाघात्, हृदयरोग, आँत का उतरना जैसें रोगों का हो जाना सम्भव है।

अपने पड़ोस में, गली मोहल्ले में, नगर में, प्रान्त में, और सारे देश में अपनी संस्कृति, भाषा, वेशभूषा, रहन सहन आदि सब का भारतीय—करण करो। अंग्रेजी में छपे किसी भी प्रकार के निमन्त्रण का परित्याग करो।

प्रभु जी! से प्रार्थना करते रहो कि 'हे प्रभु जी! मेरे आर्यवर्त्त देश अर्थात् सम्पूर्ण भारत वर्ष में आर्यों का अर्थात् श्रेष्ठ पुरुषों का

राज्य हो। धार्मिकता, सत्यता, राष्ट्रभक्ति, सदाचार, सत्य व्यवहार, सत्य आचरण, परोपकार, शिक्षा, विज्ञान, वीरता, समृद्धि आदि से भरपूर हो। ब्रह्मचर्य आदि के पालक होकर सारे नागरिक व्यायामशील होकर लोह पुरुष के समान बल वीर्य से भरपूर हों। दुराचार, पापाचार, अत्याचार, अत्यन्त धन संग्रह की प्रवृत्ति से दूर होकर, सब की उन्नति में अपनी उन्नति समझने वाले हों।

इस देश के वासियों ने समस्त संसार को सभ्यता और संस्कृति का पंचशील दिया, कला, लिपि, भाषा, अंक, गणित, ज्ञान, विज्ञान, योग, समाधि और मोक्ष पथ का सम्पूर्ण ज्ञान दिया। इसी कारण यह देश समस्त संसार का गुरु कहलाया। मनु जी महाराज को इस देश की आचार परम्परा की मान्यता एवं प्रमाणिकता पर गर्व है। उनका कथन है।

एतद्देशप्रसूतस्य सकाशादग्र जन्मनः।
स्वं स्वं चरित्रं शिक्षेरन्पृथिव्यां सर्व मानवाः।।

इस देश में उत्पन्न हुये वेद विद्वानों से पृथ्वी के समस्त मानव अपना अपना चरित्र सीखें।

भगवान मनु जी महाराज की यह गर्वोक्ति सर्वथा सत्य है। भारत ने एक सुदीर्घ काल तक आचार के सम्बन्ध में जगत् का नेतृत्व किया है।

जवानी में बचपने के शासित पने को भूल जाता है, परन्तु बुढ़ापे में जवानी के शासन को याद रखता है, तभी तो बुढ़ापे में कष्ट पाता है, यदि बुढ़ापे में भी जवानी के शासन को भुला दे तो सुखी बन सकता है। बुढ़ापे में जैसा खाने को मिले वैसा ही खाले, जैसा वस्त्र मिले वैसा ही पहन ले, इसी में सन्तोष करले तो बुढ़ापा सुख से कट जायगा। बच्चों को सब कुछ बाँट देने के पश्चात् भी अपने पास अपने सहारे के लिये कुछ न कुछ व्यवस्था अवश्य बनाये रखे। कमाऊ पूत का कभी "शोषण न करे" स्वयं ही जो सहयोग वह कर दे, उसे स्वीकार करें।

छोटे, बड़े, भाई, बहिन और माता—पिता की सेवा और सहयोग अवश्य करना चाहिये, परन्तु "शोषित मत होना" अपने काम अपना पैसा ही आता है। माता—पिता भाई—बहिन जिन का सदैव सहयोग किया है, वह एक ओर खड़े—खड़े देखते रहेंगे, परन्तु सहयोग का कोई नाम न लेगा। कारण उपकार का फल अपकार ही होता है।

पत्नी और अपने बच्चों की कभी उपेक्षा मत करना, आड़े समय पर यही काम आयेंगे, इनके साथ अपमान जनक अथवा कटु अपशब्दों का प्रयोग कभी नहीं करना चाहिये।

स्त्री (वज्र) तलवार के समान है। उसे सुरक्षित रूप से उचित व्यवहार, कर्त्तव्य और अधिकारों के साथ गृह में रखा जाय तो वह भी तलवार के समान समय पर अपनी तथा परिवार की रक्षा का साधन होती है और अपना सहारा भी।

अपनी आय में से कुछ न कुछ नित्य संचित कोष में डालते रहना चाहिये। एक व्यक्ति जो पीतल के पात्रों की छिलाई करता था, वह नित्य एक मुट्ठी चूनस एक कोने में डालता रहता था, कालान्तर में वह एक बहुत बड़ा ढ़ेर बन गया, जो समय आने पर एक बहुत बड़ा सहारे का साधन बना।

विदेशी महिला अथवा पुरुष से कभी विवाह नहीं करना चाहिये। यह अनमेल विवाह होता है। विदेशी संस्कृति में विवाह भोगवाद का अंग है, जो कुछ समय के पश्चात् खण्डित होकर बदलता रहता है। भारतीय संस्कृति में नर—नारी एक दूसरे के सुख—दुःख में जीवन पर्यन्त साथी रहते हैं, कोई भी एक दूसरे को आड़े समय में धोखा नहीं देता, परन्तु पूर्ण भरोसे के साथ सहयोग देता है।

यह जीवन के कटु अनुभव हैं, जो आपके सामने रखे हैं, इनसे लाभ उठायें या न उठायें इसे आप जानें।

मैं छिद्रान्वेषी को शत्रु नहीं मित्र मानता हूँ। जिस कमी पर मेरी दृष्टि नहीं जा पाती वहाँ छिद्रान्वेषी की दृष्टि शीघ्र पहुँच जाती है और मेरी कमी, भूल, और त्रुटि में सुधार हो जाता है। यह बात तो अवश्य है कि छिद्रान्वेषी कमी निकाल कर नीचा दिखाने की चेष्टा करता है, यह उसकी भूल है। यदि छिद्रान्वेषी इस कुटिलता को छोड़ कर विनम्रता के भाव को अपना ले तो वह श्रेष्ठ बन जाता है। ☐☐

मन की गुहार

मैंने सन् १९५६ से लिखना प्रारम्भ किया। अब तक ४९ कृतियाँ प्रकाशित हो चुकी हैं। तीन कृतियाँ तैयारी में हैं। इनमें से १३ पुस्तकें विक्रयार्थ प्रकाशित कीं, उसमें भी अधिकतर वितरण में ही जाती रहीं २२ पुस्तकें अपने पुरुषार्थ से प्रकाशित करके सबको भेंट में देना रहा। मेरा व्यवसाय देसी बही खाते और सजावट के फैन्सी कागज का है। फैन्सी कागज की बिक्री अधिकतर मोहर्रम के अवसर पर होती थी, इसमें देहाती लोग खरीदने आते थे, उनसे झूठ बहुत बोलना पड़ता था, बहुत माथा पच्ची हो जाती थी, इसी कारण मन बड़ा अशान्त रहता था। अब से २० वर्ष पूर्व मन की गुहार उठी इसे बन्द कर। मैंने फैन्सी कागज का व्यवसाय बन्द कर दिया। केवल देसी बही खाते का ही शेष रह गया। आज के युग में अब सारा खाना कम्प्यूटर पर चला गया, इस कारण से व्यवसाय में क्षति पहुँची। आय का साधन सीमित हो जाने से अपने पुरुषार्थ से साहित्य प्रकाशित करने में बाधायें आने लगीं, परन्तु प्रभु की इतनी कृपा भी है कि भोजन वस्त्र के लिये उपार्जन होता रहता है। साहित्य प्रेमी लिखते रहने के लिये मुझे प्रोत्साहित करते रहे, मैं लिखता रहा और सबके सहयोग से १२ पुस्तकें इस प्रकार आर०एण्ड०पी० एक्सपोर्ट के स्वामी श्री उमेश चन्द्र जी ने २५/६/९५ को 'विवेकशील बच्चे'।

४/४/९९ को 'पर्वमाला' अपनी माता जी श्रीमती गायत्री देवी पत्नी श्री प्रेम प्रकाश जी जलेसर वाले। ७/५/२००० को 'दैनिक पंच महा यज्ञ' ३/२/२००७ को पुन: 'दैनिक पंच महा यज्ञ' प्रकाशित कराये। ३१/१२/९५ को श्री नवीन कुमार जी ने 'जन्म दिवस'। २०/९/९६ को श्री कामेश्वर नाथ जी ने 'करवा चौथ'। २९/५/९७ को श्री रामकिशोर जी रस्तौगी ने 'योग परिणति'। १७/९/९७ को श्री अशोक कुमार जी अग्रवाल ने 'दैनिक पंच महायज्ञ'। २३/१२/९९ को दुर्गादेवी वेद प्रचार ट्रस्ट ने 'छलकपट और वास्तविकता'। २६/२/२००० को श्री राजेन्द्र नाथ जी ने 'दाम्पत्य दिवस'। १२/१/२००१ को श्री कैलाश चन्द्र जी ने 'छलकपट और वास्तविकता।'' १५/४/२००१ को श्री वीरकान्त जी गुप्ता ने 'ईश महिमा और ''मन की अपार शक्ति''।' २९/४/२००१ को श्रीमती राजेश्वरी देवी जी ने 'रत्नमाला'। ११/२/२००१ को श्री राजेन्द्र प्रसाद जी फरीदाबाद ने 'नयन भास्कर'। १०/६/२००१ को श्री जयप्रकाश जी सर्राफ ने 'करवा चौथ'। १३/४/२००२ को श्री अजीत कुमार जी गुप्ता 'यज्ञों का महत्व और युधिष्ठिर यज्ञ गीता'। १७/५/२००२ को श्री सतीशचन्द्र जी गुप्ता एडवोकेट और श्री रामअवतार जी (रम्मन बाबू) के सहयोग से 'वेद उद्गीत' प्रकाशित हो गई। यह सब साधुवाद के पात्र हैं। १३ वीं पुस्तक 'दर्पण' के प्रकाशन ने मुझे अचम्भित कर दिया। मैं दर्पण के प्रकाशन सहयोग के लिये श्री राकेश चन्द जी आर्य सी०ए० से श्री केशव सिंह जी के साथ जाकर मिला उन्होंने इस कार्य के लिये अपने पिता श्री सुरेश चन्द जी आर्य के नाम से पाँच हजार रूपये का सहयोग १४/२/२००५ को दिया। शेप प्रकाशन सहयोग के लिये प्रयत्न करने लगा।

श्री सुक्खन सिंह जी आर्य आये और पाँच हजार रू० की प्रकाशन सहयोग राशि देकर वेद संस्थान की रसीद लेकर प्रसन्न चित्त होकर आनन्द के साथ चले गये।

एक व्यक्ति ११ वर्ष के पश्चात् पुनः साहित्य प्रकाशन में सहयोग करने का इच्छुक नहीं, दूसरी ओर आर.एण्ड.पी. एक्सपोर्ट के स्वामी पाँच वर्ष में तीन बार और २००७ में चौथी बार साहित्य प्रकाशन सहयोग करने के पश्चात् आज भी उद्यत हैं थके नहीं। श्री सुक्खन सिंह जी बैंक में कार्यकर्त्ता होते हुए भी बराबर साहित्य प्रकाशन में सहयोग करते ही रहते हैं। कुछ का मानना है कि हम साहित्य प्रकाशन सहयोग करके बड़ा उपकार कर रहे हैं। परन्तु श्री रम्मन बाबू जी का मानना है कि वेद और सद्साहित्य प्रकाशन पर सहयोग करके हम अपने को बड़ा धन्य मानते हैं।

एक इच्छुक किसी कामना से आया और उसका सहयोग कर दिया, दुबारा आया तो मना कर दिया। क्या आप जानते हैं कि परमात्मा उस समय क्या कहता हैं? आप नहीं जानते, कुछ ही जानते हैं। वह कहता है, कि मैं नित्य इसकी इच्छाओं की पूर्ति करता हूँ, कभी मना नहीं करता और तेरी भी। तू इतना अहम में आ गया कि दुबारा साहित्य प्रकाशन सहयोग के लिये ही मना कर दिया।

सत्य बात किसी को भी प्रिय नहीं होती। वह दुखती नस पर जाकर टकोर देने लगती है, उस टकोर से व्यक्ति तिलमिला उठता है। सत्य कड़वा अवश्य होता है, उसे सत्यनिष्ठ ही स्वीकार करता है। अन्य सब चाटुकारिता को ही पसन्द करते हैं। चाटुकारिता की मीठी–मीठी बातें सुनकर खूब प्रसन्न होते हैं।

यह सभी जानते हैं कि मेरा सारा संचित धन वैभव यहीं ध रा रह जायगा, साथ में जाने वाला नहीं। जहाँ मिठास होती है, चींटे वहीं आते हैं, जहाँ धन होता है वहीं पर खसोटने वाले, बँटवारा चाहने वाले, लड़ झगड़ कर झपटने वाले, सब एकत्र हो जाते हैं। जब यही सब कुछ होना है तो मैं शब्द सागर भण्डार को ही क्यों न संचित कर छोड़ जाऊँ। जहाँ, खसोटने, बाँटने तथा झगड़ने वाले नहीं आ सकेंगे। यदि कुछ ले भी गये तो उससे औरों का कल्याण ही होगा। □□

लोकार्पण

११ दिसम्बर २००५ रविवार के दिन स्टेशन रोड आर्य समाज में 'दर्पण' और 'राष्ट्रीय गौरव' पुस्तकों के लोकार्पण कार्यक्रम में वेद संस्थान के उपाध्यक्ष श्री आचार्य ऋषिपाल जी ने कहा—महानगर मुरादाबाद में आर्य साहित्य का सृजन करने वाले दो विद्वान् —

१— श्री यशपाल जी सहगल जो दिवंगत हो गये और दूसरे श्री वीरेन्द्र गुप्त: जी हैं जो बराबर आपको सद् साहित्य भेंट करते ही रहते हैं, इन्होंने जीवन उपयोगी प्रत्येक विषय को इंगित किया है।

श्री सन्त यादव जी ने अपने विचार प्रस्तुत करते हुए कहा—श्री वीरेन्द्र गुप्त: जी को मैं बहुत समय से जानता हूँ, मेरी हर समस्या का उन्होंने समाधान किया है, वह मुझे सदैव सम्मान देते रहे, परन्तु मैंने उन्हें कभी लिफ्ट नहीं दी, फिर भी वह मुझे आदर देते रहे, और कहा—जिस प्रकार सुवर्ण को ठोक—पीट कर, कसौटी पर कस कर और अग्नि में तपाकर परीक्षा करते हैं, उसी प्रकार सन्त यादव भी व्यक्ति को ठोक—पीट कर, अपनी कसौटी पर कसकर और तपाकर, जब ठीक समझता है तभी मान्यता देता है। हो सकता है कि आप इसे मेरा 'ईगो' अभिमान समझें, परन्तु मैं सन्त यादव हर किसी को आसानी से सम्मान नहीं देता। मैंने संसार घूमा है, हर जगह व्यक्ति को देखा और परखा है, मैंने अनुभव किया है कि संसार में सबके चेहरों पर मेकप ही देखा है। सही चरित्र का चित्रण कठनाई से ही दीख पड़ता है, वह भी सैकड़ों में कोई एकाध। इस कोटि मे मैंने श्री वीरेन्द्र गुप्त: जी को सही और पवित्र पाया है, इसी कारण मैं आज श्री वीरेन्द्र गुप्त: जी को सम्मान प्रदान करता हूँ।

श्री अनिल बंसल जी ने अपने भाषण में कहा—इस कर्मयोगी मनीषी (वीरेन्द्र गुप्त: जी) ने अब से ५० वर्ष पूर्व प्रजनन (जैनेटिक्स) सम्बन्धी प्रक्रिया को प्रस्तुत करते हुये अपरिवर्तनशील सिद्धान्तों को प्रतिपादित किया है, उसे समझने के लिये हर दस वर्ष

के पश्चात् शोध में परिवर्तन को स्वीकार करने वाले वैज्ञानिक शोध कर्त्ता, जितनी तीव्रगति के साथ वैज्ञानिक शोध कार्य कर रहे हैं यदि उसी गति से कार्य करते रहे तो आगे आने वाले १०० वर्षों में भी उसके पास तक पहुँचने में सक्षम नहीं हैं। वह सभी सिद्धान्त श्री वीरन्द्र गुप्त: जी ने इच्छानुसार सन्तान पुंस्तक में अंकित किये हैं और कहा

देखने वालों ने क्या क्या नहीं देखा होगा।
मेरा दावा है कि वीरेन्द्र जी जैसा नहीं देखा होगा।

श्रीमती निर्मला जी आर्य ने कहा—श्री वीरेन्द्र गुप्त: जी जिन्हें मैं चाचा जी के रूप में स्वीकार करती हूँ, उन्होंने 'करवा चौथ' और 'वेद दर्शन' पुस्तकें तैयार करके संसार का बहुत बड़ा उपकार किया है।

पुत्रेष्टि यज्ञ श्रृगी ऋषि ने कराया था, ऐसा इतिहास में मिलता है, परन्तु यह कहीं नहीं मिलता कि पुत्रेष्टि यज्ञ किन मन्त्रों से, किस रीति से, किस प्रकार किया जाता है। इसे चाचाश्री वीरेन्द्र गुप्त: जी ने सम्पूर्ण विधि के साथ पुत्रेष्टि यज्ञ शीर्षक से वेद दर्शन में अंकित किया है।

श्रीमती मनोरमा जी ने कहा—श्री गुप्त: जी ने दर्पण में दयाराम जी के चरित्र का अच्छा उल्लेख किया है। उनका सम्पूर्ण साहित्य प्रेरणा दायक होता है।

श्री सुक्खन सिंह जी ने अपने विचार प्रस्तुत करते हुए कहा—श्री वीरन्द्र गुप्त: जी का शंका समाधान करने का एक अलग प्रकार है। जिज्ञासु उनके समाधान से पूर्ण सन्तुष्ट होकर ही जाता है। मैंने भी अपने बहुत से प्रश्नों का सही और सन्तोष जनक उत्तर उन्हीं से पाया।

डा० अजय अनुपम जी ने अपने सम्बोधन में कहा—बाजार साहित्य से भरा पड़ा है, परन्तु सद् साहित्य का अभाव है, उस अभाव की पूर्ति श्री वीरन्द्र गुप्त: जी द्वारा लिखित साहित्य से कुछ हो रही है। वह सद्‌साहित्य आपके पास तक पहुँचाने का कार्य आपके सहयोग से वेद संस्थान कर रहा है।

विशिष्ट अतिथि श्री पुष्पेन्द्र कुमार जी गुप्ता ने अपने प्रवचन में कहा—मुझे अत्यन्त हर्ष है कि श्री वीरेन्द्र गुप्त: जी द्वारा लिखित "दर्पण" एवं "राष्ट्रीय गौरव" पुस्तकों का आज लोकार्पण हो रहा है।

जैसा कि आप सब जानते हैं, श्री वीरेन्द्र जी हमारे नगर के महान लेखकों में से एक हैं। विभिन्न संस्थाओं द्वारा उनको सम्मानित किया जा चुका है। आर्य समाज के कर्मठ व्यक्ति हैं। वीरेन्द्र जी द्वारा लिखित कई पुस्तकें प्रकाशित हो चुकी हैं, जिनमें से "ज्ञान कर्म उपासना, दैनिक पंचमहायज्ञ, योग परिणति, गायत्री साधन" आदि कुछ पुस्तकों को पढ़ने का मुझे सौभाग्य प्राप्त हुआ है। उनकी सभी पुस्तकें ज्ञान वर्धक हैं।

इसी कड़ी में "दर्पण" में भी छोटी छोटी कहानियों के रूप में बड़ी ही शिक्षाप्रद चर्चा है। उन्हें जीवन में आसानी से उतारा जा सकता है। ठीक ही लिखा है "संसार एक 'दर्पण' है उसमें अपने आपको देखो, समझो, और विचार कर अपने को पहचानो"

इसी प्रकार हमारे राष्ट्र के महान पुरुषों की गाथायें "राष्ट्रीय गौरव" में वीरेन्द्र जी ने लिखी हैं। उन राष्ट्रीय महापुरुषों को हम नमन करते हैं। यह पुस्तक बच्चों के लिये विशेषकर बहुत उपयोगी है।

अन्त में मैं वेद संस्थान एवं श्री वीरेन्द्र जी का अभिनन्दन करता हूँ, और श्री वीरेन्द्र जी की दीर्घायु की कामना करता हूँ, ताकि अपने लेखन द्वारा लम्बे समय तक हमें दिशा प्रदान करते रहें।

मुख्य अतिथि — श्री राकेश चन्द्र जी (सी०ए०) भावविभोर होकर कहने लगे कि मैं श्री वीरेन्द्र जी को केवल एक साधारण सा व्यापारी और लेखक ही जानता था। परन्तु आज के इस समारोह ने मुझे चकित कर दिया कि श्री वीरेन्द्र जी नगर के एक अत्यन्त प्रभावकारी और प्रतिभाशाली व्यक्तित्व के स्वामी हैं, यह जानकर मुझे अति प्रसन्नता है। मैं चाहता हूँ कि इनका यह जनसेवा का कार्य बिना किसी गतिरोध के चलता रहे।

अध्यक्ष– श्री ज्ञानेन्द्र जी गाँधी (जिला प्रधान) जी ने कहा–श्री वीरेन्द्र गुप्त: जी महानगर के ही नहीं प्रदेश भर के 'पं० लेखराम' हैं। वह अपनी लेखनी द्वारा घर–घर में अपना साहित्य पहुँचाकर वेद की ध्वनि गुन्जारित कर रहे हैं।

श्री सुरेश दत्त शर्मा पथिक जी १६/१२/५ को पत्र द्वारा अपने उद्‌गार प्रस्तुत करते हैं–'राष्ट्रीय गौरव' पुस्तक का कंथ्य आपके हृदय में रचा–पचा राष्ट्र प्रेम है, आपने ऐसे महापुरुषों के उदाहरण प्रस्तुत किये हैं, जिन्होंने अपने देश में ही नहीं, विदेशों में राष्ट्र की कीर्तिपताका फहराई है, आपने राष्ट्रीय गौरव की स्थापना, एकता का स्वरूप, हिन्दी लिपि तथा 'अन्तोक्त्त्वा' शीर्षक लेखों में भारतीयों के हृदय को झकझोरते हुऐ अपने मन की वेदना को अभिव्यक्त किया है। आपकी नस–नस में स्वदेश प्रेम तथा स्वाँस–स्वाँस में रांष्ट्र गीत समाया हुआ है, आप धन्य हैं।

'दपर्ण' पुस्तक यथा नाम तथा गुण कहावत को चरितार्थ करती है। आपनें दपर्ण पुस्तक के उद्‌देश्य को अभिव्यक्त करते हुये लिखा है–'संसार एक दपर्ण है, इसमें अपने को देखो, समझो और विचार कर अपने को पहचानों' सस्कृति में दर्पण को आदर्श कहते हैं। आपने दयाराम नाम के पुरुप को आदर्श रूप में प्रस्तुत किया है। यथार्थ से आदर्श सदैव ऊँचा होता है। भगवान से प्रार्थना है कि आप इसी प्रकार सद्‌साहित्य का सृजन करते रहें। ☐☐

जन्मदिन

अपने आपको शिक्षार्थ समर्पित करना, मनुष्य जीवन की सर्वश्रेष्ठ उपलब्धि है। यह सौभाग्य कोठीवाल परिवार को ईश्वर प्रदत्त रूप में प्राप्त हुआ है। इस परिवार ने ईश्वराज्ञा को स्वीकार कर शिक्षा के क्षेत्र में बहुत बड़ा योगदान किया है।

२ जनवरी साहू शिवशक्ति शरण कोठीवाल जी का जन्म दिन है। उनकी स्मृति में हर वर्ष २ जनवरी को के.सी.एम. सैकण्डरी स्कूल में समारोह मनाया जाता है। इसका संचालन साहू शिवशक्ति शरण जी के सुपुत्र श्री धर्मात्मा सरन जी करते थे, अब उनके सुपुत्र साहू अमित कोठीवाल कर रहे हैं। इस अवसर पर नगर की विभूतियों को सम्मानित भी किया जाता है। २ जनवरी १९९२ में मुझे भी सम्मानित किया गया था। इस समारोह की एक विशेषता यह है कि इसमें बच्चों की प्रत्युत्पन्नमति को जागृत करने के उद्देश्य से प्रतियोगी छात्र को केवल १ मिनट पूर्व ही विषय दिया जाता है और वह उस पर बोल कर पुरुस्कार भी प्राप्त करता है।

इस बार कार्यक्रम में मेरी भेंट श्री साहू ओंकार सरन जी कोठीवाल से हुई — उन्होंने मुझे देखते ही प्रश्न किया कि तुम इतना अध्ययन कब कर लेते हो, दिन भर दुकान पर रहते हो, कहाँ और कैसे अध्ययन करते हो, उसी समय अनिल बन्सल आकर कहने लगे, साहू साहब आप वेदों के अच्छे विद्वान् हैं। इस पर साहू ओंकार सरन जी ने कहा—मेरा यह मतलब नहीं है, मैं यह जानना चाहता हूँ कि इतने व्यस्त जीवन में कब और कैसे अध्ययन करते हैं। मैंने करबद्ध होकर कहा—साहू साहब जी मेरे ऊपर प्रभु जी की यह कृपा है कि मैं दुकान पर ही बैठे—बैठे सब कुछ करता रहता हूँ। अध्ययन और व्यवसाय दोनों एक साथ चलते रहते हैं। कभी कोई किसी के आड़े नहीं आता। ☐☐

विनम्र निवेदन

मेरा सबसे एक विनम्र निवेदन है कि आप अपने और अपने बच्चों के ऊपर भोजन, वस्त्र और शिक्षा पर व्यय केवल अपनी सात्विक आय में से ही किया करें, अर्थात् इन पर पापार्जित धन का उपयोग न करें। दूसरे यदि आप अच्छी सन्तान को जन्म देने

में समर्थ नहीं हैं, तो बुरी सन्तान को भी जन्म न दें अर्थात् कम से कम ११ वीं और १३ वीं रात्रि में गर्भस्थापित न करें अथवा स्त्री सम्पर्क से दूर रहें। इन दोनों बातों पर पूर्ण ध्यान देने से, हमारा अपना, और देश का बहुत बड़ा कल्याण ही होगा।

पापार्जित धन का अभिप्राय है कि सुविधा शुल्क अर्थात रिश्वत, करवंचन (करों की चोरी), कम तोलना, कम देना, कम नापना, कम गिनना, जोड़ गलत लगाना, मिलावट अथवा नकली वस्तुओं का बेचना आदि प्रकार से उपार्जित धन पापार्जित धन होता है।

वेदं शरणम् आगच्छामि
सत्यं शरण् आगच्छामि
यंज्ञं शरणम् आगच्छामि
।। इति।।

वेद ईश्वरीय ज्ञान है।

वेद सबके लिये उपकारी है।

वेद सबको पढ़ना चाहिये।

पूर्ण ग्रन्थ

अपने विषय में यह परिपूर्ण ग्रन्थ है। आप इसके द्वारा सन्तान सम्बन्धी सभी प्रकार के प्रश्नों का समाधान कर सकते हैं सन्तान का न चाहना(निरोध) सन्तान का रंग, रूप, आकृति, स्वभाव, योग्यता और पुत्र, कन्या कैसी और किसकी इच्छा है। यह सब आपके हाथ में है।

ग्रन्थ का नाम - **इच्छानुसार सन्तान**

लेखक - वीरेन्द्र गुप्तः

सूर्य गुणी

पुत्रदाता औषधि

इस प्रभावयुक्त दिव्यौषधि का गर्भावस्था के ८१ से ८५ दिन के मध्य में सेवन कराने से पुत्र ही प्राप्त होता है।

वीरेन्द्र नाथ अशिवनी कुमार

प्रकाशन मन्दिर, मण्डी चौक, मुरादाबाद-२४४००१

एवं

इन्दिरा गुप्ता : वेद कुटि ९३

रामविहार कालोनी, जिला सहकारी बैंक के पीछे,

मुरादाबाद - २४४००१